रस सागर
खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई

रस - सागर

[तीनसौ सैंतीस फागोंका अभूतपूर्व संकलन]

सकलक एव सपादक

भगीरथ शुक्ल, 'योगी'

मुद्रक एवं प्रकाशक:

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

संकलकीय:

अगहन—पूसकी कड़कड़ाती सरदियोंका अंत...माघकी मादक, महकती बयारे ...ऋतुओंके सम्राट् वसंतका आगमन...माघ-शुक्ल-पंचमी...वही वसन्त-पंचमी ...ऋतुराज वसंतके स्वागतके उपलक्ष्यमें घर-घर गूंजनेवाला चिर-प्राचीन किन्तु चिर-नवीन लोक-संगीत...जी हाँ, वही फाग...फाग—दो अक्षरोंका एक छोटा-सा शब्द; किन्तु यह शब्द सुनतेही प्रत्येक उत्तर-भारतीयकी आँखोंके सामने—और उत्तर-भारतीयोंसे परिचित प्रत्येक व्यक्तिकी आँखोंके सामने—झूम-झूमकर, एक अनोखे आनंदमें सराबोर होकर फाग गानेवाले फगुहारोंकी टोलीका दृश्य साकार हो उठता है और कानोंमें ढोलककी लयबद्ध थपेड़ों, मँजीरोंकी मधुर नाद—लहरियों और झाँकेकी झुमा-झुमा देनेवाली झंकारोंके सामुदायिक संगीतके साथ-साथ लय-रस-नादसे परिपूर्ण फागोंकी पंक्तियाँ गूंज-गूंज उठतीं हैं।

मैं नहीं जानता कि फाग—गायनकी यह परम्परा कब प्रारम्भ हुई, किन्तु यह परम्परा अत्यंत प्राचीन है और जबतक उत्तर भारतीयोंका अस्तित्व है तबतक तो यह-परम्परा कहीं-न-कहीं, किसी-न-किसी रूपमे अवश्य विद्यमान रहेगी—यह मेरा परम विश्वास है—इसलिए है यह विश्वास कि संगीत—और विशेषत: लोक—संगीत—केवल मन बहलावका ही साधन नहीं है, अपितु हमारी गौरव-पूर्ण सांस्कृतिक परम्पराका इतिहास है, हमारे थके—हारे, चिंता—ज्वरसे जर्जर तन-मनको पुन: उत्साहित करनेवाला अमृत है, आपसी मनोमालिन्यको धोकर जन—मानसको निर्मल बनानेवाला अद्‌भुत् जादूगर है!...संगीत क्या नहीं है?... संगीत नादब्रह्म है!...

और इसी नादब्रह्मको केवल कुछ गवैयोंकी बपौती न बनाकर उसे जन—समाजमें वितरित करनेका काम हमारे यह फाग करते हैं...जी हाँ, वही फाग जिनमें विश्वके अमर कवियों—सूर-तुलसी-मीरा-कबीरकी—रचनाएँ सम्मिलित हैं, वही फाग जो राम-चरित्, कृष्ण-चरित्‌के रूपमें गौरवशाली भारतीय-गाथाएँ जन-जनतक पहुँचाते हैं,वही फाग जिनमें शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्‌भुत और शांत—साहित्यके इन नवों रसोंका समावेश है... जी हाँ, इसीलिए अपने इस फाग संकलनको मैंने "रस-सागर" की संज्ञा दी है।

इस 'रस-सागर' का जब प्रथम प्रकाशन हुआ था तब मुझे ऐसी आशा नहीं थी कि इसका स्वागत प्रेमी फगुहारों द्वारा इस तरह होगा कि यह अमर हो जायगा। दूसरे संस्करणकी भी आशा मैंने नहीं की थी; किंतु (यह पंक्तियां लिखते हुए मेरा शरीर हर्ष-रोमांचसे रोमांचित है कि) आज इसका दूसरा ही नहीं, तीसरा संस्करण आपके सामने प्रस्तुत करनेका अवसर मुझे मिल रहा है।

यह तो मैं नहीं कहता कि फाग-संकलनका मेरा यह प्रयास, सर्व-प्रथम प्रयास है; किंतु मेरा विनम्र दावा है कि –"रस-सागर" जैसा सु-संकलित, सु-संपादित, आधुनिक संकलन सर्वथा मौलिक एवं अद्वितीय है। अबतक फागोंके जो संकलन छपे हैं उनमें फागोंके साथ-साथ चौताल, होली, कजरी आदि भी संकलित हैं और इसीलिए उनमें फागों (धमारों) की संख्या अत्यंत सीमित है; फिर उनका मुद्रण भी अत्यंत अस्त-व्यस्त, अशुद्ध है; इसके अतिरिक्त उनमें प्रायः अश्लील फाग भी संकलित कर लिए गए हैं । अब ऐसे फाग-संकलनोंकी तुलनामें कृपया–"रस-सागर" की इन विशेषताओं पर तनिक ध्यान दीजिए :––

(१) प्रथम संस्करणम फागोंकी संख्या केवल एक सौ पचपन थी, दूसरे संस्करणमें यह संख्या दो सौ पैंतीसपर पहुंच गई और अब इस तीसरे संस्करणमें तीनसौ सैंतीस फाग संकलित हैं । किंतु नए संस्करणोंमें केवल फाग-संख्याके परिवर्द्धनका ही ध्यान नहीं रक्खा गया, अपितु अधिकाधिक परिमार्जन एवं संशोधनका भी पूरा-पूरा प्रयास किया गया है ।

(२) इसमें केवल फागों (धमारों) का संकलन है और इस दृष्टिसे इसकी ३३७ की फाग संख्या अवश्य बृहत है ।

(३) अश्लील फागोंको इस संकलनसे पूर्णतः बहिष्कृत् कर दिया गया है ।

(४) कृष्ण-चरित्, राम-चरित्, शंकर-चरित् आदि अलग-अलग विभागोंमे इसके फाग विभाजित हैं ।

(५) जिन फागोंका परस्पर जोड़ है, अथवा जो फाग एक साथ गाए जा सकते हैं उन्हें यथा-संभव एकत्र ही संकलित किया गया है ।

(६) मुद्रणको अधिकाधिक आधुनिक, आकर्षक एवं संपूर्ण शुद्ध बनानेका हर सम्भव प्रयास किया गया है ।

(७) फागोंकी सूची वर्णमालानुसार (Alphabetical) दी है, जिससे इच्छित फाग ढूंढ़नेमें तनिक भी देरी नहीं लगती ।

(८) फाग एक प्रकारके गीत ही हैं अतएव सम्पादनके समय इनकी गेयताको ही प्राधान्य दिया गया है, अर्थ-बोधका स्थान गौण है । यथा-संभव गेयता एवं अर्थबोध-दोनोंमें सामंजस्य स्थापित करनेकी चेष्टा अवश्य की है, परंतु जहाँ इन दो तत्त्वोंका विरोध मिटाना असम्भव हो गया है, वहाँ गेयताको ही प्रमुखता दी है ।

(९) प्रचलित फागोंके साथ-साथ कुछ अप्रचलित किन्तु सुंदरतम फागोंको भी स्थान दिया है । कुछ फाग मेरी स्वयंकी रचनाएँ हैं ।

इस रसीले "रससागर"के निर्माणका संपूर्ण श्रेय केवल मुझे ही नहीं है; कई सज्जनोंने मुझे इसमें अनमोल सहयोग दिया है और उनका मैं हृदयपूर्वक आभारी हूं । सहयोगियोंकी सूची नम्नांकित है:--

(१) श्री० रामहर्षजी दीक्षित, पालघर (महाराष्ट्र)
(२) श्री० (स्व०) रामदयालजी दीक्षित, पालघर (महाराष्ट्र)
(३) श्री० रामेश्वर जी पाठक, बोईसर (महाराष्ट्र)
(४) श्री० देवीसहाँयजी शुक्ल, बोईसर (महाराष्ट्र)
(५) श्री० गार्गीप्रसाद जी मिश्र, कुशलगंज (उत्तर प्रदेश)
(६) श्री० शंभूदयाल जी शुक्ल, पालघर (महाराष्ट्र)

प्रेमी फगुहारो ! आशा है, आप इस तृतीय-संस्करण का भी सोत्साह स्वागत करेंगे। आपके सुझावों तथा नए, इस संकलनमें अ-संकलित फागोंकी प्रतीक्षा भी करूँगा जिससे इसका आगामी संस्करण और भी परिवर्द्धित, परिमार्जित रूपमें प्रस्तुत कर सकूं ।

मेरा पता है :--

भगीरथ शुक्ल, 'योगी'

बोईसर (जिला : थाना)

(महाराष्ट्र)

—भवदीय,

संकलक

वर्णमालानुसार सूची

नास	क्रमांक

मंगलाचरण

१

प्रथमै श्रीगणेशको गैये ॥

प्रथमै जैये प्रागराजको, हुँवा जाय मुंडन करैये ।
गंगा-जमुना सरस्वतीको, संगमघाट नहैये ॥१॥
काशीपुरी मुक्तिका द्वारा, तहँ जाय कछु दिन रहिए ।
पाँच पैग परिकरमा कैकै, तनके पाप कटैये ॥२॥
हरिद्वारसे जल भरि लैये, बैजनाथको जैये ।
अच्छत चारि बेलकी पाती, हर-हर कहि नहवैये ॥३॥
दीनानाथकी सिंह पवारिपर, बिमल-बिमल जस गैये ।
दास खुशाल बने चौरासी, हरिको जाय रिझैये ॥४॥

प्रथम-विभाग : राम-चरित्र

२

बसिबो अवधपुरीको नीको ॥
उत्तर दिसा अयोध्या नगरी, निर्मल जल सरजूको ।
रामघाटपर स्नान करनको, दर्शन राघवजीको ॥१॥
घरघर तुलसी ठाकुर पूजा, शंखनकी धुनि नीको ।
आठ पहर रखवार रहत हैं, हनूमान अंजनिको ॥२॥
मोर-मुकुट मकराकृति कुंडल, धनुष-बाण अति नीको ।
राम-लखन दशरथके बेटा, आवत पति सीताको ॥३॥
तुम्हरी महिमा कोउ नहिं जानै, सुत कौशल्याजीको ।
तुलसी दास भजौ भगवानै, टेकौं सिर तुमहीको ॥४॥

३

देखावैं बाल चरित रघुराई ॥
राम सोवाय दिह्यौ पलनामाँ, मैया भीतर आई ।
इष्टदेवकी पूजा कारिकै, पय-पकवान चढ़ाई ॥१॥
दूसर रूप धर्‍यो रघुबरने, खान लगे तहँ जाई ।
बालक देखि अचम्भा मान्यो, देखन पलना धाई ॥२॥
देख्यौ राम पड़े पलनामाँ, एकहि रूप देखाई ।
भीतर जावहिं बाहर आवहिं, मनमाँ अति घबराई ॥३॥
अद्‌भुत रूप देखायो रघुबर, माता विनय सुनाई ।
काशिदास लखि लीला प्रभुकी, कौशल्या सुख पाई ॥४॥

४

आँगनमाँ खेलत चारिउ भाई ॥
चारि किस्मके गेंद बने हैं, फूलन गेंद बनाई ।
राम-लच्छिमन-भरत सत्रुहन, शोभा बरणि न जाई ॥१॥
उत्तर दिशा अयोध्या नगरी, अपने हाथ बनाई ।
तीनि लोककी सकल सम्पदा, अवधपुरी चलि आई ॥२॥

सरजू तीर मुनिनकी संगत, बैठे ध्यान लगाई ।
राजा दशरथ घर नौबत बाजै, घरघर बजै बधाई ॥३॥
धनि सरजू धनि नगर अयोध्या, धन्य कौशिला माई ।
धनि धनि तुलसी राजा दशरथ, भाग्य बड़ी जिन पाई ॥४॥

५

केहि मग चलन चहौ रघुराई ॥
सुखद तीन दिन केरि राह इक, तीनि पहर सुखदाइ ।
तीनि पहर बिच बसत ताड़ुका, पथिक देखि धरि खाई ॥१॥
सुरति किए मम गात काँपते, तनकी सुरति भुलाई ।
अहो राम सुखधाम देखलो, यह पुलकावलि छाई ॥२॥
सुनि मुनि वचन राम हँसि बोले, सुनिए यह मुनिराई ।
जौ लखि पावौं तनकु ताड़ुकहि, एक सर देउँ उड़ाई ॥३॥
पुनि कीन्हेव टंकार धनुष सुनि, शोर ताड़ुका धाई ।
प्रभु शरसों बैकुंठ अम्बिका, बिनहि प्रयास सिधाई ॥४॥

६

मुनि सग बालक काके, सखी, रतनारे नैना जाके ॥
राजा पूँछैं सुनौ मुनीजी, ये दोउ बालक काके ।
कौन नगरमें जन्म लिह्यो है, काहै नाम पिताके ॥१॥
रवि-शशि-कोटि बदनकी शोभा,श्याम गौर तन जाके ।
नगर अयोध्या जन्म लिह्यो है, दशरथ नाम पिताके ॥२॥
मुनिकी यज्ञ सुफल करि आये, कारज शोधि सियाके ।
ऋषि गौतमकी नारि अहिल्या, ताऱ्यो चरण छुवायके ॥३॥
सबै सखी सीता बर माँगैं, पूजन चलीं उमाके ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, लेख लिखे बिधनाके ॥४॥

७

जनकपुर चलौ देखि आई फुलवारी ॥
आरि आरि मेंहदीके बिरवा, बिच बिच निंबू लगाई ।
गुलाबास चम्पाके बिरवा, भँवर रहे मन्नाई ॥१॥

राजा जनकने रच्यो स्वयंवर, शिव धनुआ धरुवाई ।
जौ कोउ धनुआ टूरि बहावै, सिया ब्याहि लै जाई ॥२॥
धनुआ टूरन उठा लंकपति, सकल सभा उठि धाई ।
तिलभरि धनुआ भूमि न छाँड़ै, तब रावण खिसियाई ॥३॥
धनुआ टूरन उठे रामजी, सकल सभा उठि धाई ।
धनुष टूरि नवखण्ड बनायो, सिया राम बर पाई ॥४॥

८

सखिया, चलौ जनकपुर जैये ॥
राजा जनकने रच्यौ स्वयंवर, बड़े बड़े भूप बोलैये ।
जो यहु धनुहा टूरि बहावै, सिया ब्याहि लैजैये ॥१॥
धनुहा टूरन उठा दशानन, करि-करि कोप रिसैये ।
तिलभरि धनुहा भूमि न छाँड़ै, तब रावण खिसियैये ॥२॥
धनुहा टूरन उठे लच्छिमन, मुनिको माथ नवैये ।
जौ प्रभुकी मैं अग्या पाऊँ, लैकै धनुष उड़ि जैये ॥३॥
धनुहा टूरन उठे रामजी, गुरुको माथ नवैये ।
धनुष टूरि नव-खंड बनायो, सिया ब्याहि लैजैये ॥४॥
धनुहा टूट शब्द भा भारी, परशराम उठि धैये ।
को यहु धनुहा टूरि बहावा, हमको देहु बतैये ॥५॥
उत्तर दिशा अयोध्यानगरी, दशरथ नृप कहवैये ।
उनके लरिकन धनुहा टूरा, तुमको देत बतैये ॥६॥
काहेकेरे खंभा गड़े हैं, काहेते माड़व छवैये ।
काहेकेरे कलशा धरे हैं, काहेते चौक पुरैये ॥७॥
अगर चंदनके खंभा गड़े हैं, पनवन माड़व छवैये ।
सर्व सोनेके कलशा धरे हैं, मोतियन चौक पुरैये ॥८॥
रामसियाकी होत भाँवरी, सखिया मंगल गैये ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, सिया राम बर पैये ॥९॥

९

शोभा कहि न जात वहि दिनकी ॥

सजी नालकी सजी पालकी, जोड़ी सजी है रतनकी ।
ऐरावत हाथी सजवायो, झूल पड़ी मोतियनकी ॥१॥
आगे डोला रामचंद्रका, पीछे फौज बराती ।
बीचमें हाथी राजा दशरथका, बरखा होत फुलनकी ॥२॥
जाय बरात जनकपुर पहुँची, होत तयारी मिलनकी ।
जनकपुरीकी नर औ नारी, छबि निरखैं कुँअरनकी ॥३॥
रामसियाकी होत भाँवरी, मंगल होत सखिनकी ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, जोड़ी बनी रघुबरकी ॥४॥

१०

ऐंचत भरि कोप तड़ाका है ॥

लखि कठोर धनु चंद्रमौलिकर, भूपनको बल थाका है ।
औ बीर लजाय नाय सिर बैठे, गनै न कौन कहाँका है ।
जे एकते एक शूर अभिमानी, तिनहु न कीन सनाका है ॥१॥
बिन भंजै को बरै कुँआरि को लिखा न बिधिकर आँका है ।
बरु प्राण जाँय प्रण कबहुँ न छूटै तुमने कहा सो नीका है ।
औ हरिने कहा सोई होनेका, यहिमाँ कौन भुजाका है ॥२॥
गुरु अनुशासन पाय जगतपति गहि पटपीत झड़ाका है ।
औ झिलमिलाय गईं सबकी आँखैं जब हरि गह्योपिनाका है ।
जब रौदा मसकत टूट बीचते, मानहुँ बज्र अड़ाका है ॥३॥
घोर शोर सुनि दुष्ट बधिर भे, तिहुँपुर बीच सनाका है ।
जहँ रावण कोट-कँगूरा गिरिगे, लंका परो सनाका है ।
जब धरती डगमग डोलि उठी, मनों गिरिगै गाज अचाका है ॥४॥
जनककी सुता जगतकी जननी, प्रगटचो रूप रमाका है ।
जब पहिरायो जयमाल रामको, सुमिरि गणेश उमाका है ।
औ तुलसिदास छबि कहँलग बरणौं, बल रघुबीर भुजाका है॥५॥

११

रघुबर जनकनगर पगु धारे ॥

द्वारे सुंदर बनो चौतरा, मणिके दीप सँवारे हैं।
औ राजकुँअर रघुवंशी धोटा, द्वारे खड़ी सवारी है।
औ रामलखनकी करैं आरती सुंदर सखी सयानी हैं।
नव कंचन-कलस सजे सिर ऊपर पल्लव-दीप सँवारे ॥१॥
गावत गीत मनोहर सुंदर कर कंचनके थारे हैं।
जब परछन हेतु चलीं सब सखियाँ जगमग दीप सँवारे हैं।
औ रामलखनकी छबि उन देखी नयननसों जल ढारे हैं।
सब छकित भई बरबदन बिलोकत नयनन पलक बिसारे ॥२॥
रामको रूप देखि सब सखियाँ लखि दूल्हा सुख सारे हैं।
जब तनमनको कछु चेत नहिं है कोकिल मंगल चारे हैं।
औ प्रेम-मगन सब भई हैं प्यारी धरि धीरज मन आड़े हैं।
औ परछन सबै भली बिधि कीन्हीं रूप बिलोकन वारे ॥३॥
माता जल्दी कुँअर उतारे हाथ पकरि पुचकारे हैं।
सब पंडित वेद उचारन लागे सखियाँ मंगल ठाने हैं।
जब भँवरी होने लगीं सियाकी, देवन दीन नगारे हैं।
औ जगमोहनसिंह फाग रची यह रामचंद्र हिय धारे ॥४॥

१२

जब दल खरदूषणको आयो ॥

श्रवण घ्राण बिन सूर्पणखा निज दुःख बखानो।
सुनि भगिनी इतिहास तुरत बलवीर रिसानो।
क्रोधवन्त दोउ बीर देखि देवन भय मानो।
डगमग धरणी करत दसहुँ दिक्पाल सकानो।
लिए संग चौदह सहस्त्र चतुरंगी सैन्य सजायो ॥१॥
सजे तमीचर अमित बिपुल झंडा फहराने।
फैल्यो तम चहुँओर रेणुसों अरुण छिपाने।
करहिं कंतसों भोग त्रिया रजनी जिय जाने।
बाजन बजत जुझाव व्योम जन्तु घन घहराने।
सकुचे कमल कुमुद हर्षित चकवा जोड़ा बिछुड़ायो ॥२॥

निजबल रहे प्रशंसि, सकल निश्चर गण झारी।
दरसत कज्जल गिरि-समान अति ही भयकारी।
हैं निशंक बलवंत कौन योधा बलधारी।
सूर्पणखहिं करि अग्र चले निज बलहि प्रचारी।
अशकुन होत अनेक किन्तु नहिं गनत काल नियरायो ॥३॥
खग-मृग भजत अरण्य मध्य निज प्राण बचावत।
खल समूह रहे गरजि-तरजि दसहूँ दिशि धावत।
कोई चले नभ मार्ग कोई धरती धमकावत।
कौतुक कीन्ह कृपाल जानि खल दल इत आवत।
सहित लखन श्रीजनकसुताको गिरि कंदरहि पठायो ॥४॥
आये तमीचर वृंद सकल रणके मदमाते।
ज्यों पतंग ढिग दीपकके निज प्राण गँवाते।
क्षुद्र श्वान जिमि धायधाय सिंहहि डरपाते।
तिमि आये खल यूथ सुयश खरदूषण गाते।
प्रभु बिलोकि निज दूत बुला खरदूषण बैन सुनायो ॥५॥
जाय कहहु मम वाक्य वृथा क्यों प्राण गँवावैं।
क्षमा करहुँ अपराध त्यागि निज त्रिय घर जावैं।
गयो दूत सुनि राम कह्यो जनि भय दिखरावैं।
जौं बल तौं संग्राम मध्य वीरत्व दिखावैं।
सुनत भिड़े इत जातुधान उत रघुबर चाप चढ़ायो ॥६॥
साजि शस्त्र नाना प्रकार उत मारत निश्चर।
इत काटत भुज-हृदय-जंघ अरु कंठ राम-शर।
क्षणमाँ जूझे सकल युद्ध करिके रजनीश्चर।
खरदूषण बलवंत वीरको मार्‍यो रघुबर।
कहत अंबिका देवतन जयजयकार सुनायो ॥७॥

१३

कुँअर दोउ आये हैं फुलवारी॥
रंग महलते चलीं जानकी, संग लिहे बहु नारी।
जहाँ रहे दोउ कुँअर बागमें, पहुँची जनकदुलारी ॥१॥

लौटि परीं बैदेहि बागते, हृदय हर्ष बहु भारी।
जहाँ रहै गिरिजाको मंदिर, गईं तहाँ सुकुमारी ॥२॥
हाथ जोरिकै कहैं जानकी, सुनले माँ अर्ज हमारी।
आजु लगे हम पूजा कीन्हीं, पुरवहु आस हमारी ॥३॥
जस बर माँग्यो तैस बर पायो, सत्य असीस हमारी।
तुलसीदास भजो भगवानै, चकित भये नरनारी ॥४॥

१४

हँसि पूछैं जनकपुरकी नारि, नाथ कैसे गजके फंद छोड़ायो॥
गजको प्यास लगी कजरीबन, गज जमुनाको धायो।
जलमें पाँव धरन नहिं पायो, ग्राहने फंद चलायो ॥१॥
गज औ ग्राह लड़ैं जल भीतर, गज डूबन नहिं पायो।
गजकी टेर सुनी रघुनंदन, पाँय-पियादे धायो ॥२॥
छोरे न छूटै सियाजीको कंगन, कैसेक चाप चढ़ायो।
कोमल गात उमिरि है थोरी, मोंहि भरोस न आयो ॥३॥
शिबरीके बैर सुदामाके तंदुल, रुचि रुचि भोग लगायो।
दुर्योधन घर मेवा त्याग्यौ, साग बिदुर घर खायो ॥४॥
खंभ फारि हरणाकुश मार्‍यो, नरसिंह रूप धरायो।
ध्रुव प्रहलादकी लज्जा राख्यो, तुलसिदास यश गायो ॥५॥

१५

रामसँग खेलूँगी मैं होरी॥
अपने-अपने घरसे निकरीं, कोउ साँवर कोउ गोरी।
तामें सीता अधिक बनी हैं, राजा जनक किशोरी ॥१॥
काहे केरा बना पिचक्का, काहे लागी डोरी।
काहेते भरिकै मारैं रामजी, भीजि जाँय सब गोरी ॥२॥
सोनेकेरा बना पिचक्का, रेशम लागी डोरी।
भरि पिचकारी मारैं रामजी, भीजि जाँय सब गोरी ॥३॥
अपने-अपने घरसे निकरीं, सौ मन केसर घोरी।
कोउ मारै कोउ भरि भरि लावै, रँगा उड़ै चहुँ ओरी ॥४॥

सब सखियनसे कहैं जानकी, यह ना जान्यौ गोरी।
कितौ फाग लछिमनका लेबै, नहीं पितंबर छोरी ॥५॥

१६

सिया डार्‌यो रामगल जैमाला ॥
रामचंद्र तौ दुलहा बने हैं, गोरे लछिमन सहिबाला ॥१॥
समधिन बनी हैं मात कौशिला, समधी दशरथ महिपाला ॥२॥
जाके शम्भु बराती आये, ओढ़े दिगंबर मृगछाला ॥३॥
तुलसीदास भजौ भगवानै, सुर बोले जै-जै काला ॥४॥

१७

रघुबर कहँ पठयो मोरि माता ॥
कहैं कैकई सुनौ भरतजी, सुनौ पूत मोरि बाता।
राम-लखन बनकाह गए, तुम होहु अवधके राजा ॥१॥
ऐसी जननीका मुँह नहिं देखौं, श्रवण सुनौ नहिं बाता।
मैं अपने परलोक डरत हौं, नाहिं तौ रुधिर बहाता ॥२॥
रामचंद्र तौ जगत् पिता हैं, औ लछिमन अस भ्राता।
मातु जानकी जगकी जननी, यह भारत विख्याता ॥३॥
दशरथको वैकुण्ठ पठायो, आपु गयो बनवासा।
तुलसीदास भजौ भगवानै, छुटा अवधते नाता ॥४॥

१८

केवट चारि पदारथ पाये ॥
विचरत राम-लखन-सिय बनमाँ, गंगातट पर आये।
पार करन वह पावन-सरिता, केवटको बुलवाये ॥१॥
नौका लैकै केवट आयो, राम देखि हरषाये।
नौकापर जब बैठन लागे, केवट बैन सुनाये ॥२॥
दीनबंधु पहिले पग धोइहौं, सुर-नर-मुनि जेहि ध्याये।
बड़े भागि यहु अवसर पावा, कहत नैन भरि आये ॥३॥
सुनि सकुचे पहिले रघुनंदन, प्रेम देखि मुसकाये।
योगी कहत धोय प्रभु-चरणन, केवट जनम बनाये ॥४॥

१९

रघुबर शेबरीके घर आये ॥

करत प्रतीक्षा निशिदिन शेबरी, तनमन ध्यान लगाये ।
निज नयनन मैं प्रभुको देखिहौं, यह निश्चय उर लाये ॥१॥
देखि विमल दृढ भक्ति रामजी, दर्शन देने आये ।
प्रभु अइहैं यह सुनेसि भिल्लिनी, हर्ष न हृदय समाये ॥२॥
हम ठाकुर यह जाति अपावन, मनमाँ भेद न लाये ।
भिल्लिनिकी चिर दरश-पिपासा, राम बुझावन आये ॥३॥
चीखि-चीखि मधु बेर भिल्लिनी, प्रभुको लाय खवाये ।
प्रणतपाल करुणाके सागर, योगिहि कस बिसराये ॥४॥

२०

निश्चर कपि-पग टारि सकैना ॥

रावण-सभा कीन्ह प्रण अंगद, मनमाँ कछु भय हैना ।
धरिकै निज दृढ पग धरणीपर, बोले कपि गरु बैना ॥१॥
जो कोऊ मम पग यहु टारै, लौटि जाउँ ले सैना ।
रामहु छोड़ि जाँय सीताको, यहिमाँ संशय हैना ॥२॥
सुनिकै उठि धाये सब योधा, अंगद पैर टरैना ।
तब करि कोप उठा दशकंधर, अंगद बोले बैना ॥३॥
पकरु जाय प्रभुके पग मूरख, मम पग गहे बनैना ।
'योगी' भवसागरते प्रभु बिन, कोऊ तारि सकैना ॥४॥

२१

चलिए नाथ लौटि अब घरको ॥

जोरे हाथ भरत भए ठाढ़े, समुझावत रघुबरको ।
करौ राज्य चलै अवधपुरीमाँ, अब न जाहु तुम बनको ॥१॥
हाथ जोरि बिनवौं मैं तुमको, दुख न देहु प्रभु हमको ।
तुम तौ भैया बनको जैहौ, करि अनाथ निज जनको ॥२॥
मातु कैकयीने हठ कीना, पिता पठायहु बनको ।
पितु-आग्या हम त्यागैं कैसे, कैसे लौटैं घरको ॥३॥

चौदह बरसै बनमें रहिकै, पुनि आउब हम घरको ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, सौंपौं अवध मैं तुमको ॥४॥

२२

चंचल मम चित चोरी।मिलत नहिं बनमाँ जनक किशोरी॥
पूँछत वृक्ष-कुंजके बासिन, खग-मृग-पशुन निहोरी ।
देहु बताय दीख मम प्यारी, सीता चंद्र चकोरी ॥१॥
करत विलाप फिरत लछिमन-सँग, ढूँढ़त बन चहुँओरी ।
कतहुँ न खोज मिलत सीताकर, भई रघुपति मति भोरी ॥२॥
बिकल वियोग प्रियाके रघुबर, दुखित बदन मन मोरी ।
देखा गृद्धराज लुंठित पथ, कोऊ पंख मरोरी ॥३॥
लीन लगाय हृदयसों रघुबर, लछिमन वायु झकोरी ।
स्पर्शत अंग सचेत भयो, तब कही कथा करजोरी ॥४॥
रावण युद्ध अचल मोंहि कीन्हा, चली न टुक बरजोरी ।
द्विज गिरिजेश लंकमाँ राख्यौ, लै मिथिलेश किशोरी ॥५॥

२३

भारत कपिसे उरिन हम नाहीं ॥
सौ जोजन मर्याद सिंधुकी, फाँदि गयो छिनमाहीं ।
लंका जारि सिया सुधि लाये, तनुकु गर्व मन नाहीं ॥१॥
शक्तीबाण लाग लछिमनके, शोर भयो दलमाहीं ।
कहँ द्रोणा, कहँ मूरि सजीवनि, लै आयो छिनमाहीं ॥२॥
पैठि पताल टूरि यमकातर, मंदिर जाय समाहीं ।
अहिरावणके भुजा उखारे, फैंकि दिह्यो जलमाहीं ॥३॥
अग्या-भंग होन नहिं पावै, जहँ पठवौ तहँ जाहीं ।
तुलसीदास कपीकी करनी, हरि अपने मुख गाईं ॥४॥

२४

समरमें युद्ध होत घनघेरो ॥
कपिदल विपुल देखि रावणने, सब असुरनको टेरो ।
खाहु भालुकपि जौ तुम पावौ, कहा मानलो मेरो ॥१॥

इतते भालुकीस सब गरजैं, उत असुरनको रेरो ।
उत रावण इत राम दोहाई, किह्यौ गरजि उरझेरो ॥२॥
बहुतै जोग किह्यो सब असुरन, छोंड़ि मोह तनकेरो ।
मारत खड्ग साँग औ फरसा कपिदल मुख नहिं फेरो ॥३॥
गर्जि-गर्जि कपि शिला चलावैं, "नौबति" हरिको चेरो ।
जूझैं असुर गिरैं धरनीमाँ, जमपुर करैं बसेरो ॥४॥

२५

रणमें कोपि उठे रघुराई ॥
जटा सँभारि मुकुट प्रभु बाँधेव, पीताम्बर फहराई ।
इकतिस बाण धरे रौदापर, श्रवणन खैंचि चलाई ॥१॥
दस सरसे दस मस्तक कटिगें, लैगें बान उड़ाई ।
बीस बान बीसों भुज काटे, इक नाभीमें समाई ॥२॥
बिन-सिर-भुज-धड़ धावत उनको, कपिन अधिक भय पाई ।
तब दुइ खंड करे हरि वाके, गिर्‌यौ धरणि हहराई ॥३॥
"नौबतिराय" दास दासनको, हरि-चरणन बलि जाई ।
जो गति है देवनको दुर्लभ, सो गति रावण पाई ॥४॥

२६

आजु लंका चढ़ि बाँदर आयो ॥
हनुमत लंका जारि गयो तब, मैं तुमको समझायो ।
अबहूँ कहा मानि लेव मेरा, अनहक रारि मचायो ॥१॥
बालि तनय सुग्रीव पठायो, उन कछु नात बतायो ।
क्रोध बढ़ाये तुम का पइहौ, आपन मान गँवायो ॥२॥
राम बिभीषण तिलक किह्यो है, तिन सब भेद बतायो ।
आधी सेना कटी तुम्हारी, उन सब अपनी जियायो ॥३॥
मेघनाद बहु युद्ध किह्यो है बाँदर सब घबड़ायो ।
लछिमन बीर समर जब कीन्हेव, इंद्रजीत भागि आयो ॥४॥
जिनके कारण नाश होत है, सो तुम क्यों न पठायो ।
तुलसीदास मिलौ रघुबरसे, जन्म सुफल करि पायो ॥५॥

२७

केकई आजु कठिन प्रण ठाना ॥
घर-घर मंगलचार सबे हाट बजारा ।
बजै अवध दुंदुभी शंख घंटा घरियारा ।
उत्सव होत विचित्र भीर भूपतिके द्वारा ।
जब श्रीअवधनरेश रामको तिलक सँवारा ।
धाय मंथरा कुमति केकइहि सकल चरित्र बखाना ॥१॥

गयो ज्ञान केकई केर सुनि कपट-कहानी ।
जनु सुठि कंचन-बेलि मध्य विषबेलि फुलानी ।
अवशि दोऊ बर लेब आज अपने मनमानी ।
रामचंद्र बनबास भरत लेबै रजधानी ।
विष सरिता गृहमाँहि द्वारपै सुधासिंधु उमड़ाना ॥ २ ॥

बिरच्यो कठिन कुढंग अंग शृंगार बिगारी ।
लट मुख ऊपर परी अश्व जनु परी अँधारी ।
तजि भूषण कंचुकी अवनि फाटी तन सारी ।
सिसकि-सिसकि लइ उर्ध्वश्वास जनु नागिन कारी ।
यहि बिधि केकई गई कोपगृह होनहार बलवाना ॥ ३ ॥

निरखि साँझ इत अवधनृपति मंदिर पगु धारे ।
धड़कत हिय पुलकांग त्रिया लखि भवन मँझारे ।
पड़ी बिकल महि माँहि अश्रुके बहत पनारे ।
महा भयंकर दृश्य देखि श्रीकोशलेश भय माना ॥ ४ ॥

नृप दशरथ पुनि जाय निकट बोले मृदुबानी ।
प्राणप्रिया सुकुमारि आजु केहि हेतु रिसानी ।
तव अनहित जेहि कीन्ह करौं तेहि जीवन-हानी ।
यहि बिधि करत प्रबोध प्रीति बहु भाँति बखानी ।
उठी सुनत मतिमंद बिहँसिकर सजेसि अभूषण नाना॥५॥

करिकै त्रिया-चरित्र भूपतिहि गिरा सुनाई ।
जनु मृग-बंधन हेतु किरातिनि फंद लगाई ।
देन कह्यो बरदान किंतु तेहि सुधि बिसराई ।
देहु सोई बर भूप छमहु अति मोरि ढिठाई ।
किंतु माँगिहौं तबै जबै नृप करहु रामकी आना ॥ ६ ॥
बोले बचन बिनीत राव छल छंद-बिहीना ।
तुच्छ बात लगि बाम बदन कत किह्यौ मलीना ।
माँगौ दुइके चारि देहुँ मम प्रिया प्रवीना ।
कोटि शपथ मोहि रामचंद्रकी जो न देंउ बरदाना ॥ ७ ॥
कह्यौ कैकई सत्यसिंधु तुम रघुकुल राजू ।
देहु एक वर प्राणनाथ भरतहि युवराजू ।
पुनि बिनवौं करजोरि आस मम पुरवहु आजू ।
व्है सहर्ष नृप देहु नहीं संशय कर काजू ।
वर्ष चतुर्दश बास करैं बन रघुबर यती समाना ॥८॥
सुनि कैकईके बैन नैन छाई अँधियारी ।
भए बिकल अति नृपति लतहि जनु लागि दवारी ।
ज्यों मणिहीन भुजंग नीर बिन मीन दुखारी ।
गयो सूखि तन मानहुँ सिंधुर बेलि उपारी ।
गिरेव धरणि मुरझाय पंखबिन ज्यों विहंग अकुलाना ॥९॥
लखि भूपति की दशा कुटिल यह बैन उचारी ।
भरतहिं सुनि युवराज नृपति कस भयो दुखारी ।
भरत कि पुत्र न होंहिं नारि हम नहीं तुम्हारी ।
जौ न देहु बरदान लखौं पति कौतुक भारी ।
भोर होत निज प्राण गँवावौं तुम हित अयश महाना ॥१०॥
सुनि धरि धीर सनीर भूप दोउ नैन उघारे ।
कह्यो भरत अरु राम दोऊ मम प्राण पियारे ।
करौं निशान बजाय भरत युवराज सकारे ।
किंतु राम-बनबास होत असमंजस भारे ।
ले कुछ और माँगि बर भामिनि, कहु न राम बन जाना ॥११॥

सुनत जरे सब गात रोष सरिता जनु बाढ़ी।
करि नैनन अति दीर्घ नृपतिके खड़ी अगारी।
शंकित भए नरेश देखि निज तिय अति गाढ़ी।
टपकि रही जलधार नैन ऋतु मनहु अषाढ़ी।
सुधाहीन महि चंद्र गिऱ्यो जिमि सुरपति हन्यो पषाना॥१२॥
पुनि-पुनि कैकइ कहत भूप कस भयो अजाने।
धर्मवान व्है त्यागि रह्यो रघुकुलके बाने।
शिबि दधीच बलि नहीं रंच माया लपटाने।
सहित नारि सुत हरिश्चंद्र शिवपुरी बिकाने।
सत्य धर्म नहिं तजे रातदिन सेइन जाय मसाना॥१३॥
राम-राम कहि राम भूप खोले दोउ नैनहिं।
धर्म तजौं या पुत्र हिए कुछ नेक ठनै नहिं।
किंतु धीर धरि अमी सरिस बोले मृदु बैनहिं।
राम कहहु बनबास अहो प्रिय नारि बनै नहिं।
पुनि पछिताहु राम सँग करिहैं जब मम प्राण पयाना॥१४॥
बहु बिधि किहिनि प्रबोध किंतु हठ नारि न त्यागी।
सुमति नींद बस भई आदि विपदा जनु जागी।
संतत सुखद बिचित्र भवनपर डाऱ्यौ आगी।
रामचंद्र बनबास किहिसि मतिमंद अभागी।
पतिहिं स्वर्ग सुत बिपिन अंबिका यहि बिधि हन्यो निसाना१५॥

२८

दशरथके लाल कहैहैं, जा दिन राम अवधमाँ होइहैं॥
गड़ा निशान जनकपुर भीतर देवता सब जुटि ऐहैं।
जो कोउ मेटै रचा स्वयंवर, वहीकी भँवरी होइहैं॥१॥
सरजू-तीर भीर भई भारी, होइ बोलौवा तीनि लोकमाँ।
रघुबंसिन घर ब्याह रचा है देखैं पिराथिनी ऐहैं।
द्वार करत भारतका देखिहैं, मोहि जनकजी जैहैं॥२॥
इंद्रको जीति भयो अहंकारी, सहस यज्ञ भइ है यह भारी।
सहस कोटि पग योधा ऐहैं, तिलभरि कोउ न उचैहैं॥३॥

इतनी कहि गयो लंकावाला, पहिली सभा इंद्रकी जीत्यो ।
ताजी बल काहुक ना देख्यौ । हुवाँते होइकै लंकै आयौ ।
गर्वी रावण मोंहि कहायो । डंका मैं बजवायौ ।
ब्याह रामका जबहीं होई, हारिकै लंकै जैहौ ॥४॥
लै जैमाल सियाजी निकसी, मध्य सभामाँ आई जानकी ।
चीन्हें न पावैं रामचंद्रका, ठाढ़े सोच करैं मनमाँ ।
तुलसीदास भजौ भगवानै सिवा अपरबेल होइहैं ॥५॥

२९

जनकपुर परशुराम चलि आये ॥
देश-देशके भूपति बैठे, देखत प्राण गँवाये ।
अब ना बचब कोप इनकेसे, देखि सभय उठि धाये ॥१॥
भागत नृप सब लछिमन देखे, मुनिपद शीश नवाये ।
परशुरामको देखि गुरू तुम, काहेको भेष छिपाये ॥२॥
सुन सौमित्र कोप इनकेरा, सब क्षत्री घबड़ाये ।
पिता तुम्हारें इनसे हारे, और कौन जग जाये ॥३॥
सुनत कोप लछिमन तब कीन्हेव, ऐसे सुभट कहाये ।
तुलसी मान-भंग करौं इनका, तबै सुमित्रा जाये ॥४॥

३०

मुनि सँग आये हैं दोउ बीरा ॥
भये आहार चाप मोतिनके, कटि पट केश तुनीरा ।
रूप सरूप भूप दोउ आये, श्यामल गौर शरीरा ॥१॥
राजा जनकने रच्यो स्वयंवर, जुरी समाज गँभीरा ।
बल पौरुष सब करि-करि थाके, उठै न चाप गँभीरा ॥२॥
भट अरु सुभट महाभट हारे, जोर सबै मिलि कीन्हा ।
को अस बीर भयो पृथ्वीपर, तोरै बिनु रघुबीरा ॥३॥
गुरु अनुशासन पाय कृपानिधि, गए शरासन तीरा ।
इकटक हेरि रहे नरनारी, जिया धरै ना धीरा ॥४॥
धनुष टूट सुनि भृगुपति आये, चितै फरसकी ओरा ।
शंकरदास बधाई बाजै, जै जै सिय रघुबीरा ॥५॥

३१

हम देखा राम जनकपुरमाँ ॥

जनकपुरीकी शालामें जयमाला लिए सिया गढ़माँ ।
रतन जड़ित सिंहासन ऊपर बैठे राम सिया गढ़माँ ।
देखि रूप सब भूप छकित भे, मकराकृति कुंडल काननमाँ ॥१॥
जानकि लवलाय सँदेस कह्यो, सखियाँ सब व्याकुल हैं गढ़माँ ।
राजा जनकने रचा स्वयंवर, राम लच्छिमन हैं दलमाँ ।
सोरहौ सिंगार अभूषण पहिरे, गज मुक्ताहार सिया गलमाँ॥२॥
सखियाँ सब रंग बिरंग भई, मुसक्याय रहीं अपने मनमाँ ।
कंचनकी पिचकारी चलैं, जहँ ठाढ़ गुलाब चुवै दलमाँ ।
तिहुँ लोककी शोभा क्या बरणौं, जब नारद झुके तिहूँ दलमाँ॥३॥
धनुहाकी टंकोर शब्द सुनि, डोलि उठे धरतीके नाग ।
परशुराम चलि आये स्थानसे, लछिमन भाईसे बाद परा है ।
हाहाकार उठे दलमाँ ॥४॥
इत भारत उत जनकसुता है, मंत्री सब आय खड़े छिनमाँ ।
प्रल्हाद हेतु हरणाकुश मार्‍यौ, रूप अनेक धर्‍यो छिनमाँ ।
पारबती शिवते बिनवैं, दुख-पीर हरौ उनके तनकी ।
काशीमाँ जाय कल्याण करौ, वैकुंठमाँ जाय तरौ छिनमाँ॥५॥

३२

जनक रघुबंशी ब्याहन आये ॥

राजा जनकने रच्यो स्वयंवर, जहँ-तहँ पत्र पठाये ।
देश-देशके भूप जुरे हैं, काहू न चाप चढ़ाये ॥१॥
धनुहा टूरन उठे रामजी, गुरुको माथ नवाये ।
धनुष टूटि नवखंड किह्यो है, हाहाकार मचि जाये ॥२॥
पठवौ दूत अयोध्यानगरी, दशरथ खबरि जनाये ।
रामचंद्रका रचा स्वयंवर, साजि बरात लै आये ॥३॥

आय बरात जनकपुर पहुँची, अगवानी करवाये।
अगवानी करवायके पुनि द्वारेका चार कराये ॥४॥
काहेकेरे खंभा गड़े हैं, काहेते मँड़व छवाये।
काहेकेरे कलसा धरे हैं, काहेते चौक पुराये ॥५॥
बन-कदलीके खम्भा गड़े हैं, पनवन मँड़व छवाये।
सर्व सोनेके कलसा धरे हैं, मोतियन चौक पुराये ॥६॥
सब सखियाँ ले आईं जानकी, मड़ए तरे चलि आये।
चंदनकेरे पाटा धरे हैं, आनि वहीं बैठाये ॥७॥
सियारामकी होत भाँवरी, सखियाँ मंगल गाये।
बैठे ब्रह्मा वेद पढ़त हैं, नारद बीन बजाये ॥८॥

३३

जनक यह भीर कहाँसे आई ॥
हाथ जोरिकै कहैं जनकजी, मैं यह भीर बोलाई।
मोरि सुता बैदेहि कुँआरी, रचा स्वयंवर जाई ॥१॥
शंकर-धनुष धरा यहि ठौरा, अति कठोर गरुआई।
सहस बाहुसम सो रिपु मेरा, जो शिवचाप चढ़ाई ॥२॥
मुनिके बचन कठिन अस सुनिकै, सब नृप गए सुखाई।
व्याकुल भए देखि रघुनंदन, लछिमन सैन जताई ॥३॥
हाथ जोरिकै लछिमन बोलै, क्षमा करौ मुनिराई।
होइहै कोउ इक दास तुम्हारा, जो शिवचाप चढ़ाई ॥४॥
उठै न परशु बिकल भयो भुजबल, सुधिबुधि सब बिसराई।
तुलसी फरसा दियौ रामका, जाय भजौ रघुराई ॥५॥

३४

रथसों निरखत जात जटाई ॥
सुवरणका मिरिगा बनि आवा, द्वार चुननको जाई।
परी निगाह सिया रघुबरकी, मृगहि लेत पछुआई ॥१॥
मृगा भगा जबहीं जंगलको, राम लीन्ह पछुआई।
लाग्यो बाण जबै मिरगाके लखन-लखन गोहराई ॥२॥

परी अवाज कान सीताके, सुनौ लच्छिमन भाई ।
तुम्हरे बंधुपर बिपति परी है, जल्दी होउ सहाई ॥३॥
इतना सुनिकै उठे लच्छिमन, गुंडा दिह्यौ खिंचाई ।
जब गुंडाके बाहेर अइहौ, तबै खता व्हैजाइ ॥४॥
बिप्ररूप धरि आयो निशाचर, देवदत्त गोहराई ॥
लैके भिक्षा निकरीं जानकी, रथपर लिह्यौ चढ़ाई ॥५॥
रथपर व्याकुल भईं जानकी, शरण-शरण गोहराई ।
है कोउ योधा रामादलमाँ, हमका लेय छोड़ाई ॥६॥
इतना सुनि खगपति उठि धाये, हाँक दिह्यौ गोहराई ।
केहिकी तिरिया काह नाम है, कौन हरे लिहे जाई ॥ ७ ॥
सूर्यवंश राजा नृप दशरथ, तिनके सुत रघुराई ।
तिनकी तिरिया नाम जानकी, हरे निशाचर जाई ॥ ८ ॥
इतना सुनि खगपति उठि धाये, हाँक देत नगिचाई ।
जाय न पैहै महाजड़ मूरख, जौ शिव होयँ सहाई ॥९॥
चोंचन युद्ध जटायू कीन्ह्यों, रथ राख्यौ बेलमाई ।
अग्निबाण तब छाँड्यो निशाचर, गिद्ध गिर्‌यो घहराई ॥१०॥
परे-परे खगपति गोहरावैं, सुनौ जानकी माई ।
जो पर हमरे गिरे परे हैं, सो तुम देहु जमाई ॥११॥
देत अशीष जानकी माता, प्राण राखु घटमाँही ।
तुलसिदास रघुबर जब आवैं, कह्यौ कथा समुझाई ॥१२॥

३५

जननी, मैं न जियउँ बिन रामा ॥
राम-लखन-सिय बनका पठयो, दशरथ तजे पराना ।
होत भोर हमहूँ चले जइबै, कौन अवध बड़ कामा ॥१॥
भारत कहत मातु केकईसे, शब्द सुनैं भगवाना ।
जौना होतूँ पुत्र तुम्हारो, हनत्युं करेजेमाँ बाना ॥२॥
कहैं भरतजी सुनौ कैकई, आगि लगायो सारे धामा ।
सुर-नर-मुनि सब दोष लगावैं, कौन किह्यौ बड़ कामा ॥३॥

लोटत-पोटत भारत आये, कौशल्याके धामा ।
चूमि चाटिकै गले लगायो, धीरज धरौ मोरे प्राना ॥४॥
भारतने इक कुंड खोदायो, कुश आसन विश्रामा ।
तुलसीदास भजो भगवाने, करत निरंतर ध्याना ॥५॥

३६

भृगुपति है कुठार कठिनाई ॥
धन्य लोहार धन्य कारीगर, जिन यह फरस बनाई ।
है कुठार बिन धार विप्र, लै आवहु सान चढ़ाई ॥१॥
लछिमन बचन सभारिकै बोलौ, किह्यो मोरि कुटिलाई ।
बालक जानि न तोहि बधौं, नहिं देत्यौं स्वर्ग पठाई ॥२॥
विप्र वंशसे हम डरपित है, कहौं तौ करी बड़ाई ।
सन्मुख वीर धीर धरै क्षत्री, ताहि न पीठि देखाई ॥३॥
इतना सुनि भृगुपति खिसियाये, फरसा लिह्यौ उठाई ।
त्राहि त्राहि नरनारि पुकारें, अब यहि कौन बचाई ॥४॥
सैनन रघुपति लखन निवारे, बैठो गुरुपहँ जाई ।
तुलसिदास रघुबीर फरसपर, जै बोले सिर नाई ॥५॥

३७

बनका निकरि गए दोउ भाई ॥
आगे-आगे राम चलत हैं, पाछे लछिमन भाई ।
ताके पाछे मातु जानकी, झारखंडका जाई ॥१॥
रामबिना मोरि सूनि अयोध्या. लछिमन बिनु चौपारी ।
सीता बिना मोरि सूनि रोसैयाँ. भोजन कौन बनाई ॥२॥
घरमाँ रोवैं मातु कौसिला. द्वारे भारत भाई ।
राजा दशरथ प्राण तज्यो है, केकइ मन पछिताई ॥३॥
जेहि बन बाघसिंह बहु बोलैं, जेहि बन कोउ न जाई ।
तेहि बन जइहैं राम लच्छिमन, कुशकी सेज बिछाई ॥४॥
लंका जीति राम घर आये, घर-घर बजे बधाई ।
तुलसीदास भजो भगवाने. राज बिभीषण पाई ॥५॥

३८

अब मोरि बाँह पवनसुत टूटी ॥
बाँह पवनसुत मोरी टूटी, अवधपुरी-सी छूटी ।
शक्ती बाण लग्यो लछिमनके, नारि जानकी छूटी ॥१॥
जौ सुनि पैहैं मातु सुमित्रा, खाय मरैं विष बूटी ।
अवधपुरीमाँ शोर मचैगा, ह्वैगे लंकमाँ लूटी ॥२॥
को पठवे को जाय द्रोणगिरी, लावै सजीवन बूटी ।
परबत दूरी रैन रही थोरी, लछिमन-नाड़ी छूटी ॥३॥
अंगद नाम बालिका बेटा, बात कहै एक छोटी ।
तुलसीदास अंजनीनंदन, लावौ सजीवन बूटी ॥४॥

३९

रघुबर आजु रहो मोरे बारे ॥
नौ महिना जब गर्भमाँ राख्यौ, तब न भए मोहि भारे ।
बड़े भए मनमोद करनको, तब बनवास सिधारे ॥१॥
बहुतै दुःख दियौ बिधनाने, सो दुख टरै न टारे ।
ठाढ़ि कौसिला रुदन करत है, बनको चले मोरे बारे ॥२॥
आजुकी रैन रहो मोरे प्यारे, जैयो भोर दुलारे ।
मैं कस रहिहौं मातु कौसिला, दशरथ बाचा हारे ॥३॥
तुलसीदास भजौ भगवाने, दोउ नयननके तारे ।
राम-लखनमें प्राण बसत हैं, सो कस जात बिसारे ॥४॥

४०

रोवै अवध राम बन जाई ॥
भीतर रोवै मातु कौसिला, बाहर लोग लुगाई ।
बैठि सुमित्रा महलमें रोवै, ज्यों बछरा बिन गाई ॥१॥
दारुण दुःख दियौ बिधनाने, विपदा सही न जाई ।
रामचंद्र तब यों उठि बोले, सोच करौ ना भाई ॥२॥
बिधिका लिखा टरै ना टारै, कोटिन करौ उपाई ।
चरन लागि तीनिउ मातनके, चलत भए दोउ भाई ॥३॥

सीता संग चलीं स्वामीके दिह्यौ भवन बिसराई।
तुलसीदास भजौ भगवानै, हरि-चरणन चितलाई ॥४॥

४१

मोरि सिया बैठि अलसाती, लाल तुम काहे न मेरचो बाती॥
जनकपुरीमाँ धनुष उठायो, मार्यौ ताडुका घाती।
बाती देखि जिय शंका होइगे, लिख्यौ मातुका पाती ॥१॥
की जननी भगनी सिखलावा, की बाती लागै ताती।
की लैजैहो नगर अयोध्या, मात कौशिला खाती ॥२॥
बिहँसि बचन बोले रघुनंदन, हमरे कुल न सोहाती।
ई बाती उनहिनकी खातिर, जे हमरे सँग जाती ॥३॥
कोई सखी मुसक्याय रही है, कोई सखी अलसाती।
तुलसी टेक सदा चलि आई, रघुबंसिनकी थाती ॥४॥

४२

सिया सुधि जात पवन सुत लेन ॥
कहैं सुग्रीव सुनौ सब बानर, मानो मोरे बैन।
खोजन हित सिय बेगि जाहु तुम, लैलै निज निज सेन॥१॥
एक मासमाँ जौ तुम अइहो, लै सीता सुधि कै न।
तौ निश्चय मोरे कर मरिहौ, यामें संशय है न ॥२॥
जामवंत नलनील सुभट भट, अंगद सहित सुनैन।
यह सब बीर चले दक्षिण दिश, सुनि अनंदमय बैन ॥३॥
जलधि तीर पहुँची सब सेना, ता कोउ नाँधि सकै न।
अंगद आदि बीर सब सोचत, एकौ बात बनै न ॥४॥
बारिधि नाँधि अंजनी नंदन, लख्यौ लंक निज नैन।
जात लंकिनी रोकन लागी, लगे मुष्टिका देन ॥५॥
कियो प्रवेश लंकके भीतर, लख्यो बिलग एक ऐन।
रामराम जब सुमिरण कीन्हा, सुन्यो विभीषण बैन ॥६॥
उठे विभीषण बाहर आये, मिलिगे चारिउ नैन।
हो तुम कौन कहाँसे आये, कहो क्षेम कुशलेन ॥७॥

बोले तबै केशरीनंदन, सुनौ मित्रवर बन ।
जनकसुताके दरश कराओ, सुफल होंय मम नैन ॥८॥
सकल युक्ति तब कही विभीषण, जाहु अशोकहि रैन ।
मिलिहैं तहाँ जगतकी जननी, दरशन करु भरि नैन ॥९॥
वेगवंत ह्वै चले पवनसुत, सुमिरत राजिव-नैन ।
दीख अशोक वृक्षके नीचे, बैठी सिया अचैन ॥१०॥
दै मुद्रिका प्रणाम कियो, अरु बोले मारुत बैन ।
माता सोच करहु जनि मनमें, ऐहैं रघुबर लेन ॥११॥
अक्षय मारि उजारि वाटिका, दह्यौ लंक भय हैन ।
तुलसिदास सिय चूड़ामणि लै, आय गयो कपि सैन ॥१२॥

४३

अब तौ रामध्वजा फहरानी ॥
चमकै ढाल फरहरी तेगा, गर्द लागि असमानी ।
लछिमन बीर बालि सुत अंगद, हनोमान अगवानी ॥१॥
कहै मदोदरि सुनु पिय रावण, त्रिभुवनपतिसे ठानी ।
जेहि समुद्रका मान करत रह्यो, तामें सिल उतरानी ॥२॥
आज पवन अँगना ना बहारै, मेघ भरै ना पानी ।
लछिमी सरासर धान न कूटै, कहै मदोदरि रानी ॥३॥
बिनती करौ जाय पिय उनकी, चूक परी अति भारी ।
तुलसीदास भजो भगवानै, करौ न अब अभिमानी ॥४॥

४४

लंका पैज कीन्ह हनुमाना ॥
सिया खोजको चले पवनसुत, दक्खिवन कीन पयाना ।
अंत खोज कतहुँ नहिं पायो, धर्‍यो रामपर ध्याना ॥१॥
पहिला पहरा है सुरसाको, जानत सकल जहाना ।
मसा रूप धरि पार उतरिगे, तबहुँ न रावण जाना ॥२॥
रावणके इक भाई विभीषण, तिनके गृहमें जाना ।
वै सीताकी खबर बतावैं, तब हनुमत मुसक्याना ॥३॥

ङ्गियाते जाय फुलबगियामाँ पहुँचे, मनमाने फल खाना।
पेड़ उखारि समुद्रमां फेंक्यो, तब लंकेश्वर जाना ॥४॥
हाहाकार मच्यो लंकामाँ, हनूमान चढ़ियाना ।
बड़े-बड़े शूर रहैं लंकामाँ, सबके मन घबड़ाना ॥५॥
मेघनाद रावणका बेटा, वहै रहै बलवाना ।
मुरछा परिगा हनूमानते, धनुहा बाण हेराना ॥६॥
बस्तर दिह्यौ लपेटि पूँछिमाँ, सब निश्चर जुटियाना।
उलटि-पलटिकै लंका जारी, जाय समुद्र सेराना ॥७॥
पैठि पताल तोरि यमकातर, मंडप जाहि समाना ।
अहिरावणकी भुजा उखारी, फैंकि दिह्यौ असमाना ॥८॥
राम चढ़े लछिमन चढ़ि आये, चढ़ि आई सब सेना ।
बीचखूच अंगद नहिं आये, नहीं न बली बलवाना ॥९॥
बड़ो सपूत भयो कुल अपने, देवन बंदि छुड़ाना ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, विधिके अंक प्रमाना ॥१०॥

४५

अंजनीका बेटा बंका है ॥
राम रजाय चला सिर नाय, बड़ा हनुमान चलंका है ।
पहुँचे जलधार गयो वहि पार, तौ मार्‍यो एक फलंका है।
सीताको चीन्हा मुद्रिक दीन्हा, लेत अशीष निशंका है ॥१॥
रावण फुलवारी सबै उजारी, नेक न मानी शंका है ।
तरुवर सब टूरे सिंधुमाँ बोरे, करत फलनकर फंका है ।
रावण सुनि पावा दूत पठावा, भई लड़ाई, बर्णि न जाई ।
बाँको बीर लड़ंका है ॥ २ ॥
रावणके आगे दुष्टा भागे, जायके किह्यौ खड़का है ।
तब मंत्र बिचारा पूँछ सँवारा, घृत औ रुईसे फूँका है ।
बाढ़ो कपि भारी चढ़ो अँटारी, फूँकि दियो गढ़ लंका है ॥३॥
चल पवन निधाना छिपि रहे भाना पथ नहिं सूझि परंता है ।
व्याकुल रनिवासा देखि तमासा, कैसा धूम धड़क्का है ।
तुलसिदास छबि कहँ लग बरणौं, देत लंकपर डंका है ॥४॥

४६

पवनसुत लेन सजीवन धायो ॥

शीश नायकै चले पवनसुत, गढ़ त्रिकूटपर आयो है।
तहाँ बाग तड़ाग मुनीश्वर ग्यानी, सबका देखन पायो है।
जहाँ कथा रची है कालनेमि, औ हनूमान सुनि पायो है।
जहाँ रामकथा हनुमतने जाना, तहाँ वेगि चलि आयो ॥१॥
जब लगि प्यास अँजनिनँदनको, ताल तीर चलि आयो है।
जब जलमें पाँव धऱ्यो हनुमतने, तुरत मच्छ उठि धायो है।
औ मकरी चरण कमल लपट्यानी, तेहि वैकुंठ पठायो ॥२॥
द्रोणागिरि लै चले पवनसुत, अवधपुरीपर आयो है।
औ द्रोणागिरिकी हरहर सुनिकै, भरत वीर अकुलायो है।
निज कर गहि धनुषबाण संधान्यो, कपिको भूमि गिरायो है।
जब लगो बाण तब गिरे पवनसुत, रामराम गोहरायो ॥३॥
रामभक्त भारतने जाना, तहाँ बेगि चलि आयो है।
औ रामचंद्रकी कुशल पूँछिकै, भारत बाण उठायो है।
तब हाथ जोरिकै कहैं पवनसुत तुम्हरो बल मैं पायो है।
औ तुलसीदास सजीवन लैके, लछिमन तुरत जियायो ॥४॥

४७

चितै मुख राघव धरत न धीरा ॥

सुंदर बदन कमलदल लोचन, नैन बहैं जल नीरा।
व्याकुल भए सुमित्रानंदन, कौन लगावै तीरा ॥१॥
अबहिं तो कह्यो लंक सर करिबे, अब कस विकल सरीरा।
मौन भयो बोलत कस नाहीं, बिपति-बँटावन बीरा ॥२॥
भूख लगे मोंहि भोजन लावत, प्यास लगे जल नीरा।
शीत लगे मोंहि अनल तपावत, है लछिमन बड़ बीरा ॥३॥
सीता हरण मरण दशरथको, बैरिन भइ रण धीरा।
तुलसीदास भजौ भगवानै, कैसे धरै जिय धीरा ॥४॥

४८

पवनसुत जात सजीवन लेन ॥
शक्तीबाण लग्यो लछिमनके, लछिमन भयो अचैन ।
लंका जाय तुरत लै आयो, मंदिर सहित सुषेण ॥१॥
कालनेम इक बाण बनायो, कपिसन बोले बैन ।
पकरि पाँय धरतीमाँ पटक्यो, लग्यो मुष्टिका देन ॥२॥
गिरिपर गयो दवा नहिं पायो, एकौ बात बनै न ।
सहित पहाड़ उखारि लिह्यो है, मनमाँ कछु भय है न ॥३॥
औषधि कान नाकमाँ छाड़्यौ, तुरतै खुलिगे नैन ।
तुलसीदास भजो भगवानै, हरषि उठी सब सैन ॥४॥

४९

सभाते पति भवन लै आई ॥
आपन नीक मोर भल चाहौ, तौ सिय देहु पठाई ।
लंका राज सुमन है सौंपौ, चलौ भजी रघुराई ॥१॥
मेघनाद अस पुत्र हमारे, कुम्भकरण अस भाई ।
गढ़ लंका अस कोट बना है, सात समुद्र जल खाँई ॥२॥
हनूमान अस पायक जिनके, औ लछिमन अस भाई ।
बरत अगिनिमाँ फाँदि परे हैं, कोट गिना ना खाँई ॥३॥
लंका जीति राम घर आये, घर-घर बजै बधाई ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, राज बिभीषण पाई ॥४॥

५०

रानी, तुम्हैं कौन डेर भारी ॥
उदय अस्तलौं राज हमारो, सुख-संपति अधिकाई ।
सात समुंदर चहुँदिश घेरे, बीचमें लंक हमारी ॥१॥
पवन बहुरवा झाड़ू डारें, सूर्य करैं उजियारी ।
सुर-नर-मुनि सब बंदी स्यावैं, इन्द्रौ करैं कहारी ॥२॥
तीनि लोकमाँ बजै नगाड़ा, चहुँदिश राज हमारी ।
मान न राखा केहु राजाकर सरबरि करै हमारी ॥३॥

हमरे कुल-कुटुम्बके तारन, राम भये अवतारी।
तुलसीदास भजौ भगवाने कीरति चलै अगारी ॥४॥

५१

पिया मति अरझौ धरणीधरसे ॥
जब रहीं बारी जनकदुलारी, बेहि न लायो जनकपुरसे।
चोरी कीन्ह्यों गाल बजायो, सरबरि किह्यो धनुर्धरसे ॥१॥
लंका अस कोट, समुद्र अस खाई, मेघनाद गरजैं बलसे।
इंद्रजीत ऐरावत लायो, जंग विह्यौ सब देवनसे ॥२॥
हनूमान अस पायक जिनके, औ लछिमन अस भाईसे।
बरत अगिनिमाँ फाँदि परे हैं, काह करैं जलखानीसे ॥३॥
इक लख पूत सवा लख नाती, दोउ दल सजै बराबरसे।
लछिमनसे मैदान न टूटै, गढ़ टूटै अभिमानीसे ॥४॥
रह्यौ बालि छः मास लौं कखरी, अंजुलि देत सुरजमनसे।
लरिकैयाँमा प्रेम सतायो, हन्यौ बालि एकै शरसे ॥५॥
भोर बिभीषण देश निकार्‍यों, तोंहि निकारि देह्यों घरसे।
होत भोर सब कपि अरु भालू, तपसी बाँधौं बाँधनसे ॥६॥
तिरिया बुद्धि तोरि हन्यो निशाचर, मैं न डरौं नर-बंदरसे।
तुलसीदास भजौ भगवाने, मुक्ति पदारथ रामैसे ॥७॥

५२

पिया मत बैर करौ रघुबरसे ॥
हाथ जोरिकै कहै मँदोदरि, मानो बालम अबसे।
दै सीता तुम मिलौ रामते, जीति सकौना उनसे ॥१॥
वै तो तीनि लोकके ठाकुर, काल डरत है जिनसे।
हनूमान अंगद अस पायक, उलटैं लंका खरसे ॥२॥
इतना सुनि रावण तब बोल्यो, को जीतेगा हमसे।
जिनका तोंहि बहुत डर लाग, पकरि लाउँ मंडलसे ॥३॥
नौमतिराय मँदोदरि बोली, कहाँ गए थे तबसे।
कुम्भकर्ण घननादौ जूझे, नाहिं बचायो बलसे ॥४॥

५३

पिया तुम बैर किह्यौ रघुबरसों ॥

सोनेके कलश औ मानिकमोती, सो दमकैं दामिनिसों ।
वै कलशा हनुमान जलायौ, हैं काले काजरसों ॥१॥
वै तपसी दोउ ऐहैं समरमाँ, धनुष उठाय लेहैं करसों ।
मेघनाद औ कुम्भकर्णको, मारि गिरैहैं सरसों ॥२॥
जितनो कटक तुम्हारो स्वामी, सो सब मरिहैं सरसों ।
सब देवतनकी बंदि छोड़ैहैं, सिय लैजेहैं घरसों ॥३॥
हंसराज अस कहै मंदोदरि, रावण सूर असुरसों ।
धोखे न रहियो केहु राजाके, परिगा है काम जबरसों ॥४॥

५४

पिया तोंहि बहुतेरा समझायौं ॥

इक दिन धायौ जनकपुरीका, सिया ब्याहि नाहिं लायौ ।
चोरी चोरा धनुष उठायो, भुजा कटाय घर आयौ ॥१॥
इक दिन धायौ पंपापुरका, बालि बाँधि नहिं लायौ ।
ऋषि गौतमके भयो खिलौना, बाँधि गले लटकायौ ॥२॥
बलिका छलन पतालै धायौ, बलिहि जीति नहिं लायौ ।
धरि फटकारि दीन्ह सागरमाँ, बहत-बुड़त घर आयौ ॥३॥
जहँ-जहँ गयो हारि घर आयौ, जगमाँ यश नहिं पायौ ।
तुलसीदास भजौ भगवानैं, जस कीन्ह्यौं तस पायौ ॥४॥

५५

मोरी मानौ कही दशकंध अंध, रघुबीरसे बैर करौ ना॥

सौ जोजन मर्याद सिंधुकी, ता कोउ बाँधि सकै ना ।
ताहि बाँधि उतरे रघुनंदन, संग भालु कपि सैना ॥१॥
होरी अस लंक जलाय दिह्यो है, निश्चर भागि बचैंना ।
करि करि दाँव बीर सब थाके, पावक प्रबल बुझैना ॥२॥
तुम जीवत अहिबात हमारो, सत्य कहौं पिय बैना ।
कीन्हें रारि पार ना पइहौ, ताते जाय मिलौना ॥३॥

मैं तिरिया बहुभाँति सिखायो, निश्चर कान करैना।
तुलसीदास भजौ भगवानै, फूटे हियाके नैना ॥४॥

५६

अंगद कीन प्रतिज्ञा भारी ॥
जो तुम सुभट कहावत रावण, सुनिए बात हमारी।
राम फिरैं बिन सिया अवध, जो दियौ चरण मम टारी ॥१॥
तड़पिके रावण बोलन लागा, सुनौ बात बलकारी।
पकरि पछारौ यहि बंदरको, देहु सिंधुमाँ डारी ॥२॥
मेघनाद अस कोटिन योधा, बल कीन्हचो अति भारी।
डोली धरणी पाँव न खसका, उठा असुर सँभारी ॥३॥
अंगद कहैं सुनौ तुम रावण, सेवक मैं जिनकारी।
ऐसे चरण गहौ उनके तुम, देंह सुफल हो तेरी ॥४॥
बालितनय तुम चतुर कहावत, आयो काल करारी।
तुलसीदास यह सोचिकै रावण, बैठा है मुँह फेरी ॥५॥

५७

मिथिलापुर आजु मची होरी ॥
इत मिथिलापति उत कौशलपति, खेलत हैं जोरी-जोरी।
औ लिहे गुलाल हाथ पिचकारी, रंग गुलाल भरे झोरी ॥१॥
राम-लच्छिमन-भरत सत्रुहन, झुंड झुंड धाई गोरी।
बहु उड़ो गुलाल लाल भयो बादर, मचो कीच खोरी-खोरी ॥२॥
बाजे विविध बजावत गावत, होत शोर चहुँदिशि ओरी।
जनु सुंदर मदन रतीकी सेना, नृत्य करत थिरकत गोरी ॥३॥
मिलिमिलि फाग परस्पर खेलत, फैंकत हैं झोरिन झोरी।
जब तुलसिदास छबि देखि मगन भे, चितवनि मोरि राम ओरी४

५८

यहु प्रण छाँड़ि दियौ मिथिलेशा ॥
कौशिक मुनिके संग कुँअर दोउ अधिक सुहाये।
कोमल गौर किशोर भूप दशरथके जाये।
कहा हमारा मानि लेव तुम करौ विवाह नरेशा ॥१॥

सब भूपनके मध्य कुँअर दोउ राजत कैसे।
सब पक्षिनके बीच हंस दोउ भ्राजत जैसे।
उड़गण सहित मध्य सब बैठे, उमँगि उमँगि रँग केशा ॥२॥
शिवधनु कठिन कठोर कुँअर दोउ कोमल गाता।
पुरके नर सब कहैं सुनौ यह नीतिकि बाता।
साँवर बर सुंदर सिय लायक, करौ जनक अभिषेका ॥३॥
विधिका लिखा ललाट अमिट कोउ सकै न टारी।
धनु बिनु टूटै बरौं नहीं, चहै रहै कुँआरी।
एकु अंक नहिं मानौं काहूकि बरु समुझावै देशा ॥४॥
कोटि कहौ समुझाय, सुनौ नहिं काहूकी मैं एका।
प्राण जाँय पर बचन न छूटै, मोरि छुटै नहिं टेका।
नरनारी समुझाय कहैं, किन कोटि करौ उपदेशा ॥५॥
तमकि तमकि धनु धरैं, उठै नाहिं चले लजाई।
एक बार दस सहस भूप मिलि सकै न उठाई।
मंद बुद्धि सब भूप आनिकै, जुरि मिलि सकल खगेशा॥६॥
गुरु अनुशासन पाय राम धनु लिहव उठाई।
शोर भयो तिहुँ लोकनमें प्रभु टूरि बहाई।
काँपि महा दिग्गज अकुलाने, सहैं भार नहिं शेषा ॥७॥
गावत मंगलचार जनकपुर बजत बधाई।
गिरिजासुतको सुमिरि सिया माला पहिराई।
तुलसीदास छबि कहँ लग बरणौं बरसत सुमन नरेशा॥८॥

५९

लंकामें हने निसान, रामदल परा समुंदर-टापूमाँ ॥

कौन दिशा लड़ैं राम लच्छिमन(२);कौन दिशा हनुमान ॥१॥
उत्तर दिशा लड़ैं राम लच्छिमन(२);दक्खिन दिशा हनुमान॥२॥
काह लिए लड़ैं राम लच्छिमन (२);काह लिये हनुमान ॥३॥
धनुषबाण लिए राम लच्छिमन (२);गदा लिये हनुमान ॥४॥

६०

लखनके लागे शक्तीबाना ॥

सीता-हरण मरण दशरथको, लग्यो लखनके बाना ।
इतनी बिपति परी रघुबर पर, सोचत कृपा-निधाना ॥१॥
लेन सजीवन चले पवनसुत, फाँदि गए असमाना ।
जायके पहुँचे गढ़ परवत पर, महाबीर बलवाना ॥२॥
लैकै सजीवन चले पवनसुत, मारुत वेग समाना ।
अवधपुरीके ऊपर आयौ, भारत मार्‍यौ बाना ॥३॥
राम राम कहि गिरे पवनसुत, करत रामकर ध्याना ।
कौनि खबर लंका लैजावैं, उवै न पावै भाना ॥४॥
बाण निकारि लिह्यौ तरकससे, बैठि जाव बलवाना ।
मारौं बाण गिरै लंकामाँ, जहँ हैं कृपानिधाना ॥५॥
कानभरि सुन्यौं, नयनभरि देख्यौं, भारत हौ बलवाना ।
बाण उतारि धरौ तरकसमाँ, जैहौं पवन समाना ॥६॥
लैकै सजीवन उड़े पवनसुत, आइ गयो बलवाना ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, उठि बैठे हरषाना ॥७॥

६१

समरमें जूझि गयो पिय मेरा ॥

कहै सुलोचनि अपने पतिसे, अति भुजबल है तेरा ।
भुजा गए हैं सुख दर्शनको, शीश कहाँ है तेरा ॥१॥
वीर लच्छिमन हतन कियो है, समर कियो बहुतेरा ।
मेरे पतिका शीश मँगा दो, फिरि पाछे घनघेरा ॥२॥
साजि आरती चली सुलोचनि, जहाँ रामदल मेला ।
बंदर देखि सबै मुसक्याने, सिया रावणा फेरा ॥३॥
रामचंद्रने शीश मँगायौ, समुझायौ बहुतेरा ।
लैकै शीश भई दल बाहर, फिरि पाछे नहिं हेरा ॥४॥
चन्दन कोटि उठे दलबादल, रोप्यो चिता घनेरा ।
जरि बरि खाक सुलोचनि ह्वैगे, जरो अंग नहिं तेरा ॥५॥

आप तरीं परिवारै तारेव, तारेव कुटुँब घनेरा ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, हरि चरणनको चेरा ॥६॥

६२

समरमाँ धीर धरौ रघुराई ॥
जेहि कारण हम सेतु बँधावा, जलमाँ नाव डराई ।
जलका मालिक आगे जूझिगा, दून आपदा आई ॥१॥
कहैं बिभीषण सुनौ रामजी, यहि बिधि करौ उपाई ।
वैद सुषेण रहै लंकामाँ, तेहिका लियौ बोलाई ॥२॥
कहैं वैदजी सुनौ रामजी, सुनौ सखा चितलाई ।
द्रोणागिरि पर मूरि सजीवन, बीर होय सो लाई ॥३॥
कहैं पवनसुत सुनो रघुनंदन, हमका दियौ पठाई ।
मूरि सजीवन हम लै अइबै, लछिमन लेब जियाई ॥४॥
चले पवनसुत द्रोणागिरिको, हाहाकार मचाई ।
मूरि सजीवन चीन्हत नाहीं, पर्वत लिह्यो उठाई ॥५॥
लै द्रोणागिरि चले पवनसुत, नगर अयोध्या आई ।
खैंचि बान भारतने मार्‍यो, रहे धरनि ओढ़काई ॥६॥
राम राम कहि हनुमत गिरिगे, भरत रहे अकुलाई ।
मूरि सजीवन बीचै रहिगै, लछिमन कौन जियाई ॥७॥
कहैं भरतजी सुनौ पवनसुत, हमका दियौ बताई ।
जहाँ कटक रघुपतिका मेला, हुवाँ दियौं पहुँचाई ॥८॥
लाय सजीवन दीन वैदको, तुरतै कीन्ह उपाई ।
तुलसीदास भजौ भगवानै लखन उठे हरषाई ॥९॥

६३

सिर बाँधे रामकी रंगी । दलमाँ गरजि रहा बजरंगी ॥
लंकाते इक निश्चर आवा, तेगाँ बाँधे जंगी ।
है कोउ योधा रामदलमाँ, समर करै बहुरंगी ॥१॥
गोरे बदन सलोने नैना, जोर करै लछिमनसे ।
मार्‍यौ बाण भवन सब डोले, भुजा उखरिगै जंगी ॥२॥

एक बँदरवा कूदत आवा, वहै मचावै जंगी ।
अगणित लोथ परे लंकामाँ, खैंचत हारे भंगी ॥३॥
ऊँचे चढ़िकै देखै मदोदरि, फौज आइगै जंगी ।
मेघनाथ अस बेटा जूझे, जूझे साथी संगी ॥४॥
रावण मार्‍यो अहिरावण मार्‍यो, औ रावणके संगी ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, आपै बने फिरंगी ॥५॥

६४

आज दशरथ घर बजै बधाई ॥

अति पुनीत मधुमास लगन ग्रह, बार योग समुदाई ।
हरषवन्त चर अचर मुनी सुर, तनु रुइ पुलक जनाई ॥१॥
बर्षहिं बिबुध-निकर कुसुमावलि, नभ दुंदुभी बजाई ।
कौशल्यादि मातु सब हर्षित, यह सुख बरणि न जाई ॥२॥
सुनि दशरथ सुत जन्म लिह्यो है, सब विप्रन बोलवाई ।
वेद-विहित कर क्रिया परम शुचि, आनंद उर न समाई ॥३॥
सदन वेद धुनि करत मधुर मुनि, बहु विधि बजत बधाई ।
पुरवासिन निज नाथ हेतु सब, निज संपति लुटवाई ॥४॥
मणि तोरण बहु केतु पताकन, पुरी रुचिर सजवाई ।
मागध सूत द्वार बंदी जन, जहँ तहँ करैं बड़ाई ॥५॥
सहज शृंगार किए बनिता चलि, मंगल विपुल बनाई ।
गावहिं देंहि अशीश मुदित चिर, जियो तनय सुखदाई ॥६॥
बीथिन कुमकुम कीच अगंजा, अतर अबीर उड़ाई ।
नाचहिं पुर नरनारि प्रेम भरि, देह दशा बिसराई ॥७॥
अमित धेनु गज तुरंग बसन मणि, जातरूप अधिकाई ।
देत भूप अनुरूप जाहि जोइ, सकल सिद्धि गृह आई ॥८॥
सुखी भये सुर संत भूमि सुर, खलगण मन मलिनाई ।
सबहिं सुमन विँहसत रवि विकसत, विपिन कुमुद विकलाई९॥

जो सुखसिंधु सुकृत सी करते, शिव विरंचि प्रभुताई ।
सो सुख उमँगि रह्यौ है दशदिशि, कवन भाँति कहो गाई॥१०॥
जे रघुवीर चरणके चिंतक, तिनकी गति प्रकटाई ।
अविरल अमल अनूप भक्ति दृढ, तुलसिदास तब पाई ॥११॥

६५

आरति करैं कौशिला रानी ॥

निरखत रूप सिया रघुबरको, छबि नहिं जात बखानी ।
कनक थार गज माणिक मुक्ता, दिहेव दान विविधानी॥१॥
मारेव मान सकल भूपनको, महिमा वेद बखानी ।
तोड़ेव धनुष जनक प्रण-पूरण, तीनि लोकम जानी ॥२॥
जनकरायकी लज्जा राखी, परशुराम हित मानी ।
सुरपुर नारि अवधपुर बासी, करत विमल यश गानी ॥३॥
नचत नवल अप्सरा मुदित मन, बर्षि सुमन हरषानी ।
रत्न मंदिरमें रत्न सिंहासन, बैठे सारंगपानी ॥४॥
मात कौशिला करत आरती, निरखि हृदय सुख मानी ।
दशरथ सहित अवधपुर बासी, उचरत जयजय बानी॥५॥

६६

केकई कौन मंत्र तुम दीन्हा ॥

साँझ सुना है तिलक रामका, दशरथ यह प्रण कीन्हा ।
रात्रि मात्रमें कौन कुमति भई, प्रात होत बन दीन्हा ॥१॥
अबै लगे हम सासु कहत रहीं, नाम कबहुँ नहिं लीन्हा ।
प्रात होत हमहूँ बन जैबै, यह केकई दुख दीन्हा ॥२॥
मणि-मुक्तनके हार काढ़िके, सासु चरण धरि दीन्हा ।
राम-लखन बनबास पठाये, प्राण रहै नहिं दीन्हा ॥३॥
कौसल्या सुनि बचन सियाके, नयन नीर भरि लीन्हा ।
तुलसिदास प्रभु विनय करत हैं, विधिके लेख नहिं चीन्हा॥४॥

६७

भजु मन रामचरण सुखदाई ॥
जिन चरणनते निकरी सुरसरि, शंकर जटा समाई ।
जटाशंकरी नाम पड़ो है, त्रिभुवन तारन आई ॥१॥
जिन चरणनकी चरण पादुका, भरत रहे मन लाई ।
सो केवट कठनी ले धोयो, तब हरि नाव चढ़ाई ॥२॥
बन दण्डक सब पावन कीन्हा, ऋषिनकी त्रास मिटाई ।
जे ठाकुर तिहुँ लोकके नायक, कपट मृगा सँग धाई ॥३॥
कपि सुग्रीव अनुज भए व्याकुल, चहुँदिशि चक्र घुमाई ।
रावन अनुज विभीषण भेटेव, परसति लंका पाई ॥४॥
सौ योजन मरजाद सिंधुकी, जात बार ना लाई ।
तुलसीदास मरुत सुत महिमा हरि अपने मुख गाई ॥५॥

६

होरी खेलैं राम मिथिलापुरमाँ ॥
सखी सयान एक मिथिलापुर, सीख दिये सबके गृहमाँ ।
अब बहुरि न राम जनकपुर अइहैं, ना हम जाब अवधपुरका।
दूलभ दरश रामके होइहैं, पीछे का सोच करौ मनमाँ ।
धनुष टूरि मुख मोरि नृपनके, सिया बियाह्यौ छिन मइ ह्याँ ।
जब बारी कुँआरी संगमें लछिमन बरण मिलाय लियौ
सखियनमाँ ।
बनै तौ ब्याह करौ लछिमनका, लगन लागि है फागुनमाँ ॥१॥
शेष-महेश सबै मखराजै, रामसिया भुज बाहनमाँ ।
हरषिके देव सुमन सब बरसत, सकल बंधु उलसाहनमाँ ।
हँसि गारि देत कौशल नरेशको, जनकपुरी गलियारनमाँ ।
तुम हौ शहजादे राजा दशरथके, लपटि गई सब दामनमाँ ।
हम हैं बेटी राजा जनककी, तुम हौ अवधके राजनमाँ ।
जब रानी कौशिला इहैं बुलाय लियौ, राजा जनकके
आंगनमाँ ॥२॥

केतनिउ सखि रंग संग लीन्हे, केतनिउ जामा सरझावनमाँ ।
केतनिउ जलमें रँग घोरि रहीं, केतनिउ रँग सूख उड़ावनमाँ ।
हँसिकै जब राम रंग डारैं, केतनिउ सखि लगीं बचावनमाँ ।
केतनिउ सखि देखिकै काँपि उठीं, केतनिउ अँटकी हैं बुलावनमाँ ।
कोई मनोकामना पूरण करिहैं, शीष धरे पग-पावनमाँ ॥३॥
लैकै सिय साजि समाज चलीं, लाखन पिचकारी जिनके गृहमाँ ।
सिंधु काटि इक नदी बहैहौं, घोरौ रंग जहाजनमाँ ।
ऐसो रंग परै प्रभु ऊपर, बूँद परै जस सावनमाँ ।
इत मिथिला उत नगर अयोध्या, सुख अनंद दोउ जोवनमाँ ।
तुम तौ टेकी जनकनंदिनी, हम हन अवधके राजनमाँ ।
तुलसिदास छबि कहँ लगि बरणौं, सुनत पाप छूटै छिनमाँ ॥

द्वितीय विभाग-श्रीकृष्ण-चरित्र

६१

मन बसै ग्वार बृंदाबनमाँ ॥

बृंदाबन बेली, चंप-चमेली गुल्दावली गुलाबोमाँ।
गेंदा गुलमेंहदी गुलाबास, गुलखैरा फूल हजारोंमाँ।
कदली कदम्ब अमरूद तूत, फूली रिसाल सब शाखनमाँ।
भँवरा गुलजार बिहार करैं, रस लेंहि फूल फल-पातनमाँ ॥१॥
बन-बागनमें लटकैं-झटकैं, फल लागत दाख छुहारनमाँ।
फूली फुलवारी लौंग सुपारी, बैपारी बैपारनमाँ।
मालिनके लड़के तोड़हिं तड़के, बेंचहिं हाट-बजारनमाँ।
निंबू-नौरंगी रंग-बिरंगी पेस्तर भरी प्रेम-रसकी।
सौदा करलो सुख श्याम-सुन्दरी लेहु जौन जाके मनमाँ ॥२॥
इक रंग तुरंग चरैं-बिचरैं जमुना-तट खोह कगारनमाँ।
तपसी जग जंगम जोग जती, सब ध्यान धरैं पद्मासनमाँ।
बोलैं बिहंग सब रंग-रंग, किलकैं कदंबकी डारनमाँ।
शीतल सुगंध बह पवन मंद, सुख देत सदा सबके तनमाँ॥३॥
खेलत फाग मदनमोहन, मुरली ध्वनि कसत मृदंगनमाँ।
डफ-झांझ मँजीरनकी जोड़ी, गमकै तर-इतर सुगंधनमाँ।
इत रंग-रँगीलिनके छोहरा, पिचकारि हनैं कुच-गोरनमाँ।
ऐसे शिवराम भए बृजमाँ, होरि खेलैं कान्ह गोपी
गणमाँ ॥४॥

७०

रुचि है बसंत बृंदावनमाँ ॥
द्रुम बेलिन बेलि मनोहर रंग तुरंग फूल फल पातनमाँ ।
भँवरा इक रंग कुरंग तरंग फिरैं बिहरैं अपने मनमाँ ।
बिचरै उचरैं तिचरैं सुरको छिपि गुंजत नीप लतानमाँ ।
द्रुम धूलि कुसूमनसे बरसैं, हरसैं गढ़ कोकिल ताननमाँ ॥१॥
इत शीतल मंद सुगंध श्रवै मलयाचल वायु बहारनमाँ ।
भँवरे साकार तमाल साल, कचनार अनार छोहारनमाँ ।
टेसू अनियारे निंबु निवारे, चम्पा बबुल गुलाबनमाँ ।
कोरई गज केशर मौलसिरी, मन हरत सदा सबके छिनमाँ ॥२॥
गुलाबास गुलसब्बो गेंदा, गुलखैरा छबि काननमाँ ।
गुलमेंहदी फूली गुलतरंग, गुल्दावलि गुल्फ गुलाबनमाँ ।
नवपल्लव झूमि रहे सजनी, पद्माकर बृंद तड़ागनमाँ ।
छाई कुसुमाकरि निकरि धूरि, रस लेत मनोज वितानमाँ ॥३॥
सब बाल-गोपाल सँगात फिरैं बिहरैं जमुनाके कगारनमाँ ।
सोरई मिलि झुंडन झुंड फिरैं, उचरैं हरिहरी तराननमाँ ।
सुरनारि निहारि रहीं चढ़िकै, निज ऊपर जाय बिमाननमाँ ।
शिवनारायण पारब्रह्म प्रभु प्रगट भये गोपी गणमाँ ॥४॥

७१

अब सुनौ फाग बंशीधरकी ॥
बंशीधर रामहि संग लिये हैं, इत राधा ललिता चटकी ।
उत बाल गोपाल तानसों गावत, तान सुरन सोहै जमकी ।
डफ-झाँझ-मँजीर-तँबूरनमें, तहँ उभरत ताल सितारनकी ।
जहँ छमकि ताल मिरदंग बजे, औ सुधि नहिं गोपिनको तनकी १॥
अगर-तगर-केशर-चंदन-रँग, बने धरे भरि-भरि मटुकी ।
जहँ चोवा चंदन और अरगजा झोरिन भरे पीत पटकी ।
धरि लीन्हीं आय गुलाब कसी, परि गई वोर नागर नटकी ।
कंचन पिचकारी भरि भरि मारी, अटकी प्रीत पुरातनकी ॥२॥

धरि धीरज वृषभानु लाड़िली, कान्ह कुँअरको धरि झटकी।
मुरली कर छीनि लई ललिता, सुधि भूलि गई नागर नटकी।
खटकी यह बाल गोपालनको, बृज लालनको धरिकै झटकी।
अँटकी सुचि श्याम सनेहनमें, तब उठी राधिका हैं।
चटकी ॥३॥

अब उड़त गुलाल चहूँ दिशि केशर, मारत हैं सबके मनकी।
उनकी छबि कौन बखान सकै, तब कृष्ण गोपियनको हरकी।
जामा उर माल पाग सारी, लट घूमि रही लटपर लटकी।
तबहीं मन देखि बिचारि गजाधर, सबै गोपिका हैं मटकी ॥४॥

७२

गोपी गोपाल ख्यालैं होरी।

बाजैं मुरचंगैं मिरदंगैं, चंगैं करतालोंकी जोरी।
शंखाधुनि बाजै बेला राजै, राजै नंदराव जोरी।
घंटा घहराने कोटि नगारे, इकतारे अनेक जोरी।
मौहर बिच बेनु झाँझडफ बाजै, तड़क तान ढोलक तोरी ॥१॥
चोवा चंदन बंदन बुलाक, औ जौ जमात केशर घोरी।
कंचन पिचकारी भरि भरि मारी, एक न हारी बृज गोरी।
एकै रँग बोरी अंगन गोरी, एके मुखन मलैं रोरी।
ब्रज बालगोपाल अनेक सबै, अंबीर गुलाल भरें झोरी ॥२॥
एकैं ब्रजनारी पहिरे सारी चोवा रंग सुरँग बोरी।
पायल पग बाजै नूपुर छाजै, कनक-मूँदरीकी जोरी।
हीरामनि माल हार दलकै, छलकै बुलाक बेसरि जोरी।
बेंदी सिर सोहै मुनिमन मोहै, चितवत चित्त करैं चोरी ॥३॥
एकैं मृगनयनी गावैं गमकैं, लपकैं चटकैं चटगोरी।
एकैं हैं चंचल खोले अंचल, बैठि रहीं तकितकि गोरी।
एकैं झिझकोरैं धरि पट खोलैं, एकै मुखन मलैं रोरी।
ऐसे शिवराम रच्यो बृजमें, खेलैं राधा-माधव जोरी ॥४॥

७३

बृंदाबन आज्ञु मची होरी ॥
मज्जन करन चलीं बृज-बनिता, सखिन साथ राधा गोरी ।
धरि चीर निकट यमुनाके तीर, सब सखी करैं मिलि
झकझोरी ।
जहँ उठैं कलोल मथत कालिंदी, एक एक सन कर जोरी ।
छिप रह्यौ लताकी ओट श्याम, लै गयो चीर करिकै चोरी ।
औ गयो कदमकी छाँह बाँसुरी, अधर धरी सब सखी कहैं ।
सुनु मान कान्ह बिनती मोरी ॥१॥
घरघरते निकरीं बृजबनिता, सब सखिन साथ राधा गोरी ।
श्रीकृष्ण नंदको लाल साँवरो, ग्वाल सखा उनने घेरी ।
गावैं गोपाल सुर तान माधुरी, निरखत गोपिनकी ओरी ।
बाजे मृदंग नाचैं बृज बनिता, सखिन साथ राधा गोरी ।
रँग छिरकैं केशर औ अबीर, पग चीर पाग रँगमें बोरी ।
हरि डारेव रँग राधिका ऊपर, राधा मुखन मलैं रोरी ॥२॥
दधिकी मटुकी सिरपर धरिकै, दधि बेंचनको ग्वालिन निकरी।
पहिरे कंचनके आभूषण, ओढ़े सुन्दर रेशम-सारी ।
कहुँ वर्षा अतर-सुगंधनकी, कहुँ बाँह गहैं अंचल पकरी ।
सब सखी कहैं सुनरी यशुदा, गोपाल लाल मटुकी फोरी ।
हम छाँड़ि देब ब्रजको बसिबो, हठ करत साँवरो बरजोरी ॥३॥
अति छबि छाजे बेला राजे, राजे नंदराव जोरी ।
सब सखी कहैं सुन री यशुदा, गोपाल राधिकाकी जोरी ।
ऐसो शिवराम भयो ब्रजमाँ, देखौ राधा माधव जोरी ॥४॥

७४

मग रोकत नारि परारि छैल, नँदके हो अनोखे तुम दानी ॥
रहत छिपे निज कुंजलता, बनिता बनि देखि बनै ठानी ।
सब बालगोपाल गरेरत हौ, हितकी तुम्हरे हम सब जानी ।
अबै बाल लला दिन चारिकी हौ, कछु प्रगट भई है नई ज्वानी ।
नृप कंसको शंस करौ मनमें, लै दूधसे दूर करौ पानी ॥१॥

हम आवत हैं नितही इतही, उठि भोरहि रारि रहौ ठानी।
हठि गागरि धूरि भरो हँसिकै, न करौ कछु बातहुकी कानी।
तुम काह सिखी यह रीति कछू, सिखहू न दई यशुदा रानी।
मन भावत बात बताओ कहा, क्या समुझी सूनि राजधानी॥२॥
नहिं लादत लौंग सुपारी गरी, नहिं दाख छोहारन पिस्तानी।
केसरि कस्तूरी जावित्री, नाहिं सालम्ब अनार मनै मानी।
किसमिस अखरोट अँगूर नहीं, नहीं छोटि इलाचि बड़ी खानी।
हरदी हर मूसर सोंठ नहीं, तुम नाहक करत परेशानी॥३॥
दधि बेचत हैं हम गौअनको, औ चरावत हैं लै इतै आनी।
कछु दूरि बसैं न कहूँ हमहूँ, वृषभानु पुराकी हवैं थानी।
तुम गोकुल ग्वालके धोखे रहो, हम देखे हवैं जे तुम्हैं सानी।
शिवनारायण हरि मटुकि पटकि, कहु काहू बतावत ये बानी॥४॥

७५

मोहन छाँड़ि दियौ माथनिया॥

तुमका मोहन गुड़ लै देबै (२)। जौ घर अइहैं बनिया॥१॥
हाथनकी पहुँची लै देबै (२)। पाँयनकी पैंजनिया॥२॥
काननके कुंडल लै देबै (२)। कम्मरकी करधनिया॥३॥
सूरश्याम मोहनकी लीला (२)। कहैं जसोमति रनिया॥४॥

७६

वृषभानु लली अलबेलि अली, सँग जात चली यमुना॥
जलको॥

गजमोतिनकी इंदुरी चमकै, शिर गागरि कंचनकी धरिकै।
जरवफ्तकी सारी जड़ाव जड़ी, लहरी गहरी छहरी अड़िकै।
नौरंग दुकूल सुरंग लता, नग अगनित कौन सकै गनिकै॥१॥
शुभ अन्नन चारु चरे फफ चंचल पूरनचंद छटा हरिकै।
द्युति दामिनिसी निकसी घनसे ममते सकुचानि अली अनिकै।
पग जावकसे झुलकैं झमकैं गति पायल मंद रही ररिकै।
मन यही उछाह मिलैं मनमोहन, मोंहि अकेली अंक भरिकै॥२॥

खोज दुराये रहे ब्रजबाल, गोपालके संग युथा करिकै।
औ आवत देखि भलो बनवीथिनि, प्यारी लतान रहै लरिकै।
चहुँ ओर अचानक घेरि कह्यौ, अब जाहु न बेलि लली टरिकै
औ शिवनारायण रंगगुलाल, गुमानसे बोरि दियौ जुरिकै॥३॥

७७

रँग बरसै लाग-रँग बरसै लाग, भीज सखिनका चिरवा॥
केहिके हाथ केंवल डफ बाजे (२)। केहिके हाथ मँजिरवा॥१॥
रामके हाथ केंवल डफ बाजे (२)।लछिमन हाथ मँजिरवा२॥
केहिके हाथ कनक पिचकारी (२)।केहिके हाथ अबिरवा॥३॥
रामके हाथ कनक पिचकारी (२)।लछिमन हाथ अबिरवा४॥
केहिका चीर रँगा केसरसों (२)।केहिका पाग अबिरवा॥५॥
सीता चीर रँगा केसरसों (२)। भारत पाग अबिरवा॥६॥

७८

हरि संग रहै सोई जानै। हमरा मन ऊधौ ना मानै॥
बंशीबट निकट बिकट बृंदाबन, गावैं ताल विरह तानैं।
बिरहिनि सुनि तान तयार भई, जिय धरैं न धीर गेल छाड़ें।
अपने अपने पति छाँड़ि चलीं, अब त्यागि चलीं बृजकी नारैं१॥
अरु गहि पकरैं छाँड़ैं न डरैं, कहुँ-कहुँ कुठार बस्तर फारें।
सिसकैं मुख मोरि चितै धरनी, सखियाँ कहैं श्याम सुनो।
बिनती।
बिनती कैकै बसिमाँ डारैं। ऐसे बृजराज हमैं वुइ ऊधौ-॥
रैन बीच छलिकै छाँड़ैं॥२॥
तन विकट चाल, लोचन विशाल, गल हृदय माल, कुंडलकी
झलक पर छबि छाँड़ैं। मधुरी सी हँसन, तिरछी
चितवन, कुच कच्चे अधर गहिकै तानैं॥३॥
जब नैन मिरोरिके रोय रहीं, मुख पोंछि पितंबरसे तारैं।
अरझैं दुलरी तिलरीके पेंच, पौ बेंदी भाल कुटिल हालैं।
शिवराम कहैं जल थल है बैठि, तीनिलोक पति ना जानैं॥४॥

७९

बिंद्राबन मोहन दधि लूटी ॥
कहाँ गिऱ्यौ हार, कहाँ नकबेसर, कहँ मोतियनकी लर टूटी१॥
मथुरा हार, गोकुलै बेसर, कुंजा गलिनमाँ लर टूटी ॥२॥
बरजौ यशोदा अपने लालको, झकझोरत मटुकी फूटी ॥३॥
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरसको, सर्वस दै ग्वालिन छूटी ॥४॥

८०

श्रीकृष्ण-चरणकी बलिहारी ॥
भादौं केरी जन्म अष्टमी, कौंधा लपकै लहकारी ।
जब पाँयन केरे कटे पैंतरा, हाथनकी खुलिगै बेड़ी ।
तबहीं बसुदेव लिवाय चले हैं, करि गोकुलकी तैयारी।
जौ आगे जाँय तौ सिंह दहाड़ैं, पाछे कालिया फुफकारी ।
जब जमुना नीर तरंगै बाढ़ीं, तब प्रभु दीन्हेव हुंकारी ।
बालक रहा सो गोकुल पहुँचा, अब तुम करौ खबरदारी॥१॥
तनतन तनिया, बड़े चिकनिया, पैंजनियोंकी झनकारी ।
टोपी सिर सोहै सब जग मोहै, मोहि रहे नर औ नारी ।
घुँघुवारे बारे खेलैं दुवारे, जसुदा वारनकै हारी ॥२॥
गैया ना छोरिहौं कलेवा ना करिहौं, पैंया परत हौं महतारी।
तब उठीं जसोमति गईं पटवाघर, जनम जनमके ब्योहारी ।
एक सोने टकौरा तोंहि देहौं पटवा, गेंद बनाव साँचे ढारी ।
जब खेलत गेंद गिऱ्यौ जमुनामाँ, जाय जगायौ खंधारी ।
तब चपक चपक चंदन लपटानी, नागिन बिनती कै हारी ।
जब नाग नाथि बाहेर लै आये, हँसे ग्वाल बाजी तारी ॥३॥
जमुनाके नीरेतीरे बजै बधैया, गोपिन संग राधिका मैया ।
जस तारा बिच उवै जोंधैया, बाजै ताल तानसुर साधे ।
तीनि लोकमाँ शब्द सुनैया, गृगतान गृगतान-
तधौ-तधौ तान, नचै कन्हैया दै तारी ॥४॥

सिर टोरी सोहै चुनेदार, मुखजार बंद पहुँची न्यारी।
तहँ बिच बिच सोहै चुनेदार, जब ललित पलित परिवर वारी।
एक नखशिख चितवैं, न मिरौरैं, हरितन चितवैं नथवारी॥५॥
माथेमाँ चंदन अग सुगंधन, जगबंदन हैं बनवारी।
मोतिनके माला गले दुशाला, नँदलालाकी छबि न्यारी।
गोपिनमाँ राजैं मुकुट बिराजै, बजै मुरलिया अति प्यारी॥६॥
माथेमाँ हीरा मुखमाँ बीरा, सुघर शरीरा खँधारी।
गौवनके पाछे कछनी काछे अच्छे आवैं बनवारी।
मोरमुकुट मकराकृति कुंडल. तिरछी चितवन है प्यारी॥७॥
एक समय हरि कदमके नीचे, खड़े हते गिरिवर धारी।
जहाँ सवा बिलस्त बाँसका चोंगा, तामें छेद किह्यौ चारी।
जब धरि ओंठवनपर कहर किह्यौ, तब मोहि उठीं ब्रजकी।
नारी॥८॥
सिंगासनते उठे रामजी, चोवा चंदन लै थारी।
जब दुर्बल गात सुदामा आये, गौतम नारि सिला तारी।
तब सूरश्याम वाही मनमोहन, छिनमाँ हरैं बिपति भारी॥९॥

८१

मुरली ना बजायौ नंदालाला॥
काहेकी तोरी मोहन मुरलिया, काहेका मुरचंगा भला॥१॥
हरे बाँसकी मोहन मुरलिया, लोहेका मुरचंगा भला॥२॥
कै स्वर बाजै मोहन मुरलिया, कै बाजै मुरचंगा भला॥३॥
नौ स्वर बाजै मोहन मुरलिया, दस बाजै मुरचंगा भला॥४॥

८२

रँग रचे कृष्ण गोकुल महियाँ॥
बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ, और मँजीरा सहनैया।
पढोल पखावज संग लिहे, मुरचंग बाँसुरी सुरसैया।
इत धुधकत् धुधकत् धृगत् धृगत् दुदुमक दुदुमकके गिरकैया।
इत छुम्मक छुमकके ताल उठै, श्रीकृष्ण नचैं दे थिरकैयाँ॥१॥

उठत तरंग तानकी झुमकन, नूपुर जेवर पैंजनियाँ।
कोइ गावत ताल तान सुर साधे, सरस रागकी धुनि महियाँ।
सुनि पंछी शोर मचाय रहे, उड़ि जाँय लसैं वृक्षन महियाँ।
बनकी गौवैं सब मोहि रहीं, छबि देखि मुकुटकी परछैयाँ ॥२॥
नाचत गावत चले कन्हैया, वाही कदमनकी छैयाँ :
उत राधा गोपी संग लिहे, आवत देखिन कुंजन महियाँ।
सुनि शब्द राधिका छकित भई, जब आय मिलीं चाचरि महियाँ
इत छुमुक-छुमुक थिरकत-थिरकत, हँसि जाय गहीं उनकी॥
बहियाँ ॥३॥
उड़े गुलाल लाल भे बादर, रंगकी शोभा अधिकैयाँ।
पै ऐसो रूप कृष्ण राधाको, देखि देवता हरखैयाँ।
आनंद मगन ह्वै फूल बरसावत, करत दंडवत मन महियाँ।
इत लछिमन लाल कहत होरी, जब धरे ध्यान हिरदय॥
महियाँ ॥४॥

८३

बरषाके बूँद गिनौ गोइयाँ ॥
जेठ तपै दिनरैन, असढ़वामाँ गरजि-घुमरि बरसै गोइयाँ।
सावन परे हिंडोल कृष्ण कुबरी सँग झूलि रहे गोइयाँ ॥१॥
भादौं गरू गँभीर, क्वार बन मुरिला कुहुकि रहे गोइयाँ।
कातिक पख उजियार, चंद्रके तारा छिटकि रहे गोइयाँ ॥२॥
अगहन अगम अँदेस, पूसमाँ बरत रहयूँ हरिके गोइयाँ।
माघै मकर नहाय, श्याम इक पतियौना पठई गोइयाँ ॥३॥
फागुन उड़ै गुलाल, चैत बन टेसू फूलि रहे गोइयाँ।
सूरदास बैसाखै मोहन, बहियाँ आनि गही गोइयाँ ॥४॥

८४

बन फूलि आईं चम्पा-चमेली-कली ॥
चम्पा चमेली गुलाब गुलमेंहदी, डारि कचनारकी फूली फली।
तापर बहै पवन पुरवैया, मंद मंद आवैं सुगंधैं भली ॥१॥

अली घर गई छड़ी इक लीन्हे, गले पड़ी मोतिनकी लड़ी ।
अगर-तगर चंदन अस महकै, हँसि बोली मुसकयानी ललीं॥२॥
गोरी सब गई फूलफल बीनैं, एकै सुभाव परभावकी भरीं ।
करैं किलोलैं गोविंद मन भावैं, आसैं सुवासैं प्रवासैं भली॥३॥
मैं जमुनाजल भरन जात रहूयुं, बिंद्राबनकी धोर गलीं ।
कहैं शिवराम मार्गमां मिलिगा, नंदा रँगीला छबीला छली॥४॥

८५

बृंदाबन खेलैं बनमाली ॥

मुकुट शीश कटि कछनी काछे, श्रवणन कुंडल अरु बाली ।
औ जगमगात तन द्युति पीताम्बर, लसत झँगा चौतनि जाली ।
औ लाल प्रवाल माल हिय राजत, धरे कलँगि रतनन वाली ।
गज मोतिनकी झालरि लागी, औ हलत चलत गज गति हाली १॥
सब बालगोपालन संग लिये, मिलि करत अतिव कौतुक ख्याली।
बन चकित जीव सब अवलोकत, तन सुरति रही हिरदय शाली।
द्रुम बाल लतान वितान बनावत, तरे बिछावत तरु छाली ।
तहँ लुकत फिरत शिशुगण समेत, धरि छुअत मुदित बाजै
ताली ॥२॥
बहु भाँतिन कौतुक करत कृष्ण, लखि मुदित सुरन उर
खुशियाली ।
कहुँ गेंद बनाय झिकत यमुना, जहँ रहत गरलधर है काली ।
चढ़ि कदम द्रुमन फाँदत सखान, सँग ढंग अनेकन प्रतिपाली ।
इक ओर खड़े चुपके तहवाँ, देखत राधा संगै आली ॥३॥
गहि करत परस्पर रंग-ढंग, धरि अधर सुस्वर बंशी घाली ।
भल नचत शिशुन मधि थिरकि तता थेइ, ठुमुकि ठुमुकि
ठुमठुम चाली ।
बहु लचकि मचकि नागरेहि देखावत, खड़ी तहाँ झुंडन ग्वाली।
लखि श्यामरूप नँदनंदनका, द्विज नंद नागरी सुखशाली॥४॥

८६

आयो बसंत बनमें सुरंग ॥

उमगे उमंग बृजराज लाल, घूमत गोपाल सब बाल संग ।
कहुँ सघन बेलि चमकत चमेलि, अलबेलि केलि धुनि करत भृंग।
बर सरस कुंज शोभाके पुंज, घन विकसि गुंज रचि रहे रंग।
सेवति अनार कचनार झरे, बिकसे बहार जनु अमित रंग॥१॥
चहुँ ओर शोर कोकिल चकोर, चितचोर मोर बोलत विहंग ।
कहुँ कीरबीर धुनि करत धीर, शीतल समीर सुरभित तरंग ।
कहुँ ताल शाल रंजित तमाल, बिच कुंज लाल बिहरत कुरंग।
रहि अबिर धूरि छबि पूरि भूरि, लखि लता ललित
लचकत अनंग ॥२॥
देखत अनंद बृजचंद नंद, सुत सखा वृंद गावत सुढंग ।
तन त्रिका-त्रिका तत् तुथुंग तुथुंग, थेइ करत निरत बाजत-मृदंग।
झुनकरत झाँझ मनहरत साज, अद्‌भुत समाज उछलत उपंग।
शिवनारायण भनत कहत, कछु बनत नहीं कवि मन उछंग॥३॥

८७

परीपरी अबीराकी मार, बिरजमाँ भूला हमारा काँधैया॥
कै मन अबिरा उड़ै बिरजमाँ(२)। कै मन उड़ै गुलाल ॥१॥
नौ मन अबिरा उड़ै बिरजमाँ(२)। दस मन उड़ै गुलाल ॥२॥
केहिकै चूनर भीजै बिरजमाँ (२)। केहिका भीजै पाग ॥३॥
राधाकी चूनर भीजै बिरजमाँ(२)।कान्हाका भीजै पाग ॥४॥

८८

अस कान्हकी धूम मची ब्रजमाँ ॥

केसर रंग और घृत-माखन, दधि और दूध पड़े तिनमाँ ।
जहँ अतर गुलाब केवड़ा केसर, उड़त गुलाब फुहारनमाँ ।
जहँ एकवर रंग लिए चंद्रावलि, राधा ललिता कुंजनमाँ ।
कोई कामधेनुको छीर लिए, कंचनकी मेट लिए सिरमाँ ।
कोई अमृत केरो दावन दैकै, लै छिनकौ तोरी कामरमाँ ॥१॥

जो गोरस रंग ऊपर डारौं, अतर मलौं तोरे जोबनमाँ ।
औ जयजयकार देवता बोलैं, जो लिखि राखौ बेदनमाँ ।
जहँ शिवशंकर ब्रम्हादिक ध्यावैं, तौन सुनैना काननमाँ ।
है तू ग्वाल अजान सदाकी, क्या जानैं मानुस तनमाँ ॥२॥
शिवशंकर ब्रह्मादिक ध्यावैं, गौवैं चरावैं जंगलमाँ ।
जहँ मातपिताकी खबरि रहीना, बेड़ी परि गई पायनमाँ ।
जब जाय सिलाबन तुम्हैं छिपायौ, तब बचि आयौ भादौमाँ ।
औ थोरेसे गोरसके कारन, माता बाँध्यौ ऊखलमाँ ॥३॥
जमला अर्जुन वृक्ष टारिकै कूदि पड़े काली दहमाँ ।
जहँ कालीको नाथ सनाथ कियौ जब पुष्प लदायौ जैपुरमाँ ।
जहँ कुबजा पीरमल्ल दोउ मोर, कंस पछारेव धरनीमाँ ।
औ उग्रसेनको राज सौंपिकै, सूर सराहौ मथुरामाँ ॥४॥

८९

रचि रह्यौ फाग बृंदाबनमें ॥
मुरचंग मृदंग औ झाँझ डफा, खँझरी उमंग गुमकारनमें ।
सारंग सितारनकी झमकैं, लमकैं करतालकी तालनमें ।
बीणा सुरोद बंशीकी तान, मन हरत सदा सबको छिनमें ।
बेला एकतारे नगारे घने, सुरको बितान पूरण घनमें ॥१॥
द्रुम बेलिनमें लिपिकै छिपिकै, भ्रमरै भ्रमरा गुलजारनमें ।
रँगरंग बिहंग रमैं बिरमैं, मृग हंस सुतान कगारनमें ।
ऋतुराज बसंत को साज सज्यौ, जनु मालति बकुल ।
बहारनमें ।
टेसूकी गरद भे जरद पंथ, जोहत पंथक अपने मनमें ॥२॥
नौ गोप नवेली संग सहेली, अलबेली अनियारनमें ।
लै लै पिचकारी रंग सँवारी, सुरनारी चढ़ि याननमें ।
औ बनि सब आईं परम सोहाईं, लै गुलाल गुलखासनमें ।
रहि अमिर धूरि छबि पूरि भूरि, चुभि गयो रंग सबके ॥
तनमें ॥३॥

लै लै पिचकारी कुंजविहारी, सखा हँकारी साननमें ।
लै संग सिधाये सब जुरि आये, धार दई कुच कोरनमें ।
चोवा चंदन बंदन गुलाल, अति रोरि उड़ी भरि झोरिनमें ।
शिवनारायण ब्रजलाल श्याम, अस करत खेल गोपी ॥
गणमें ॥४॥

९०

मन बसो मोर राधाबरसों ॥

वेद सदासों ध्यान न पावैं, धरैं ध्यान चतुराननसों ।
सनकादिक नारद भजेव ताहि, करिकरिकै योग सनंदनसों ।
औ यहु अविनाशी पारब्रह्म, जेहि गावत बेद सहस मुखसों ।
जब श्रीवैकुंठ धामसे आयो, रच्यौ रहस गोपी गणसों ॥१॥
प्रहलाद उबारेव खम्भा फारेव, गजपति राखिव बूड़नसों ।
जहँ अजामील सनकादिक सेबरी. राजा किह्यौ बिभीषणको ।
जब मध्यसभा द्रुपदीको हरिव, चीर बढ़ायो टेरेसों ।
औ लक्ष्मीपतिके भक्तहेत, अर्जुन रथ हाँक्यौ निज करसों॥२॥
सुरभी सँग ग्वाल बिलोक लियो, यमुनातट कूल कगारनसों ।
जब दान लियो यमुना दधिसों, गूजरि वृषभानु किशोरीसों ।
जहँ मटुकि गिराय दिह्यौ सिरसों, खायौ दधि माखन चोरीसों ।
जब अका बका द्वै असुर सँहारेव, कंस पछारि दिह्यौ ॥
बलसों ॥३॥
मोरमुकुट चमकै विशाल, मुरली पटपीत पितम्बरसों ।
घनश्यामदास गुरु चपल दरश, मुसक्यान माधुरी बोलनसों ।
बृजनारिनकौ मन मोहि लिह्यौ, चितवत हौ तिरछी कोरनसों ।
काली सुरपतिको मान मथ्यौ, गिरिराज उबारेव जेहि ॥
करसों ॥४॥

९१

अर्जुन मन विकल सुगंध राजहित आज खड़े कदली बनमें ॥
कदलीबन बँधे बसंत फूल फल, आज फबे तन डारनमें।
बोलत बिहंग कुहकत सुमोर, चंपुत सप्रेम चहुँ ओरनमें।
बट ओट मोर करत किलोल, गुँजरत्त भँवर फलफूलनमें।
प्रबिसे तहँ पारथ धीर-वीर, भगवानको ध्यान धरे मनमें।
तोड़ेव निशंक वह बीरबंक, पुष्पन-रक्षक सोचैं मनमें।
हनुमान यती सों जाय कह्यौ, इक बीर आज आयौ बनमें।
धनुहा करमें तोड़ेव क्षणमें, फल फूल न जानि परैं किनमें।
क्रोधित हनुमंत गयो है तुरंत, बोल्यौ शठ काह करै बनमें॥१॥
रघुनंदन-पूजन-हेतु सिवा, नहिं पायो चाहै लड़ौ रणमें।
कौशिलानंद आनंदकंद, गुणगान कियो कपिने क्षणमें।
सुनि वीर धनुर्धर पारथके, क्रोधाग्नि प्रचंड जली तनमें।
औ कंपन लगे अधर पारथके, मानहुँ रूद्र-मूर्ति जनमें।
भ्रूबंक विशाल लाल लोचन, तड़पै बिजुली जिमि सावनमें।
अर्जुन कहैं कीस महा अग्यानी, वृथा बकै अपने मनमें।
नहिं बाँध सके हैं रामचंद्र, तू भूलि रहा जिनके गुणमें ॥२॥
वे दोनों गए सिंधुके तट, भाख्यौ कपि कछु कुस-बंधनमें।
यदि बँधा न सेतु अरे अग्यानी, मारहुँ तोंहि एक क्षणमें।
सुनि कटुक बैन पारथ सकोप, खींच्यो इक बाण सरासनमें।
तब हनूमंत विस्मित ह्वै बोल्यो, धनि पारथ धनु-धारणमें।
यदि तव बाण भार मम रोकै, तेरे साथ रहौं रणमें।
तेरो है केतिक भार पार, संसार हेय जानौं मनमें ॥३॥
हनुमंत संत कोपेव अनंत, गिरि रोमरोम धारेव तनमें।
शत योजन तन विस्तारि दिह्यौ, लखि शंकित भे सुरपति मनमें।
क्रोधित लड़ि रहे परस्पर दोनों, एकसे एक सरस गुणमें।
सुरपति इत ध्यान धर्‍यो मनमें, जनम्यो विशाद दोनों जनमें।
इत पारथ हू न डर्‍यो मनमें, शरमें हनुमान चढ्यो क्षणमें।

प्रण रक्षा हेतु भक्त दोनोंकी, धारेव कमठरूप क्षणमें।
शरमें चढ़ते जानेव कौतुक, भूले विषाद सब दर्शनमें।
लै पुष्पार्जुन गिरिजेश चले, तहँ बंधु मिलाप भयो क्षणमें ॥४॥

१२

वृंदाबन बाग लगाव कन्हैया, अँवरा पूजन हम जाबै ॥
अँवराकी आई बहार कन्हैया, अँवरा पूजन हम जाबै ॥
कौने मास अँवराकी पूजा (२)। कौने भोलानाथ ॥ १ ॥
कतिक मास अँवराकी पूजा (२)। फागुन भोलानाथ ॥ २ ॥
का लै पूजौं आँवरा हो (२)। का लै भोलानाथ ॥ ३ ॥
घिउ गुर पूजौं आँवरा हो (२)। भँगिऐ भोलानाथ ॥ ४ ॥

१३

श्री वृषभानूलली, अली सँग चलीं दुहावन बन गैया ॥
हंस गयंद चाल लखि लाजैं, बाजत नूपुर छहनैया।
झुनकरत कड़ा औ छड़ा बीच, पायन पैंजेबकी छाबि छैया।
नहिं हाथ अलीको इत-उत झूमै, रुकत-झुकत इत उत धैया।
शोभा मुख सागर परम उजागर, हारि गए कवि उपमैया ॥१॥
सारी नीर जरी सो जरी, औ अँड़ी किनारी तहँ मैहयाँ।
कर कंचनकी दोहनी चमकै, लपकै जेवर इतउत धैया।
चंचल गजमोतिनको उघरी, सुघरी जस दामिनि घन मैहयाँ।
छबि बंदन बंदकी न्यारी छटा, सरबंद लखो लखि तुरतैया॥२॥
सब धेनुके यूथ गरेरत हेरत, तिरछी चितवनको रैया।
खरिका बिच मोहन रूप निहारि-निहारि रह्यो लखि तुरतैया।
श्रीकृष्ण कन्हाई लाल सुनौ, तुम गुन आगर हौ सब मैह्याँ।
सुरभी सब देव लगाय हमैं, बड़ी देर न कीजै उपमैया ॥३॥
लै पटकी दोहनी छोहनी, चुपकारि बैठि हैं चुपकैया।
कबहूँ दोहनीमें छाँछ छरैं, कबहूँ मुख भरैं पिय छैयाँ।
कबहू बिचकावत अंत बहावत, सखन पियावत हैं रैया।
शिवनारायण देखत बनि आवै, देखि हँसैं सँगकी गोइयाँ ॥४॥

९४

श्रीकृष्ण रासमंदिर माहीं ।
कं गिर्द कृष्ण घूर्मित प्रसन्न, खंगिर्द ख्याल ख्यालन ताहीं ।
गं गिर्द गुलिल कुमकुम अबीर, घं गिर्द घेरि गोपी लाहीं ॥१॥
नं गिर्द नयन सुंदर किशोर, तं गिर्द ताल तूरेव ताहीं ।
शं गिर्द शेष शारद गणेश, वं गिर्द बंब बोलत ताहीं ॥२॥
सं गिर्द झंझ झंझित मृदंग, पं गिर्द पवन संपति जाहीं ।
थं गिर्द थके सुरपुर विमान, मं गिर्द मगन कछु सुधि नाहीं॥३॥
फं गिर्द फूल गुल्लाल हाथ, धं गिर्द धाम धूमै जाहीं ।
हं गिर्द होरि चहुँ ओर होत, मं गिर्द मोहन शरणै ताहीं ॥४॥

९५

मोंहि बड़ा भरोसा गिरिधारी ॥
दुर्बल गात सुदामा आये, हँसि, पूछैं उनकी नारी ।
जब हरि अस मित्र तुम्हारे स्वामी, तबहूँ न गए पठै हारी॥१॥
तुम तिरिया चतुरंग बावरी, किनने तुम्हारी मति मारी ।
जब कर्म हमारे दरिद्र लिखे हैं, काह करैं वै हितकारी ॥२॥
भारी दान दिह्यौ शिवशंकर, भस्मासुर चाहत नारी ।
तीनि लोक फिरि आये महादेव, तबहूँ न मिले मुकुटधारी ॥३॥
सेतुबंध रामेश्वर थाप्यौ, तहँ पर भीर भई भारी ।
राम-लच्छिमन-भरत-शत्रुहन, हनूमान अग्याकारी ॥४॥
पारबती कस रूप धर्‍यो है, आन मिले प्रभु बनवारी ।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, छिनमाँ दुःख हरैं भारी ॥५॥

९६

हरि रची रँगीली ब्रज होरी ॥
उठत तरंग तालगति थिरकत, बृजबनिता मोहन जोरी ।
डफ बजत ढोल डहकत मृदंग गति बजत छबीली छबि गोरी।
सुरपुरन पुरत रँग जुरत करत, मिलि राग छतीसों झकझोरी ।
इकइस मुरचंग उचास ताल, छबि निरखि तान शंकर गोरी॥१॥

उड़त गुलाल ललित लचकत, पुलकित मुखमंगल मिसरोरी।
केशरको रंग रँगत छिनकत, छिन रहत एक निज मुख मोरी।
हरखत परखत इक भजत धरत, औ ताल बजावत करसोंरी।
पिचकारि धार धुधकरत हरत, रितुराजहुके मन जुरजोरी ॥२॥
चीन्हि न परैं बाल बनिता, बनि रहीं एक-सम सब गोरी।
इक छिपत फिरत मुरकत कसकत, इक धाय बताय देत दौरी।
इक बदन दुरावैं कलसुर गावैं, करन नचावैं बिन ओरी।
शशिसम मुख छाजै लखि रति लाजैं, चितवत चित्त करैं ॥
चोरी ॥३॥
भीजत पट लपटत फटकत फुहकत, औ फुहार चहुँदिशि।
ओरी।
नवनारि नवेली अलि अलकैं अलबेलि खड़ीं चुचुहात खड़ीं
रँगसों बोरीं। पिचकारि सँवारि सहेलि लिये, औ संग लिहे
राधा गोरी। शिवनारायण देखत बनि आवैं, कोविद
कौन करैं होरी ॥ ४ ॥

१७

खेलत बसंत राधा गोरी ॥

बंसी बजाय सुरमुनि रिझाय, रहि सकल छाय धुनि घनघोरी।
सखि सुनि सवाल शृंगार साजि, गईं छोड़ि लाज कुंजन ओरी
सुंदर शरीर है ललित चीर, जोबनकी भीर भामिनि भोरी।
जेवर नयाब अरु माहताब, करतीं सिताब चितकी चोरी।
इस कदर हाल लखि नंदलाल, लाई गुलाल भरि भरि ॥
झोरी ॥१॥
बाजत मृदंग करताल चंग, सब रागरंग होतीं यामिनि।
गातीं खमाच कोई रहीं नाच, जोबनकी माच दमकैं दामिनि।
सखि नवल श्याम नवला तमाम, शीरीं कमाल करतीं कामिनि।
हरी सखा संग चारों उलंग, भई अंग-अंग सब सरबोरी॥२॥

आती हैं झपटि जाती हैं लपटि, छबि निरखि मुकुट मोरन पखियाँ।
मलतीं गुलाल गोपाल-गाल, करतीं कमाल सारी सखियाँ।
किरपानिधान हम धरे ध्यान, सुंदर सुजान सूरत लखियाँ।
बृजराज काज लखि सुख-समाज, भई सुफल आज सुंदर अखियाँ।
अरु नाज अदा दिल बसै सदा, होती हैं फिदा गातीं होरी ॥३॥
आनंदकंद फरजंदनंद, बरसंद छंद शोभा भारी।
अबला अनूप सुन्दर सरूप, लखि छाति धूप छबि उजियारी।
कुंकुमे हाथ रँग लिहे साथ, गोपिनके नाथ भरि पिचकारी।
रंगन घोराय लाये अबीर जमुनाके तीर इत बनवारी।
मचि रही धूम जाती हैं झूमि, मुख चूमि चूमि मलतीं रोरी॥४॥
आनंदमूल जमुनाके कूल, सुर लगे फूल करस बरसन।
जै जै कृपालु हूजै दयालु सुरपति निहाल कवि मनीराम।
पंडित सुजान छँद हैं तमाम जिनके रोशन।
कवि कहै मनेश किरपा महेश, करते हमेश देते दर्शन।
गा रहें भजन भगवतकी शरन, जब गहे चरण गाते होरी॥५॥

९८

बृजमोहन आजु खेलैं होरी ॥
बाजैं डफ ढोलक बीन तार, तम्बूर सितारनकी जोड़ी।
मुरली मुरचंग शंख शहनाई, वेणु पखावजकी जोड़ी।
खँझरी करताल झाँझ मंजीरा, मनो मेघध्वनि गरजोरी ॥१॥
ठुमरी ठप्पा सोरठ बिहार, कहुँ ख्याल लावनी औ होरी।
धुरुपद तिल्लाना कहैं रेखता, गरज-परज गावैं जोरी।
ध्वनि पूरि रही है काननमें, चहुँ ओर खड़े देखैं गोरी ॥२॥

इतते श्यामसखा लै धाये, उत आईं राधा गोरी।
कंचन पिचकारी भरि भरि मारी, लिहे रंग झोरी-झोरी।
जहँ अबिर गुलाल कुमकुमै केसर, मचो कीच थोरी ॥
थोरी ॥३॥
फगुआ लियौ मँगाय श्यामसों, कहैं राधिका करजोरी।
शंकर सुर शष महेश शारदा, चढ़ि विमान देखन दौरी।
औ कृपा करौ करजोरि कहैं, शिवदीन शरण चाहौं तोरी ॥४॥

९९

श्रीकृष्ण बिना होरी को खेलै ॥

फं फ्रगदका फागुन फागु सखी, बं ब्रगदको ब्रजमें को बोले।
गं ग्रगद गुलाब चहुँ दिशिमें, मं मृगद मूठि भरि को मेलै॥१॥
टिमटिम-टिमटिम बोलै मँजीरा, खैं-खैं बोलैं करतालै।
जब दादुर बचन तँबूरा बोलै, सन्नन्-सन्नन् सारंगी।
जहँ लाज-शरम तुम सबकी राखौ, चरण शरण भरि को
बोलै ॥२॥
तं तृगद ताल बाजत मृदंग, कं कृगद किशोरी भरि झोरी।
नं नृगदको नंदन बनवारी, मं मृगद गोपिकन सँग खेलै।
सं सृगद श्याम वर्षा मचाय, दं द्गद देव जय-जय बोलै॥३॥
गं गृगद गेंद यमुनामें गिर्यौ, सं सृगद श्याम कूदेव जलमें।
फं फृगद फनै फहरात कृष्ण, कं कृगद कालिया फन खोलै।
तं तृगद तहाँपर बहुत देर, सं सृगद सहस फनपर डोलै॥४॥
नं नृगद नागको लियौ नाथि, दं द्गद देव जै-जै बोलै।
बं बृगद बिरजमें अति अनंद, नं नृगद नंद सुखमाँ डोलै।
सं सृगद सूर होरी बनाय, कं कृगद कृष्ण गोपी खेलै॥५॥

१००

मोहीं गोपी सुनि मधुर तान ॥

बंशी बाजो रव सुर साजी, तब सब बनिता सुनि भईं बेहाल।
ब्रजकी सब नारी भवन बिसारी, धाय चलीं गति मदन चाल।

तनकी सुधि नाहीं खोजत जाहीं, इतै खड़े दोउ नंदलाल।
हरिको सब टेरैं चहुँ दिशि हेरैं, तरु पल्लव छिपिगे गोपाल।
सुनिकै मन मौन भयो तरुवरतर, बैठि झँकाई देखि कान॥१॥
प्रगटे बनवारी देंह सँवारी, दीन गिरा सुनिकै कृपाल।
देखैं बृजराजे मुकुट बिराजे, अरु केसरिको तिलक भाल।
सोहैं सिर अलकैं कुंडल झलकैं, तन साँवर लोचन विशाल।
पीताम्बर धारी देंह सँवारी, मुख मुरली गल मुक्तमाल।
छबि देखि सखी नटनागरकी, मानौं हिय लागे मदनबान॥२॥
मोहन मुसकाने मन सकुचाने, गोपिनसे बोलैं पुकारि।
हमरी कहि मानौं हेतु न जानौ, तुम हौ परपुरुषनकी नारि।
अपने गृह जाओजनि यहँ आओ, सोचि रहीं प्रभुको निहारि।
बोलीं मृगनैनी पिककी बैनी, प्रेम-भरीं बहै नयन बारि।
तुम्हरी शरणागत आय गईं, हमरे पति हैं गोविंद सुजान॥३॥
ब्रजकी सब गोरी दोउ कर जोरी, अर्ज करैं सुनु हे दयालु।
राधा महरानी कह मृदुबानी, शोक हरो प्रभु है कृपालु।
बंशी ध्वनि कीन्हो मन हरि लीन्हो, हमसे बोलौ प्रणतपाल।
हे हे यदुनायक हौ सब लायक, करौ बेगि हमको निहाल।
सबके तनकी तुम ताप हरो, कहैं विश्वनाथ परिहरि गुमान॥४॥

१०१

अलि लगी सलोनेसे अँखियाँ॥

चंदन बंद अनंदकंद जगबंदन चंदन राधाबर।
कर शंख चक्र दश पद्म् भाल, पीतांबर अंबर भृगट पाल।
यह निरखि गोपाल हृदय रसिया॥ १॥
मनभावन मनमोह निरंजन, कृष्णकला संशय दुख भंजन।
चंचल चपल चतुर गुण चीन्हा, मुरली मनोहर मन हरि लीन्हा।
कल न परै दिन औ रतिया॥ २॥
जमुना किनारे गौवें चरावैं, गोपी ग्वाल सबै मिलि गावैं।
जो रस ब्रह्मा स्वाद न पावैं, सो रस राधा गली बहावैं।
मोरपंख शिर, चक्र बिराजे, वह मूरति हिरदय रसिया॥३॥

धन्य धन्य गोकुलके बासी, जिनके संग चले अविनाशी।
सुरनरमुनि सब लावैं मेवा, देव दैत जेहि त्रिभुवन सेवा।
सूरश्याम छबि कहँ लगि बरणौं, भृगपति लात हनी छतिया॥४॥

१०२

सावनघन गरजै घूमि घूमि। शीतल जल बरसै झूमि झूमि॥
कोयल कीर कोकिला बोलै, हंस चकोर चहूँ दिशि डोलै।
नाचत बन अति करत किलोलै, मोर-मोरनी झूमि-झूमि॥१॥
कंचनकेर हिंडोला झलकै, रेशमपाट मढ़े मखमलके।
चुन चुन कली बिछौना चमकै, कली कली दल तूमि-तूमि॥२॥
चलत समीर त्रिविध पुरवाई, मंद सुगंध महा छबि छाई।
झूलैं जनकसुता रघुराई, बाल झुलावैं झूमि-झूमि॥३॥
गावैं रागरागिनी भामिनि, दमकि रही मानौं घन दामिनि।
झूटा देत नारि गज गामिनि, पायल बाजैं छूम-छूम॥४॥

१०३

गिरिधारीलाल-गिरिधारीलाल, नखपर गिरिवर गिरा धरे॥
लागी नखत रोहिणी हो; मेघवै झरि कीन (२)
ता दिन जन्म कन्हैया; भादौं की रात (२)
बेड़िया कटि गईं वसुदेव; खुलि गए किंवाड़ (२)
लैके सुपलिया चलि भे; गोकुलको जांय (२)
जमुना चरणन उमहीं; वसुदेव डेर लाग (२)
ठाढ़े जमुनपर सोचैं; हूकी मारा कन्हैये हो, थाहिल ह्वै जाय (२)
—नखपर ० ॥१॥

इन्द्रलोक वर्षा भइ हो; जल गयो पताल (२)
बूड़तते ब्रज राख्यो; जसुदाके लाल (२)
बेला भी फूली चमेली; चम्पा बौराय (२)
फुलवा टूरै मलिनिया; गुहि लावै हार (२)
बैठे जसोदाके अंगना; सखियन पहिराव (२) नखपर० ॥२॥
हरे पंखके सुगना हो; उड़ि जाहु अकास (२)
गोकुल गाँव अनाड़ी; जहँ बसैं अहीर (२)

चंचल नारि गुजरिया; दधि मथैं अहीर (२)
बैठे कदमकी छइयाँ; मुरली घनहोर (२) नखपर ० ॥३॥
मथुरा केरि गुजरिया हो; दधि बेंचन जाँय (२)
बीचमें मिले कन्हैया, दधि लिह्यौ छिनाय (२)
बैठे कदमकी सेजिया; सब ग्वाल बुलाय (२)
छीनि छीनि दधि खायो ॥ गिरिधारीलाल ० ॥४॥
साँवल खेलैं होरी हो; अपनी ससुरारि (२)
हाथ लिहे पिचकारी; रँग उड़ैं गुलाल (२)
रँग गई कोठा अँटारी; चंदन चौपारि (२)
आधी धार मथुरामाँ; बादर भे लाल (२) नखपर ० ॥५॥

१०४

मोहन नँदलाल-मोहन नँदलाल, बरसाने कब अइहौ ॥
बरसाने कब अइहौ हो; अपनी ससुरारि (२)
हाथ कनक पिचकारी; रँग भरे गुलाल (२)
रँग गईं कोठा अँटारी; रँग गई चौपारि (२)
रँग गईं साली सरहजैं; सब लालै लाल (२)
लाल धार भई नदिया; बदरा ह्वैगे लाल (२) बरसाने० ॥१॥
ऊँच घाट जमुनाकर हो; कालिंदी तीर (२)
सखिया पूछैं ऊधौसे; कहँ गए रघुबीर (२)
बेला भी फूली चमेली; चम्पा कचनार (२)
फुलवा टूरैं मलिनिया; गुहि लावै हार (२)
हरवा पहिरि यशोदानँद; गलियन अँठिलाय (२) बरसाने० ॥२॥
गवदन फरी सुपरिया हो, डरिया मनियाय (२)
तेहि चढ़ि बैठि कन्हैया; गर डारे रुमाल (२)
सात परतकी अँगिया, बँद लागे हजार (२)
छोरे न छूटै मरदके, मींजै दोउ हाथ (२) बरसाने० ॥३॥
यही देशके सुगना हो; उड़ि जाहु अकास (२)
जहँ चंदनबन रुखवा; मनमाने फल खाव (२)

सीताकी रींधी रोसैयाँ; जेवैं भगवान (२)
रामौका भीजे पटुकवा; सीताका चीर (२) बरसाने० ॥४॥

१०५

बिहरैं नँदनदन कुंजनमें ॥
सुंदर विशाल वैजन्ति-माल, मकराकृति कुंडल काननमें ।
केसरको तिलक भाल सोहै, पीताम्बर स्वर्णतुल्य तनमें ।
सँग सोहत ग्वालन बालनके, जस देत छटा शशि तारनमें ।
मुरली ध्वनि मेघसमान होत, दामिनि-सी दमकत दंतनमें ।
लजि जात तडित लखि दशन पंक्ति, भल भ्राजत मोरमुकुट सिरमें ॥
लखि पीत बर द्युति मध्यमता, कछु आय जात छबि किरणनमें ॥१॥
जहँ बंशीकी गति मंदमंद है, छाय रही तिहुँ लोकनमें ।
तहि समय राधिका सखिन संग, रहि केलि करत बृंदाबनमें ।
औ बंशीकी धुनि मधुर-मधुर, तब पहुँची तिनके काननमें ।
है अति अनंद सब सखिन संग, चित लायो हरिके चरणनमें ।
यहि निमिषमाहिं बृंदाबनसे, वै पहुँचि गईं सब कुंजनमें ।
थिरकत-थिरकत हँसि जाय मिलीं, ग्वालन बालनक झुंडनमें ॥२॥
तेहि काल कोलाहल छाय रह्यो, रमणीक मनोहर कुंजनमें ।
सुनि पंछी शोर मचाय रहे, कल कुहकत वृक्ष रसालनमें ।
पपिहा पी-पी चिल्लाय रहे, बृंदनके बृंद रसालनमें ।
बनकी गौवै सब मोहि रहीं, नहिं प्यार करैं निज बच्छनमें ।
चहुँ ओरस मोर बटोर रहे, छबि दत अपार विहंगनमें ।
करि रव सबके सब नाचि रहे, बंशीकी तान तं गनमें ॥३॥
सखियनके सोहैं बीच कान्ह, ज्यों लसै भँवर मकरंदनमें ।
करि कलि रह आनंद-सहित, गोपीगोपालके बृंदनमें ।
छबि शारदहू न बखानि सकै, नहिं गाय सकैं कबि छंदनमें ।
प्रति अंगअंगकी सुघर साज, जसि लखि नहिं परै मुकुंदनमें ।

कोटिन अनंगकी प्रभा बिराजत है, जाके प्रति अंगन में।
कवि बृजकिशोर गुणगान करत, धरि ध्यान चरण अरविंदनमें ॥४॥

१०६

विपिनमें रास रच्यो बनवारी ॥
सजि-सजिकै आई बृजवाला औ सुंदर वेश सँवारी है।
जहँ देखि शृंगार चकित मन मोहन, हँसत प्रेम दै तारी है।
जहँ बाजत झाँझ मृदंग मँजीरा, मधुर शब्द करती अति बीना।
तबला सितार छमा छम बाजै, बंशीके शब्दसों बेद उचारैं।
श्याम चरित लखि प्रेम-उदधिमन, डूबि गयो संसारी है।
औ तीनि लोक देखन हित आयौ, ब्रह्मादिक त्रिपुरारी ॥१॥
मनमोहन संग सबै सखिया मिलि, बिचबिच गोफा डारी है।
औ लेत ताल चरणननपर, घुँघुरुन थिरकि-थिरकि नाचै नारी।
औ हँसत-लखत मुख चूमि-चूमि, फिरि घूमि जात दै दै तारी।
जहँ घुम-घुमघुम-घुम छननन्-छननन्, सननन् होत पुरारी है।
औ मुरली तान तिहूँपुर छाई, चकित भई सब नारी हैं।
मनमोहन मगन प्रेमरस छायो, निज गृह सुरति बिसारी ॥२॥
घूमि-घूमि सब ताल लेत, बिच नाचत राधा प्यारी हैं।
श्रीकृष्ण टेरि बंशी ध्वनि छाँड़त कूकत रसिक मुरारी है।
जब षष्ट मासको दिवस भयो है, सूरज चंद्र थंभारी है।
श्रीकृष्ण गोपिका प्रेममगन युत, सकल समाज सुखारी है।
गोपिनमें कृष्ण राधिका कैसे देखत बन चहुँ ओरी है।
जस चंद्र पौर्णिमा नभ कर मंडल, कला सहित उजियारी॥३॥
आय गए सुनि महादेव, सँगमें लेकर गौरा नारी।
पहुँचे कृष्ण धाम सब तुरतै, जहाँ हती सब सुरनारी।
श्रीकृष्ण समाज दिखावा अंतर, घटघट व्यापक बनवारी।
औ लखि चौरासी योनि चराचर, जन समाज चरनन पारी।
तहँ गोपिन-सहित जाय मनमोहन, जन-समाजको सत्कारी।

है तोहि धन्य योगीश और तोंहि धन्य-धन्य सब ब्रजनारी ।
औ सूर बिचारि कहैं माधवसे, पुरवहु आस हमारी ॥४॥

१०७

दधि ले वृषभानु किशोरीसों ॥
सब ग्वाल सबै ततकाल उठौ, कछु ख्याल करौ मतमोरीसों।
नित दूधै-दही खवाउं तुम्हें, नहिं झूठ कहौं छल-चोरीसों।
तुम धाय बोलाय लियो राधाको, काम नहीं कछु औरीसों॥१॥
छलकी कितनेव बतलाय कहो बलियासों कहौं करजोरीसों ।
इन्हें चंचल नारि बिचारि लेव, अँटकाय लेव बरजोरीसों ।
इनका हम ताकिति बहुत दिननतें, आज मिलीं भल होरीसों ॥२॥
सब मिलि लपटो-झपटो इनको, गहि बाँधो फेंट पिछोरिनसों।
बिन दान दिये ई जाय न पावैं, बेंचि जात छल चोरीसों॥३॥
दधि बेंचन ई जाय न पावैं, मग रोकौ झकझोरीसों।
शिवराम कहैं दधि लूटि सबै, मिलि भरिभरि खाओ हाथनसों ॥४॥

१०८

हरि रूप बिसातिनको धारी ॥
कड़ा-छड़ा-पायजेब बिराजैं, नूपरकी छबि हैं न्यारी ।
बाजू-कंगन-पहुँची सोहै, जोशन बंगाली कर धारी ।
भुजमें नौरतन बहार करैं, टँड़िया सोहैं गडुई भारी ।
मोतिनके माला सबसे आला, कंठसिरी लागै प्यारी ॥१॥
चंपकली चंद्रमा बिराजै, कर्णफूल सोहै भारी ।
बाला बिंदिया बेसर सोहै, लटकनकी आब बड़ी भारी ।
मोतिनसों माँग सँवारि लियो, टिकुली दीन्हें काशी वारी ।
छल्ला-मुँदरी अँगुरी सोहैं, अँखियनकी कोर किए कारी ॥२॥
अँगिया दरियाईकी पहिरे, तामें दोउ गेंद बसे जारी ।
तहँ अतर-सुगन्ध लगाय लियो, लहँगा पहिरे जरकस-धारी ।
तामें गुखरू लगवाय लिये, हरि ओढ़ि बनारस की सारी ।

मुखमें दो बीरा चावि लियौ,हँसि चले जहाँ राधाप्यारी॥३॥
एक सखीसों मोहन पूछैं, कौनसो गृह राधा प्यारी।
गहिकै वह बाँह लेवाय गई, जहँ बैठि हती वह सुकुमारी।
तबही हँसि राधे जबाब दियो, तुम कौन देसकी हो ग्वारी।
काह तुम्हारो नाम सखीरी, कौन देसमे ससुरारी॥४॥
मधुर बचन बोले यदुनंदन, हम हैं नग बेंचनिहारी।
साँवल सखिया नाम हमारो, भीखमपुरमें ससुरारी।
अच्छे-अच्छे नग मेरे पास हैं, लियौ जौन लागै प्यारी॥५॥
माल जवाहिर सब दिखलायौ, कंगनाकी जोड़ी भारी।
पहिराय दियौ हरि तुरत राधिकै, जानि भामिनी प्रिय प्यारी।
ललिता पग-पदुम निहारि लियौ, तब हँसी जाय दैकै तारी॥६॥
राधे सैन दिह्यौ सखियनको, लागत हैं मोंहि बनवारी।
यह्व छैल छबीलो यशुदासुत है, कीन्हें भेस अजब नारी।
तुम बसो हमारे हृदयमांझ,हम जाँय तुम्हारी बलिहारी॥७॥
जिला मोरा उन्नाव है यारौ, मौजा है अलिपुर भारी।
गंगाप्रसादके रागरागपर, कलम हमेशा है जारी।
यह्व फाग बिसातिन-लीलाको, जो कोऊ गावै नर-नारी।
सकल देंहके पाप हरैं, यशुदाके नन्दन गिरिधारी॥८॥

१०९

पछितानी बधू ब्रजमाँ बसिकै॥

केसरको रंग अंग छिरकें, चोवा चंदन बंदन घसिकै।
अरु मोर हार अँगिया छतिया,गहि गाल गुलाल मलै घसिकै।
रस गोरसकी मटुकी हरि फोरैं, छोरैं हार मोर हँसिकै॥१॥
मैं कालिह गई जमुनाजलको, मैं ठाढ़ि भई मगमाँ धँसिकै।
अति करत बिनीत नीत नट नागर,गागरि छोरि भरैं धँसिकै।
सँग बाल-गोपाल कान्हसे टेरैं मुरली कान्ह तान पसिकै॥२॥

रसकी बस होइकै दौरी गह्यो, तब रह्यो मन प्रेम छटा पसिकै।
हटक्यो बहुतै मान्यो न कही, तब गिरे पटाक पीठि धसिकै ।
हम लीन्ह उठाय दीन्ह जसुदै, हरि आप लुकाय रह्यौ हँसिकै ३॥
जिनके पदपंकज प्रीति नहीं, अनरीति सदा तिनके बरसैं ।
माया-मद मोहमें लोभि रह्यो, कबहुँ नहिं दान दिह्यो करसों।
शुभ बात नहीं कबहूँ निकरै, सगरो दिन बीति जात लड़ते ।
धृक जीवन है जिनको सजनी, जरि क्यों न गए सगरे मिलिकै४॥
ब्रजके सब बालगोपाल सँगात, सबै मिलि बोलि उठि रसकी दसकी ।
आली बहमाली दहकाली, जहँ कूदि पर्‌यो न डर्‌यो धँसिकै ।
ऐसो नँदलाल भयो ब्रजमें, अब को बरजै ऐसे रसको ॥५॥
ऐसो यह रूप बन्यो कान्हाको, लर शिर मोतिनकै झलकै ।
औ कुंडल लोल कपोलनमें, मानौं घनमें बिजुली चमकै ।
जहँ हीराको हार बिहार करै, बनमाल वान छबिसों लरकै ।
सूरदास सोनेकी इँडुरी, देत वहै जमुना धसिकै ॥ ६ ॥

११०

खेलि रह्यो गेंद नँदको लाला ॥

श्रीकृष्णने टोना मार्‌यो, गेंद गिर्‌यौ जमुना-धारा ।
पहुँचे गेंद पताल गयो है, सोच करै पिरथीवाला ॥१॥
काली दहमाँ कूदा कन्हैया, जाय पताल तोर्‌यो ताला ।
पहुँच गए वासुके द्वारे, मोर-मुकुट मुरलीवाला ॥२॥
कहै नागिनी सुनौ कृष्णजी, मेरो नाग है मतवाला ।
उठिहै नाग तुम्हें डसि खैहै, बड़ा भयंकर विषवाला ॥३॥
जगादे नागिन अपने नागको, देखिहौं कैसा बलवाला ।
रावण सरीखे जोधा मार्‌यौं, बड़े असुर हम हनि डाला ॥४॥
नाग जगावन चली नागिनी, रोय रोय आँसू ढारा ।
द्वारे इक बालक धूँदि मचावै, नाहि टरै मेरो टाला ॥५॥

उठा नाग छाँड़िसि फुफकारी, कृष्ण साँवरो कै डाला।
जब गिरिवरधरकी बजी बाँसुरी, नाग नाथि लीन्हेव काला॥६॥
कहै नागिनी सुनौ कृष्ण, बसुदेव बसी तुम कै डाला।
इन्हें न मारौ छांड़ि देव तुम, मेरो कंत है घर वाला॥७॥
कहैं कृष्णजी सुनौ नागिनी, तेरो नाग मैं दै डाला।
हुआँ न आयौ गोकुल नगरी, जहाँ बसैं गोपी ग्वाला॥८॥
मातु यशोदा करैं आरती, नृत्य करै पिरथीवाला।
सूरदास छबि कहँ लग बरणौं, रंग उड़ै चारिउ धारा॥९॥

१११

जसुदा-घर बालक आयो है॥
सुंदर बदन कमलदल-लोचन, देखत चंद्र लजायो है।
सोइ पूरण ब्रह्म अखिल अविनाशी, प्रगट नंदघर आयो है।
तन मोर-मुकुट पीताम्बर सोहैं, केशर तिलक लगायो है।
औ कानन कुंडल गल बिच माला, कोटि काम छबि छायो है॥१॥
शंख-चक्र-गद-पद्म् बिराजत, चौभुज-रूप दिखायो है।
सोई पूरणब्रह्म ईश हैं, यशुदासुत कहलायो है।
जब मच्छ-कच्छ-बाराह भयो, नर-तन धरि राम कहायो है।
औ खम्भा फारि निकरे नरसिंह ह्वै, जब प्रह्लाद छोड़ायो है॥२॥
परशुराम जब बौद्ध भयो, तब भूमिको भार मिटायो है।
औ कालीमर्दन कंस-निकंदन गोपीनाथ कहायो है।
जब मधुसूदन माधव मुकुंद प्रभु, दीनबंधु पद पायो है।
औ दामोदर गिरिधर गोपाल, तुम त्रिभुवनपति कहलायो है॥३॥
शिव सनकादिक औ ब्रह्मादिक, शेष सहसमुख गायो है।
औ सुर-नर-मुनिके ध्यान न आवत, अद्भुत चरित देखायो है।
सोइ पूरणब्रह्म सकल घटवासी, मथुरा केलि मचायो है।
जिन रास विलास-कियो गोपिन सँग, लूटिलूटि दधि खायो है।
प्रभु परमानंद मदनमनमोहन, कृष्ण चरित मन लायो है॥४॥

११२

बृज होरी खेलैं श्रीगोपाल ॥
श्रीमहादेव कटि कसि मृदंग, ऋषि नारद करसों ल उपङ्ग ।
बलभद्र वीर पिचकारि हाथ, वसुदेवजी ऊधौ विदुर साथ॥१॥
राधे मुख चितवत सरिस चंद्र, हँसि खेलत श्रीआनंदकंद ।
तहँ नारिवृंद उठि लै गुलाल, करसों मुख मींजत नंदलाल॥२॥
सनकादिक गावत रहस रंग, तहँ निरत दंभ आदिक अनंत ।
तहँ अबिर गुलालकी मची कीच, बृंदावन कुंजन बीच
बीच ॥३॥
नभ कौतुक देखत सुर विमान, तेहि अवसर छूटत मुनिन ध्यान।
रंगसे भीजैं राधे-गोपाल, तेहि अवसर मीरा भई निहाल ॥४॥

११३

बृज हरि भयो अनोखे दानी ॥
दानी न भयो करत नादानी, रोकत नारि बिरानी है।
जब घर-घर चोरी करत रहत, औ बात करत रससानी ॥१॥
नगर-नगर घर-घरन घरन, मग थिरकत थिरकत थिर न रहत ।
जहँ देखत फिरत साथ सखियनके, बड़ा छैल सैलानी ॥२॥
यमुना-निकट मोरि गगरी पटक दई, सारी झटक दई ।
काह कहौं सखि गगरि भरन गई, भरन देत ना पानी ॥३॥
बाबाकी दोहाई मैं जाय न सकौं, औ बताय न सकौं ।
जिय गुरुकी कसम मैं अरज करौं, शिवराम कहैं सुत बरजु-
बरजु-नँदरानी ॥४॥

११४

होरी खेलैं गोपीमुकुंद ॥
बाजैं डफ-ढोलक-झाँझ-मँजीरा और मधुर ध्वनिसों मृदंग ।
तबला-करताल-सितार-तँबूरा, बेन सरंगी औ मृचंग ।
बाजन सब बाजैं ग्वाल समाजे, देखि ताल हुलसत हैं अंग ॥१॥

गोपी सब गावैं फाग मचावैं, तरु फूले सोहैं बसंत।
नाचैं नँदलाला गल बनमाला, मोर मुकुट शोभत अनंत।
लैकै पिचकारी तक्यो मुरारी, डारि दिह्यौ सबपर तुरंत ॥२॥
ब्रजकी सब बाला नैन बिसाला घेरि लिह्यो करिकै सिंगार।
भूषण पट सोहैं मुनिमन मोहैं, गर सोहैं मोतिनके हार।
तिरछे दृग फेरैं चहुँदिश हेरैं, माँगैं फगुआ अमित बार।
दीजै यदुनायक हो सब लायक, बीतत है फगुआ बहार।
औ ब्रजकी शोभा छाय रही, छबि देखि महा मोहै अनंग॥३॥
ब्रजकी सब नारी पकरि मुरारी, झोंकि देत झोरिन गुलाल।
सिंदूर लगावैं रंग मचावैं, अनखन बेंदी सोहै भाल।
दोउ लोचन लाल ठाढ़े गोपाल, कहैं विश्वनाथ बहु उठत रंग ॥४॥

११५

सिर पहिरे सुंदर मोर मुकुट, मोहन बसंत खेलन आये ॥
लै पिचकारी चले मुरारी, ग्वालबालहू उठि धाये।
सँग लागि श्यामके लखि आतुर, बलराम मनहिमन हरषाये।
झोरी गुलालसे भरे चले, मोहनकी चाल गति मति भाये।
ठुमकत-ठुमकत तन थिरकि-थिरकि, राधिका-भवन जब नियराये ॥१॥
सुनत शब्द खुलि गई किंवारी, ब्रजनारिनके मन भाये।
पहिऱ्यो बुलाक बेसर बिंदी, कर-कंगन झुमका झुमकाये।
सोहत तन सारी हरी किनारी, रंग-बिरंगी रँगवाये।
यहि बिधि कढ़ि आई वाम धामसों, रंगन कलसा भरवाये॥२॥
मदकी माती चली गुजरिया, लहर-लहर तन लहराये।
सब चढ़ीं जवानी चलैं उतानी, हाटबाट हू घिरवाये।
बाहेर सम्मुख है कहैं राधिका, मनमोहनको बिलमाये।
तुम भागि न जायौ लाल, आज जो फाग खेलने हित आये ॥३॥

जुरीं सकल ब्रजबाम श्याम सँग, ग्वालबालहू जुरि आये ।
डारत सुरंग केसरि गुलाल, गोपी गोपाल हिलिमिलि नाये ।
हरषत मन बरसत रंग बिविधि, जनु घेरि घटा पावस छाये ।
घनश्याम सलोने सुघर राधिका, बिधि भल रूपहि
दरसाये ॥४॥

११६

दधि लियौ सबै खेलौ होरी ॥

यह जात चली मथुरा दधि बेचन, संग लिए ब्रजकी गोरी ।
वृषभानु दुलारी हैं सुकुमारी, आँचल सारी चितचोरी ।
वृंदावन भीतर आय मिलीं, दधिकी मटकी सब इकठौरी ।
तुम लियौ बुलाय जाय नहिं पावे, इनके पटभूषण छोरी ॥१॥
इतनी सुनि ग्वालसखा उठि धाये, घेरी गोपी-गणसौंरी ।
यह देखि खेल कर मन विचार, तब राधे बोलीं सबसौंरी ।
तुम धरौ उतारि छोंड़ि दधि धावौ गहौ गोपालहि बरजोरी ।
सुनिकै ब्रजबाला जहाँ गोपाला, सम्मुख ह्व गइ झटसौंरी ॥२॥
जहँ उड़त गुलाल रंग बहु बरसै, सूझत नहीं एक कोरी ।
सब झपटि-लपटि गईं नंदलालको, मुकुट पितांबर लियौ छोरी ।
तब राधे निज पट-भूषणसों, नइ ना र बनायो हरिकोरी ॥३॥
मचो कीच ब्रजबीच दुहूँ दिसि, भये चीर-पट सरबोरी ।
कल सुनत भवनसे यशुदा निकरीं देखि मनोहर यह जोरी ।
लै बैठायो रतन सिंहासन, कीन आरती करजोरी ।
लछिमन दधि फाग मची बृजमें, श्रीराधा औ श्रीपातसौंरी॥४॥

बृंदावन श्याम रची होरी ॥

बाजत ताल मृदंग बाँसुरी और मँजीरनकी जोड़ी ।
खँझरी सितार तम्बूर झाँझ डफ ढोलक औ बेला जोरी ।
सारँग करताल पखावज बाजै गाय रहीं ब्रजकी गोरी ॥१॥

चले अबीर गुलाल चहूँ दिशि, भीजि रहीं राधा गोरी।
मारैं पिचकारी बनवारी तब अँगिया बीच लगो जोरी।
औ गारी दै-दै फागु सुनावैं मचलि गई राधा गोरी ॥२॥
होरी खेल रच्यौ बृंदावन, भरे अबीर बहुत झोरी।
गोरी सब धाई अजब रँगीली गाय रहीं होरी-होरी।
जब नाचैं-गावैं रँग बरसावैं, प्रेम बढ़ावैं हरि ओरी ॥३॥
बृंदाबनकी कुंज गलिनमाँ बाजै ढोलककी जोड़ी।
ता ऊपर तोरही बाजि रही सब गावैं ग्वाल कहैं होरी।
शिवराम रँगीली फागु रच्यो रसिकनकी गाय रही जोरी ॥४॥

११८

हमरी रोकत गैल कन्हैया ॥
शीश मुकुट कंचनको झलकत, मकर मनोहर कुंडल हलकत।
चंदन खौरि माथेमाँ रंजित, उर बैजंती माल बिराजत।
—पीताम्बरकी कसे कछनियाँ ॥१॥
कटि किंकिणियाँ नूपुरवारी, झुनझुनात हैं मुनिमन-हारी।
पग पैंजनियाँ डोलत बाजैं, खेलत होइहैं बृजकी सखिनमाँ।
—मुरली बेन बजैया ॥२॥
अधर सुधारस बेनु बजावैं, ग्वालबाल लीन्हें सब धावैं।
कहा न मानैं नंद-महरको, माखन खात फिरैया ॥३॥
गागरि फोरि मोर मन हरकैं, उरमें भुजमें करमें कसिकैं।
विवश हमैं करिकैं नटनागर, चले कुंजबन कहियाँ ॥४॥
ब्रह्मादिक सुर ध्यान लगावैं, शेष सहस जेहिं पार न पावैं।
मोहन सखियन शोर मचावैं, गावत सूर रसिक मन महियाँ ॥५॥

११९

साँवलिया यहु रंग पक्का है ॥
कौन गलिन चलि जाऊँ सखीरी, ठौरे ठौर उचक्का है।
उन रोय दिया उन पोंछि लिया, जब गज्जल भरिगा हथ्था है।
औ वहिमाँ गैया पानी पियत है, वहीमाँ धोवत हथ्था है ॥१॥

तन जंजीर सुरतिकी पेटी, गले लागि मजबुत्ता है।
कोउ संत शिकारी सबसे यारी, पर घर जायके ढुकता है।
कोउ जूँठन खाय अघाय पेट भरि, परा पलँगपर सोता है॥२॥
सिरपर गगरी गगरीपर करवा, बदनकी चोलिया लक्का है।
तुम साँच कहो हो बालगोविंदे, याको लटकन सच्चा है।
औ याको लटकन झूलि रहा, जब गिरा कबूतर लक्का है॥३॥
गलियन-गलियन मैं फिरि आइयुँ, काहू ना बेसक्का है।
जब जाय पहूँची कुंजा गलिनमाँ-हुवा कृष्णका तक्का है।
जब हुआँसे निकरिकै बाहर आइयुँ, उलरिकै मारिन धक्का है॥४॥

१२०

हम देखा मदनगोपाल लाल सँग बाल खेलै बिंद्राबनमें॥
अलकैं घुघुवारी लसैं विकसैं, मुख पंकज लोल कपोलनमें।
कल कुंदनमें लटकैं खटकैं, मनों इंद्र अहिनके जालनमें।
मुक्ता लर लाल जवाहिरसे, चमकैं गल गुंजकी मालनमें।
बनमाल गले ललकै इतउत, पटपीत परे अवतंसनमें॥१॥
रँग-रँग रँगूर झरौ झलकैं, जड़ि हैं अँगुरी-अँगुरी तिनमें।
पहुँची औ हथोल अमोल बने, बहु अंगके जोशन हैं करमें।
गहि मधुर मुरलिया अधर धरी, कटि किंकिणि नूपुर पाँयनमें।
झुकि चलत माधुरी चाल सबै मिलि हारि गईं उपमाँ
मनमें॥२॥
फफकी द्रुमबेलि फँसी बिकसीं, निकसीं घनघोर फना जिनमें।
खग चातक कीर चकोर चहूँ दिशि, शोर करैं छिपि डारनमें।
अलि और उड़ैं घुमड़ैं घनघोर- सुमोर छिपैं नित कुंजनमें।
यमुना लहरी गहरी छहरी, शुचि मंद सुगंध बहारनमें॥३॥
लरिका सब गेंद लिहे लबरैं, झबरैं उबरैं पौगाननमें।
दै-दै ताड़ी सब बाल हँसैं, झुकि नंदलला किलकारनमें।
सब मृगनके झुंड विलोकि विषाण बजावैं सुंदर ताननमें।
शिवनारायण देखत बनि आवै, छबि नहिं बनै बतावनमें॥४॥

१२१

सुधि श्यामसे लागि रही गोइयाँ ॥
राजा दशरथ घर जन्म लिह्यो है, रावण मार्‍यौ बन महियाँ।
बसुदेव-देवकीके घर प्रगट्यो, गोकुल जाय दुह्यौ गइयाँ॥१॥
यमला-अर्जुन दुइ वृक्ष तरे, गोवर्धन धारेव नख महियाँ।
अजामील गज गणिका तारेव, शिबरी उधारेव बन महियाँ॥२॥
कालिंदी जलपान किहव, यमराज खड़े अस्तुति महियाँ।
बृज ऊपर इंद्रने कोप किहेव, तब किह्यौ पराजित उन कहियाँ ॥३॥
मुनिसाथ जनकपुर जात मार्गमाँ, तारेव अहिल्या छिन महियाँ।
जब धनुष टूरि जानकी विवाही, रुकुमिनी लायेव रथ ॥ महियाँ ॥४॥
दोनों इष्ट एक हैं द्वै नहिं, भजै जो भावै मन महियाँ।
औ तुलसी सूर प्रताप अवध बिंद्राबन भेंट भई गोइयाँ ॥५॥

१२२

यदुवर बसैं हृदयमें जाके ॥
लहैं सुखद सुरधाम चरण प्रभुके चित दीन्हे।
उदय ग्यान तमनाश बिमल हिय नामहि चीन्हे।
होंहिं भक्ति वैराग्य साधु सत्-संगति कीन्हे।
पावैं पद निर्वाण शरण यदुपतिकी लीन्ह।
मिटैं शोक संताप पाप अरु सकल भुवन बस ताके ॥१॥
करी अनीति अपार तबै प्रभु कंस नसायो।
भक्त दुख लखि दुर्वासापर चक्र चलायो।
पाण्डवपर करि दया युद्धमें विजय करायो।
राखि लियो ब्रज गोप इंद्रको मान नसायो।
टूटि पर्‍यो गज घंट दयानिधि बालक खगके ढाँके ॥२॥
लागी जबे दावाग्नि मेंह बरसायो छिनमें।
हन्यो पूतना मध्य भवन वत्सासुर वनमें।

राखि लियो पति द्रुपदसुता जब सुमिर्‍यो मनमें।
सतिभामाके टेरि हन्यो भौमासुर रणमें।
खड़े होंहि बलिद्वार जायकर नित प्रति गयो निशाके ॥३॥
भयो बिकल गज मध्य बारि तब प्रभुहिं पुकार्‍यो।
राखि लियो यदुनाथ जाय ग्राहहि संहार्‍यो।
बिकल देखि शंकरहि जाय भस्मासुर मार्‍यो।
धरि नरसिंह अवतार असुरका उदर बिदार्‍यो।
ऐसे प्रभुहि बिसारै फाँस यम क्यों न पड़े गल वाके ॥४॥
रचत सृजत संहार करत लीला दिखरावत।
भनत वेद औ शास्त्र सकल मुनि गण यश गावत।
प्रभुके चरित अगाध शारदहु पार न पावत।
जो न करत पद-प्रेम घूमि चौरासी आवत।
कहैं अंबिका पड़े सिंधुभव जाँय शरण हम काके ॥५॥

१२३

केहि ढिग बिलम लगाये। मोहन कस न बेर भइ आये ॥
भयो चन्द्रमुख मलिन युगल नैनन जल डारै।
मानौ मृगी सभीत चकित चहुँओर निहारै।
खनिक द्वार खन अटा झाँकि झिलमिलौ उघारै।
हरि आगमन जनाय कौन मम शोक निवारै।
दीनदयाल जानि यदुवरको द्विजकर पत्र पठाये ॥१॥
अति उत्कंठित भई रुक्मिणी त्रास न थोरी।
घुमिरि-घुमिरि मग निरखि रहीं जिमि चंद्रचकोरी।
श्रमकण रहे बिराजि आदि ज्वाला प्रगटी री।
कृपिण वृत्ति जनु छीनि लियो कोऊ बरजोरी।
ऐसी बिकल भई जिमि जलचर बिमल तड़ाग सुखाए ॥२॥
अहो द्वारिकाधीश ईश उर अंतरवासी।
प्रणतपाल सुखधाम श्याम सुंदर सुखरासी।
बंदित शिव सनकादि चतुर्दश भुवन बिलासी।

काहे तजि प्राचीन पंथ नइ रीति निकासी।
हम बिरहानल जलैं उतै तुम राजत सरल सुभाए ॥३॥
कीधौं पंथहि भटकि रहे द्विजवर बिन जाने।
की हरि जानि कुरूप मोर विश्वास न माने।
लै शिशुपाल बरात इतै ग्रामहि नियराने।
जानि परत नहिं आज कहाँ यदुनाथ भुलाने।
सत्य प्रेम तौ रखौ लाज जिमि हरि ब्रज गोप बचाये ॥४॥
को कवि कहै सुनाय हाल जो भयो बालको।
सकुचत कर लेखनी लिखत संकट विशालको।
लागी लपक कराल हिए विरहाग्नि ज्वालको।
भ्रमत चक्र सम बिलखि ध्यान उर नंदलालको।
तबहिं विप्र आयो जनु हनुमत मूल सजीवन लाये ॥५॥
शुभागमन हरिकेर आज जब बिप्र उचार्‌यो।
गईं रुक्मिणि पग लपटि चरण-रज लै सिर धार्‌यो।
डूबत बिरह-बियोग-सिंधुमहँ मोंहिं उबार्‌यो।
मिट्यौ दुःख अंबिका सकल संकटहि निवार्‌यो।
ऐसी बिकल भई जिमि चातक स्वाति बूँदके पाये ॥६॥

१२४

ऊधौ, मोंहि ब्रज बिसरत नाहीं ॥

वै दुकुल जमुनाजल अँचवन, ललित कदमकी छाँहीं।
कुसुम कलिनके मुकुट बिराजैं, रास करैं जलमाहीं ॥१॥
सर्व सोनेकी बनी दोहनी, खरिक दुहावन जाहीं।
ग्वालबाल सब केलि करत हैं, डारि गले बिच बाँहीं ॥२॥
पूरब दिशा अयोध्या नगरी, तरे बहैं सरजू माँईं।
सर्व सोनेकी बनी द्वारिका, मथुराकी छबि न्यारी ॥३॥
जहँ तहँ जाँउ नीक नहिं लागै, हमका कछू न सोहाई।
सूरश्याम मोंहि यही अँदेसो, यदु ब्रज बसत की नाहीं ॥४॥

१२५

ऊधौ, जाव श्याम समझावन ॥
तुमही हमका किह्यौ शिरोमणि, अब कस भइन अपावन ।
हमरी टेक लागि प्रभुजीसे, प्राण बहुत दुख पावन ॥१॥
जैसे जलबिन मछरीकी गति, वैसे सखी सुखावन ।
यही सोचते भइयुं बावरी, सुनत नहीं हरि आवन ॥२॥
तुमहीं रामकृष्ण हौ ऊधौ, तुमहीं सर्व सुहावन ।
तुमहीं क्षेम-कुशल-शुभ कर्ता, तुमहीं भेद बतावन ॥३॥
हँसिकै कह्यौ सूरजन ऊधौ, पुरी द्वारिका छावन ।
सब गोपी मिलि होब कूबरी, नेक गोकुलै आवन ॥४॥

१२६

ऊधौ, यह अभिलाष रही रे ॥
आवनकी उन श्यामसुँदरकी, कोऊ न बात कही रे ।
उनकी मति कुबरी हरि लीन्ही, तुमका काह कही रे ॥१॥
आवैं बिरह मिटावैं जियकी, जो गति करैं सही रे ।
बसिकै संग कान्ह कपटीके, तुम्हरिउ बुद्धि गई रे ॥२॥
यहिपार मथुरा वहिपार गोकुल, बीचमें जमुना बही रे ।
ऐसी न चहिए श्यामसुँदरको, नाहक बाँह गही रे ॥३॥
माखन चाखनहार कन्हैया, ढूँढ़त फिरत मही रे ।
सूर अमोल बिके बिन दामन, याही सोच रही रे ॥४॥

१२७

ऊधौ, करिकै प्रीति पछितानी ॥
प्रीतिका मजा शराफत जानी, गोपी-ग्वाल भुलानी ।
बयस हती हँसने-खेलनेकी, तबै कछू ना जानी ॥१॥
प्रीति न करिए परदेशीसे, प्रीति करै सोइ जानी ।
अपना जाय द्वारिका छाये, हमतौ फिरैं भुलानी ॥२॥
जात अहीर मर्म नहिं जानै, बोलैं मधुरी बानी ।
औरनको बैराग सिखावैं, आप बनैं रसधानी ॥३॥

निशि-दिन व्याकुल फिरैं राधिका, हृदयमाँ फिरैं भुलानी।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, हरि-चरणन लपटानी ॥४॥

१२८

ऊधौ, बनि आयेकी बात ॥
वई द्रुमलता वई बनकुंजन, वई तरुवर वई पात।
ई बातैं उनहिनको छाजैं, इक जननी दुइ तात ॥१॥
माँगि-माँगि दधि हमसे खाइनि, खाइनि दधि औ भात।
अबतौ सुनिति महाराज कहावत, चढ़े खँड़ाउन जात ॥२॥
जरत पतंग संग दीपकके, धाइ-धाइ लपिटात।
अब न बनी हमसे माधवसे, अनहक आवत-जात ॥३॥
अस मन होय हुवैं जाय झगरौं, धरि कूबरपर लात।
सूरदास कुबरी बस होइगे, गोपिन देखि लजात ॥४॥

१२९

ऊधौ, काह करब लै पाती ॥
प्यासी सीप समुदमाँ डोलै, जलसों नहीं अघाती।
वाकी प्यास वही दिन बुझिहै, जब बरसै जल स्वाती ॥१॥
ऐसो जतन करन चाहै सो, ओसन प्यास बुझाती।
जैसे प्याला बिना तेलका, जरै दिया ना बाती ॥२॥
ऊधौ आवैं जोग सिखावैं, लिखि लिखि लावैं पाती।
या पाती कुबजाको दीजै, जाकी शीतल छाती ॥३॥
पातीका धीरज कैसे धरिये, बिरह जलावै छाती।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, हरि-चरणन चित लाती ॥४॥

१३०

ऊधौ, कर्मनकी गति न्यारी ॥
काहे बगुला श्वेत बरन भे, काहे कोयल कारी।
काहेते गंगाजल निर्मल, काहे समुंदर खारी ॥१॥
ऊँचे पेड़ छोटि फल लागत, बौंड़न लागत भारी।
हमको योग भोग कुबजाको, दिह्यौ निठुर गिरधारी ॥२॥

बिलपत रहत सकल बृज बनिता, कुबजा श्यामकी प्यारी।
जबसे गए श्याम ब्रज तजिकै, भई यह दशा हमारी ॥३॥
आप तौ जाय बसे मधुपुरमें, हमरी सुरति बिसारी।
सूरदास प्रभु आय मिलौ अब, चरणनकी बलिहारी ॥४॥

१३१

ऊधौ, मैं बिरहिन मतवारी ॥
जबसे गए श्याम नहिं आये, लागी हृदय दवारी।
कौन उपाय करौं मैं आली, रहत मदन तन जारी ॥१॥
यौवन उमँगि-उमँगि भरि आयो, जैसे कुसुम रँग बोरी।
बिन पिय यहिको कौन मनावै, करै बहुत बिधि रारी ॥२॥
जाय चुभी कहुँ दृगन कोरकी, मिलि गई सवति हमारी।
तुमतौ भोग करत हौ प्यारे, हमको योग-व्यथा री ॥३॥
कहैं सरदार बहुत दिन बीते, मग जोहत मैं हारी।
कृपासिंधु मोहिं मिलौ दया करि, अब तुम बेगि मुरारी ॥४॥

१३२

ऊधौ, जोग न जानत बाला ॥
तन कोमल लघु बयस हमारी, उठै घोर मन ज्वाला।
भूषण-बसन-सेज नहिं भावै, जबसे तजे नँदलाला ॥१॥
कैसे लोग कैसे वह ठाकुर, का वुइ पुरके हवाला।
शिव सनकादिक औ ब्रह्मादिक, काह लिखा मोरे भाला॥२॥
बृंदाबनकी कुंज-गलिनमाँ, दिह्यो मोंहि जयमाला।
अब कुबरी पटरानि भई हैं, मारत उर-बिच भाला ॥३॥
अंग-अंगमें भस्म लगाई, ओढ़ि लेत मृगछाला।
सूरश्याम मोरे प्राण हुवैं हैं, जहँ हैं मदनगोपाला ॥४॥

१३३

ऊधौ, मनकी मनहि रही रे ॥
एक समय प्रभु मेरे घर आये, मैं दधि मथत रही रे।
मैं अभिमानिन मान न कीन्हा, फेरि न भेंट भई रे ॥१॥

इत गोकुल उत मथुरा नगरी, बैरिन यमुना बही रे।
आप तो मोहन पार उतरिगे, हमका कछु न कही रे ॥२॥
जो पाती भेजी यदुनंदन, सो पाती न चही रे।
मोहन मदन गोपाल लालकी, आशा लागि रही रे ॥३॥
अब मैं फँस्यूँ प्रेमके फंदन, चलत न पेंच गही रे।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, पीर न जात सही रे ॥४॥

१३४

ऊधौ, सुनौ श्यामकी बतियाँ ॥
जबसे गए फेरि नहिं आये, सोवैं सौति सेजरिया।
अपना केलि करैं कुबरी-सँग, हमैं पठावैं पतियाँ ॥१॥
दर्शनको सब तरसैं गोपी, श्याम करैं लरिकैया।
सूनी सेज लगे डेर भारी, धड़-धड़ धड़के छतिया ॥२॥
कुबरी मोहि लियौ कान्हाको, बिसरि गईं सब सखियाँ।
रोवत-रोवत ऊधौ सुनिए, सूझि गईं दोउ आँखियाँ ॥३॥
कैसे रहैं बिना मनमोहन, रोय रहीं सब गैया।
सूरश्याम बिन कृष्ण हमारी, कटैं न गमकी घड़ियाँ ॥४॥

१३५

ऊधौ, लागि नहीं कुबजाकी ॥
आपन दाम होय जो खोटो, लागि न परखैयाकी।
पूत कपूत होय कुल अपने, लागि न मातपिताकी ॥१॥
दिनके उदय उलूक छिपत हैं, मलिन कहा सविताकी।
ऋतु पावसमाँ चातक प्यासो, कमी है काह बरखाकी ॥२॥
पेड़ करील पात नहिं आवै, जग बस ऋतुराजाकी।
हाड़िल पाँय धरै ना धरनी, भारं सहै दुनियाकी ॥३॥
पूरी लागि राधिका गोपी, नंदबबा जसुदाकी।
कह हरिदेव राधिका बोलीं, मरिन मीच ममताकी ॥४॥

१३६

ऊधौ, जब नीके दिन आवैं ॥
कुबजा चेरी कंस राजकी, चंदन-अतर लगावै ।
तन टेढ़ा कछु चतुर न सुंदर, सो हरिके मन भावै ॥१॥
मधुपुर जाय बसे मनमोहन, ब्रजबनितन तरसावैं ।
प्रीति करैं तौ पार लगावैं, नाहक जहर पठावैं ॥२॥
हमको योग भोग कुबजाको, लिखि-लिखि योग पठावैं ।
अबतौ आनि मिलौ मनमोहन, प्राण बहुत अकुलावैं ॥३॥
हमतौ दासी कृष्ण-चरणकी, निशिदिन ध्यान लगावैं ।
सूरदास यह विरहकी ज्वाला, हरिबिन कौन बुझावै ॥४॥

१३७

ऊधौ, जब टेढ़े दिन आवैं ॥
टेढ़ी-मेढ़ी बनी कूबरी, तिनका हरि उर लावैं ।
चन्द्रकला अस बनी राधिका, तिनका जोग सिखावैं ॥१॥
कंचन छुअत होत माटी सम, माँगे भीख ना पावैं ।
पढ़ा-लिखा कछु काम न आवैं, मूरख ज्ञान सिखावैं ॥२॥
हित औ मीत मुखौ नहिं बोलैं, दूरिसि नेह जतावैं ।
टेढ़ी मेढ़ी बात कहत हैं, ढिग बैठे अलसावैं ॥३॥
आपन-आपन भाग सखीरी, काको दोष लगावैं ।
सूरश्याम अस कहत राधिका, ना काहू ढिग जावैं ॥४॥

१३८

ऊधौ, दर्शन ही की आशा ॥
जबसे ऊधौ ब्रजबन छोड़्यो, गोपी भई हैं उदासा ।
भूषण-बसन सबै हम त्यागे, दर्शन लागि पियासा ॥१॥
आखिर श्याम तुम्हारे हितु हैं, उनकी हैं हम दासा ।
चेरीको हरि चेरा कहिए, होय कुटुँब जग हाँसा ॥२॥
कर्मकी रेख टरै नहिं टारे, लाखन करौ उपासा ।
आपतो जाय द्वारिका छाये, उन बिन भईं उदासा ॥३॥

जैसे पपिहा स्वाति बूँद बिन, रटत पियास पियासा।
सूरश्याम हम कहँलगि रटिहैं, जब लग घटमें साँसा ॥४॥

१३९

ऊधौ, हम काले अजमाये ॥
कोयल काली, कागा काले, काले अधिक सुहाये।
ई काले मतलबके साथी, छिनमाँ होत पराये ॥१॥
कोयलक सँग कागा सूतैं, छिन इक अंग लगाये।
उड़न लगे तब बात न पूछैं, कुल अपनेको धाये ॥२॥
उड़िकै भँवर डारपर बैठे, प्रेम-सुधा-रस खाये।
प्रेम-सुधा-रस खैंचि लियो है, फेरि पास ना आये ॥३॥
लौंड़िनके सर डौंडी बाजे, राजा सहित सुख पाये।
सूरश्याम ब्रज बिकल बिरहिनी, बृजबासी तरसाये ॥४॥

१४०

ऊधौ, योग सिखावन आयो ॥
हमको योग भोग कुबजाको, तुमहूँ ना समझायो।
नित उठि आवत-जात द्वारिका, कपटी मित्र कहायो ॥१॥
दादुर मीन प्राणपति एकहि, एक संग सुख पायो।
मीन मरी जलके बिछुड़ेसे, दादुर कठिन कहायो ॥२॥
वह दादुर हम मिथुन मीन भईं, कहत न कछु बनि आयो।
हमको लिखि लिखि योग पठावत, घावमें नोन लगायो ॥३॥
जाको जपत शेष शिवशंकर, शारद पार न पायो।
सूरश्याम वाहीके बिछुड़े, योगिन भेष बनायो ॥४॥

१४१

ऊधौ, श्याम बिना ब्रज सूना ॥
जैसे सुंदर भवन बना है, दीपक बिना मलीना।
लाखन लोग रहैं मथुरामाँ, कृष्ण-कूबरी दूना ॥१॥
कबहूँ हाथ लिहे बैसाखी, कबहूँ काठ खिलौना।
कुबजा रानी बनी नायिका, मोहन भयो नगीना ॥२॥

एक अँदेस रह्यो मन मोरे, एक बात हम सूना।
वुइ कस सोवैं एक सेजपर, कृष्ण-कूबरी दूना॥३॥
जाइ कह्यो उन सूरके पदसों, चितै चूक जनि कीन्हा।
मनमोहनको सोच करौना, याही हम लिखि दीन्हा॥४॥

१४२

ऊधौ, कहत न कछु बनि आवै॥
सिरपर सवति हमारी कुबरी, चामक दाम चलावै।
जनु कछु मंत्र पढ़ेव चंदनते, ताते श्यामहि भावै॥१॥
अपने रंगहि रँग्यो साँवरो, शुक ज्यों बैठि पढ़ावै।
छाँड़ेव हेत नेह गोकुलसों, लिखि लिखि जोग पठावैं॥२॥
बिसरी कंस असुरकी दासी, अब कुल-वधू कहावै।
ज्यों नटिनी लघु लकुट हाथ लै, कपि सम नाच नचावै॥३॥
हम गोपी सब जरीं घोर दुख, तापर लोन लगावै।
सूरश्याम बलि जाउँ चरणकी हरिके चरण चित भावै॥४॥

१४३

ऊधौ, अबके गये कब अइहौ॥
श्याम मिलैं तौ लइयो, ऊधौ अबके गए कब अइहौ॥
सावनमाँ हरि आवन कहिगें, भादौं भूलि ना जइहो।
क्वारमास पिय अजहुँ न आये, कपटी मित्र कहैहो॥१॥
कातिक कर्म लिखा सो होई, अगहन अग्र जनैहो।
पूसमास पिय पाला परत है, केहिके गले लपटैहो॥२॥
माघै मारि गए हरि हमका, फागुन रंग उड़ैहो।
चैतमास बन फूली चमेली, केहिके गले पहिरैहो॥३॥
बैसाख बिरहिनी बावरि होइगे, जेठै तपनि बुझैहो।
असाढ़माँ आशा पूरण कै गयो, सूरदास यश गैहो॥४॥

१४४

ऊधौ, कब अइहैं बनवारी॥
चैतमास कैसे जिय लागै, बिमल चंद्र उजियारी।
एक-एक क्षण युगसम बीतै, क्या तकदीर हमारी॥१॥

बैसाख बिपतिसो दारुण सजनी, कैसे विरह सँभारी ।
शीतल मंद सुगंध बयारी, फूलि रही फुलवारी ॥२॥
जेठहि जोग बतावत हमको, भूषण बसन उतारी ।
अंग विभूति गले मृगछाला, कानन कुंडल डारी ॥३॥
चढ़त अषाढ़ मेघ चहुँ धाये, लै दामिनि तरवारी ।
भए कठोर दया नहिं आवै, ढूँढ़त हम अस नारी ॥४॥
सावन घर घर गड़े हिंडोला, पहिन कुसुम रँग सारी ।
करि सोरह शृंगार उमँगिसे, झूलत सब नरनारी ॥५॥
भादौं रैन भयानक सजनी, सरस भई अँधियारी ।
दादुर मोर पपीहा बोलत, कल ना परत अँटारी ॥६॥
क्वार मास कुबजाने चंदन, जादू-सी करि डारी ।
रूप-स्वरूप कहाँ लगि बरनौं कूबरकी बलिहारी ॥७॥
कातिक मास लगो जब सजनी, दीपक जलैं दिवारी ।
मोरि दिवारी कुबजा लै गई, ब्रजमाँ भई अँधेरी ॥८॥
अगहनमास श्याम घर नाहीं, जो मैं जनतिउँ अगारी ।
खूँट पकरि उनके सँग जातिउँ, अब पछितात पछारी ॥९॥
पूस पड़ी मैं सेजमें लोटूँ, सखी बिरहकी मारी ।
एक तौ जाड़ा जोर परत है, दूजे विरहकी जारी ॥१०॥
माघमास उमगे दोउ जोबन, बाँधै काम सवारी ।
ऋतु बसंत आगमन जनायो, सूनी सेज हमारी ॥११॥
फागुन फीको पियबिन लागै, देंह भई सब कारी ।
धन्य धन्य सूरजमुनि तुमको, पाँव परौं बलिहारी ॥१२॥

१४५

माधव, कहि न जात गति ब्रजकी ॥
घर बछरू बन गौवें रोवैं, ग्वाल-बाल गोकुलकी ।
बृंदावन सर सूखन लागे, रोवत पंछी बनकी ॥१॥
जैसे मणिपर छुटत भुजंगम, बछरू छुटैं गौवनकी ।
ब्रज-बनिता सब हेरिकै थाकीं, जोहत पंथ चरणकी ॥२॥

जैसे मीन कमलदल सुखवत, सोचत बारि दिननकी ।
स्वातीके बूंद पपीहा जोहत, वही हाल गोपिनकी ॥३॥
लक्ष्मणदास दया करि माधव, सत्य बचन ऊधौकी ।
कृपा करौ हरि दर्शन दीजै, नहिं भरोस यहि तनकी ॥४॥

१४६

बृजकी सुनिये दशा गोसाईं ॥
रथकी ध्वजा पीत पट भूषण, देखि सबै उठि धाईं ।
कंचन-थार आरती साजे, मंगल गावत आईं ॥१॥
एक सँदेस जसोमति माता, कहत दूरि चलि आईं ।
हता कछू हमहूँसे नाता, दीनबंधु बिसराईं ॥२॥
एक समय बालापन मोहन, तन जेवर पहराईं ।
सो मोहन माटीके मुंदर, ऊधौ हाथ पठाईं ॥३॥
सूरदास बालापन मोहन, जहँ-तहँ धेनु चराईं ।
दुइ गौवें बाछा नहिं लेतीं, मानौं भईं पराईं ॥४॥

१४७

सखी, ब्रज वैसहि आज बनोरी ॥
कनक भवन मंदिर अति सुंदर, उपमा को बरणै री ।
भाँति-भाँतिके परे बिछौना, बादलपान तनो री ॥१॥
नर-नारी शृंगार,रूप हैं, देखत नयन भरो री ।
बृंदावनते गोबरधनलौं, फूला कुसुम घनो री ॥२॥
बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ, मँजिरौ रूप बनो री ।
बीच-बीच मुरली-ध्वनि बाजै, बरसै प्रेम घनो री ॥३॥
बृंदाबनकी कुंज-गलिनमाँ, घटघट व्यापि रह्यो री ।
सूरश्याम श्रीकृष्ण बिछोहत, जग-जीवन सपनो री ॥४॥

१४८

सखी, साँवरेसे कहियो मोरी ॥
रोम-रोम मद व्यापि रह्यो, मत मेरे पैर परो री ।
बारे करेजा जराय दिह्यो है, अब मैं काह करूँ री ॥१॥

निशिदिन व्याकुल फिरैं राधिका, बिरह व्यथा तन घेरी।
श्याम तुम्हैं ढूँढ़ा कुंजनमें, शीश जटा लट छोरी ॥२॥
जो कोउ सजनी आनि मिलावै,ताकी जाउँ बलिहारी।
जन्मजन्मका नुक्ता मानौं, मानौं नित्य निहोरी ॥३॥
भूषण-बसन सबै हम त्यागा, खान-पान बिसरो री।
अंग विभूति लगाकर बैठी, तुम्हरो ध्यान धरो री ॥४॥
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरशको, अवधि रही अब थोरी।
जीवदान दीजै जदुनंदन, कीरति गावौं तोरी ॥५॥

१४९

अलि मोंहि लगत बृंदावन नीको ॥
बृजमंडल मथुरा इक नगरी, निर्मल जल जमुना को।
तीर-घाटपर स्नान करनको, दर्शन गोविंदजीको ॥१॥
बृंदाबनमें बाग बहुत हैं, बिच-बिच बन तुलसीको।
कुंजन-कुंजन फिरत राधिका, शब्द सुनत मुरलीको ॥२॥
हलधर गिरिधर मुरली मनोहर, ढोटा वसुदेवजीको।
पीत-पिंतबर कम्मर सोहैं, भाल तिलक केशरको ॥३॥
आठ पहर कर जोरे रहत हैं, गरुड़देव बिनतीको।
सूरदास अस कहत राधिका, कृष्ण-राधिकाजीको ॥४॥

१५०

सखीरी, बिछुड़े मोरे कान्हा ॥
मोर-मुकुट पीताम्बर सोहैं, कुंडल झलकैं काना।
माथे सुंदर तिलक बिराजै, मोहि रहे मोरे प्राना ॥१॥
बरसानेसे चली गूजरी, नंदगाँव को जाना।
आगे केशव धेनु चरावैं, लगे प्रेमके बाना ॥२॥
सागर सूख कमल मुरझाना, हंसा कियो पयाना।
भँवरा रहिगे प्रीतिके धोखे, फेरि मिलन मन आना ॥३॥
बिंद्रावनकी कुंज गलिनमाँ, नूपुर रुनझुन ताना।
मीराको प्रभु दर्शन दीजै ब्रज, तजि अंत न जाना ॥४॥

१५१

मधुबन, तुम कस रहत हरे रे ॥
तुम तरे मोहन मुरली बजावत, शाखा पकरि खड़े रे ।
अधम निलज्ज लाज नहिं तुमको, फूले फेरि फरे रे ॥१॥
हमका आस तनिक छायाकी, जबतब रहत खड़े रे ।
तुम न जरीं वृषभानु-नंदिनी, भरि-भरि अंक गहे रें ॥२॥
जमुना ह्वै गईं स्याह श्याम बिन, जलके जीव जरे रे ।
जेहिका जरै सो मंगल गावै, देखनहार जरे रे ॥३॥
बन-बन ब्याकुल फिरत राधिका, नैनन नीर भरे रे ।
सूरश्याम प्रभु तुम्हरे दरश बिन, प्राणौं जात बहे रे ॥४॥

१५२

सुदामा मंदिर देखि डरे रे ॥
यहाँ रहै मोरि राम-मड़ैया, कंचन-कोट खड़े रे ।
यहाँ रहै इक तुलसीका बिरवा, चंदन-वृक्ष खड़े रे ॥१॥
पहिलि पँवर गज-हाथी बाँधे, दुसरी तुरंग खड़े रे ।
तिसरी पँवर बैठे बिसुकर्मा, हीरा रतन जड़े रे ॥२॥
इतउतते फिरि आये सुदामा, मनमाँ सोच भरे रे ।
लागि झरोखे परम सुंदरी, आवहु कंत घरे रे ॥३॥
चारिउ पदारथ पायौ सुदामा, दीनानाथ जड़े रे ।
सूरश्याम बलि जाउँ चरणकी, दुःख दरिद्र हरे रे ॥४॥

१५३

हरिसों मिलन सुदामा आये ॥
धोती फटी उघारे पाँयन, भेष कुभेष बनाये ।
दुर्बल गात लखात द्वारपर, कृष्णहिं मित्र बताये ॥१॥
सुनत प्रतीति मानि यदुनंदन, दौरि द्वारपर आये ।
करत प्रमोद मोद मन उरसों, मित्रहिं हृदय लगाये ॥२॥
चरण धोय चरणोदक लीन्हों, शुभ-आसन बैठाये ।
चाउर चाबि दीन्ह सब बसुधा, कंचन-महल बनाये ॥३॥

तार अपार बार ना छिनको, अजहुँ बेद यश गाये।
पुत्तीलाल दास तारनको, अब कस देर लगाये ॥४॥

१५४

मित्रके दुःख दरिद्र भगाये॥
अति दुर्बल शरीरपर अपने, वस्त्र मलीन चढ़ाये।
सकुचत दीन सुदामा मनमें, पुरी द्वारिका आये ॥१॥
पहुँचे सुंदर रंग-महलमें, कृष्ण देखि उठि धाये।
लीन लगाय हृदयसों अपने, नैनन नीर बहाये ॥२॥
देखि हँसन लागीं सब रानी, मनमाँ बहुत लजाये।
कुशल-क्षेम जब पूछन लागे, तब सकुचत बतलाये ॥३॥
गज-तुरंग-धन-वैभव दीन्हा, कनक-महल बनवाये।
धन्य-धन्य हे दीनबन्धु कहि, 'योगी' प्रभु-यश गाये ॥४॥

१५५

जबै जदुनंदन बेनु बजाई॥
बंसीकी टेर सुनी ब्रजबाला, प्रभु-चरणन उठि धाईं।
मण्डिल बाँधि सबै सखियनको, खड़े भये यदुराई ॥१॥
अपने हाथ सिंगारि सबनको, आभूषण पहिराईं।
कजरा देत माँग भरि सेंदुर, बिंदी भाल लगाई ॥२॥
जब बंसी बृंदाबन बाजी, जमुना-जल थहराईं।
चुनबो छूटि गयो पंछिनको, गौवैं डगर घर आईं ॥३॥
किन-किन किन किन बाजैं मृदंगैं, थिरकि-थिरकि थहराईं।
नौसौ घुँघरू छमाछम बाजैं, सूरदास यश गाईं ॥४॥

१५६

एक दिन बंशी श्याम बजाई॥
मोहे नाग असुर सुर मोहे, गगन बदरिया छाई।
रवि-रथ चलै न ठाढ़ बिसूरै, शम्भू ध्यान छोड़ाई ॥१॥
गौवनके चरवाहे मोहे, बछड़ा पियैं ना गाई।
उड़िकै बिहँग डारपर बैठें, मीठे फल नहिं खाई ॥२॥

सुनि मोंही बृषभानु-नंदिनी, पाँय-पियादे धाईं ।
जमुना नीर थीर ह्वै बैठेव, पवन रहे मुरझाईं ॥३॥
पसिज पषाण परे पुहुमीपर, अति ऋतु होत सिताई ।
सूरदास प्रभु आस चरणकी, हरि-चरणन चित लाई ॥४॥

१५७

आपुइ बैद बने बनवारी ॥
गलियन गलियन बैद पुकारैं, है कोइ नारि अजारी ।
अपने महलते राधा पुकारैं, द्याखौ बैद मोरि नारी ॥१॥
अँगुरी पकरिकै पहुँचा पकरैं, बाँके कुंज-बिहारी ।
रोग-दोख तोरे कछू नहींना, त्वै बिरहाकी मारी ॥२॥
आजकी रैन रहो मोरे प्यारे, सेवा करौं तुम्हारी ।
दूध भातके भोजन देबैं, स्वावौ सेज हमारी ॥३॥
साजि आरती दियना बारैं, खोलैं चंदन केंवारी ।
सूरदास रस-बस ह्वै राधा, खेलैं पंसासारी ॥४॥

१५८

राधा चंद्रबदन उजियारी ॥
सुंदर बदन बन्यो राधाको, नैन बने रतनारी ।
ई नयननमाँ कजरा सोहे, बेंदी भाल लिलारी ॥१॥
अँगुरीके पोर पोर छल्ला बिराजैं, बाजुबंद टिहुनारी ।
गले सोहै लाखनका हरवा, बिच-बिच लाल हजारी ॥२॥
सरब सोनेकी नथ बनवाई, तेहिमाँ चंद्रक भारी ।
चन्द्रक भीतर नाचै किरहिरी, लटकनकी छबि न्यारी ॥३॥
तरे सोहै मुसरूका लहँगा, ऊपर झुन्ना सारी ।
कीनखाबकी अँगिया सोहै, भँवरनकी गुलजारी ॥४॥
दीपक बारि धऱ्यो महलन पर, हनि लिह्यो चंदन केंवारी ।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, खेलैं पंसासारी ॥५॥

१५९

सखी, मनमोहन-रूप निहारो ॥
मोर-मुकुट मकराकृति कुंडल, पीतांबर पटवारो ।
कोटि काम सम सुंदर गिरिधर, जसुमति नंद दुलारो ॥१॥
जमुना-किनारे धेनु चरावैं, ओढ़े कामरि कारो ।
निर्मल जल जमुनाको कीन्ह्यो, नाग नाथि लिह्यौ कारो ॥२॥
कीन्ह्यौं कोप इंद्र ब्रज ऊपर, बरस्यो मूसर-धारो ।
ब्रजपर बूँद परन नहिं पाई, नखपर गिरिवर धारो ॥३॥
ग्वाल-बाल सब करहिं प्रशंसा, बार-बार बलिहारो ।
सूरदास हरि-रूप निहारौं, जीवन-प्रान हमारो ॥४॥

१६०

हरिसों कहेउ सँदेश हमारो ॥
ऊधौ लौटि जाहु मधुबनको, हमरी देह न जारो ।
आपन जोग दिह्यौ उनहिनको, जो कोउ होत तुम्हारो ॥१॥
ई निर्दयीको ऐस न चहिए, ब्रज तजि अंत सिधारो ।
ऐसी बनीं सकल ब्रज-बनिता, प्रेम न रह्यो सँभारो ॥२॥
अन्न बिना जस प्राण दुखित हैं, मणि बिन फणिक बिचारो ।
सो गत्ति हमरी जानो रे ऊधौ, जबते श्याम सिधारो ॥३॥
बूड़ति हौं भवके सागरमें, अबकी बेर उबारो ।
सूरदास केवट बिन नैया, तारौ चाहै बोरो ॥४॥

१६१

आली, श्याम बजावैं बीना ॥
गंगा नहायौं सुरज पैंया लाग्यौं, चंदा अरघ बहु दीन्हा ।
ऐ बिधना तोरा काह बिगार्‍यौं, छोटा कंत मोंहि दीन्हा ॥१॥
अन्न बिना जैसे प्राण दुखित हैं, जल बिन जैसे मीना ।
छोटे बलमकी नारि दुखित है, दिन-दिन होत मलीना ॥२॥
करि सिंगार पलँग चढ़ि बैठी, सुंदर नारि नगीना ।
चोलीके बँद अब करकन लागे, प्वाँछौ श्याम पसीना ॥३॥

छोटेसे मोंहि बड़ा होन दे, कछुक दिवस धरु धीरा।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, होइहौं कंत नगीना ॥४॥

१६२

किनकी लली रसीले नैना ॥
कहाँ दधि बेंचन जाव गूजरी कौन गाँव बिच रहना।
चंचल चपल गरुड़ गज गामिनि, कोकिल सम मधु बैना॥१॥
मैं बेटी वृषभानुरायकी, तुमसे लाल डरीना।
हमैं छोड़िकै तुम्हैं मनमोहन, कतहूँ चैन मिलैना ॥२॥
बिना दानके दिये गूजरी, बृजमां माल बिकैना।
दही दान इक लागै यहाँपर, मान गूजरी कहना ॥३॥
तुमतौ हौ तिनि लोकके ठाकुर, माँगत दान लज्यौना।
सूरश्याम जौ कंसा सुनिहैं, फिरि कस ब्रजमें रहना ॥४॥

१६३

सखी, मधुबनमाँ श्याम हमारे ॥
परी अचेत चेत नहिं तनमाँ, मानहु डसा भुआरे।
औषधि-मूलि कछू ना लागै, का करैं बैद बिचारे ॥१॥
बैठी-खड़ी सकल ब्रजबाला, कालिंदीके किनारे।
झुकि-झुकि नाचैं बंशी बजावैं, जादू-मंत्र पढ़ि डारैं ॥२॥
जमुना किनारे कान्हा गौवें चरावैं, मोर-मुकुट सिर धारे।
भृकुटी भाल तिलक केशरको, बाल सोहैं घुघुवारे ॥३॥
राधाके सोहै चटक चुँदरिया, श्याम पितम्बर धारे।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, देखि परैं छबि न्यारे ॥४॥

१६४

सखी, बरजौ जसुदाजी कान्हा।
होत भोर जसुदाजीके आँगन, नित उठि रोदन ठाना।
ऐरी मैया मोंहि चोरी लगावैं, मारैं नैनके बाना ॥१॥
मैं दधि बेंचन जात बृंदावन, मारगमें अठिलाना।
सरब दहीकी गागरि फोरी, धरि बहियाँ मुसक्याना ॥२॥

अबहीं तौ लालन पालन झूलैं, त्वै करि लाई बहाना।
रसकी बातैं वुइ का जानैं, जानैं खेल औ खाना ॥३॥
तुम साँची तुम्हरो सुत साँचो, हम करि लाईं बहाना।
एक राति रस-बस कै पावैं, करैं अपन मन माना ॥४॥
बृंदाबनकी कुंज-गलिनमाँ, कान्हा फिरै दिवाना।
सूरश्याम ब्रज बसिबो छाँड़ो, बसहु जाय कहुँ आना॥५॥

१६५

अबै, बन बोलन लागे मोरा ॥
नन्हि-नन्हि बुँदियन मेघ बरसिगे, घन-घुमंड चहुँ ओरा।
बादल बिजुली चमकन लागी, गिरि गोवर्धन ओरा ॥१॥
जैसे जलबिन मीन दुखित है, ध्यान धरै जल ओरा
वैसेन ध्यान रहै उन हरिपर, चितवत चंद्र-चकोरा ॥२॥
आधी रात भयानक सजनी, बिछुड़े नंद-किशोरा।
कर मींजत पछितात राधिका, चितवत हरिकी ओरा ॥३॥
ताहि समय हरि बेनु बजाई, बिंद्रावनकी ओरा।
राधेश्याम जुगल यह जोड़ी, चरणन लागी डोरा ॥४॥

१६६

हरीसों काहेको झगरीरे ॥
चलो री मैया तुम्हैं बताय देइ, जो हमसे झगरी रे।
गोरे वदनपर ओढ़े निलंबर, चंचल चपल खड़ी रे ॥१॥
तुम्हरो तो बालक बनबन घूमै, हाथ लिहे लकड़ी रे।
दधि मेरो खाय मटुकि मोरी फोरी, लूटि लेत सगरी रे॥२॥
त्वै तरुणी गिरिधर मोरे बालक, कैसेक भुज पकरी रे।
बड़े-बड़े अँसुवन गिरिधर रोवैं, त्वै मुसक्यात खड़ी रे॥३॥
तुमतौ यशोमति न्याय न बूझौ, सुतकी ओर कही रे।
सूरश्याम यहि ब्रजमाँ बसिके, को कैसे निबही रे ॥४॥

१६७

आजु मोहि ब्रज-बनिता पकरोरी।
छीनि लिह्यौ मुख मुरली पितम्बर, यह सब छीनि धरोरी।
पहिरावत चुरिया औ चुनरी, मोतिन माँग भरोरी ॥१॥

कर्णफूल औ कनकमूँदरी, कर-कंकण पहिरोरी ।
शेषनाथ नखकी यह शोभा, बेंदी तिलक करोरी ॥२॥
हमरी गागर छलकै मोहन, नहिं कहुँ नंद-किशोरी ।
आजु तौ श्याम परे गोपिन-सँग, सब मिलि घेरि लियोरी॥३॥
बृंदावनकी कुंज-गलिनमाँ, सँकरे कान्ह परोरी ।
बरणि न जाय कुंजकी शोभा, सूर श्याम झगरोरी ॥४॥

१६८

ग्वालिनि सिरपर धरे गगरिया ॥
अपने घरसे चली अकेली, सँग नहिं औरि गुजरिया ।
जायके पहुँची जमुनाघाटपर, परिगै कृष्ण नजरिया ॥१॥
काहेके तोरे गगरी-घेलना, काहेकेरि इंडोरिया ।
कौने सगरते जल भरि लैहौ, जैहौ कौनि डगरिया ॥२॥
सोनेके मोरें गगरी-घेलना, रेशमकेरि इंडोरिया ।
जमुना सगरते जल भरि लैहौं, जैहौं मथुरा नगरिया ॥३॥
भरि पिचकारी मारैं कृष्णजी, भीजै कुसुम-चुनरिया ।
अंग-अंगमें रंग बिराजै, टपकै रंग केसरिया ॥४॥
सूरदास फागुनकी होरी, रोकैं कृष्ण डगरिया ।
धरि बहियाँ मुख मलैं अबीरा, जोरैं हाथ गुजरिया ॥५॥

१६९

हरिसों मैं ना दुहैहौं गैया ॥
काहेकी तोरी बनी दोहनी, काहेकी नौरैया ।
को यह छोरै अल्हड़ बछेड़, कौन दुहावै गैया ॥१॥
सर्व सोनेकी बनी दोहनी, रेशमकी नौरैया ।
राधा छोरैं अल्हड़ बछेड़, कृष्ण दुहावैं गैया ॥२॥
सिरसे ओढ़े काली कमरिया, बैठि जाँय टिहुनैया ।
इत दोहनी उत छाँछ चलावैं, चितवैं चोरकी नैया ॥३॥
बृंदाबनकी कुंज-गलिनमाँ, कान्ह करें लरिकैया ।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, हबकि धरैं करिहैंया ॥४॥

१७०

पिया बिन बैरिन होरी आई ॥

सावन मास जब लाग री सजनी, सब सखी झूलैं हिंडोल।
बारे बलम परदेशमें छाये, पेटवै उठै कलोल ॥१॥
भादौं मास जब लाग री सजनी, सूझै ओर न छोर।
बढ़े नैन नदिया अस उमड़ें, ढहि-ढहि गिरे कगोर ॥२॥
क्वार मास ऋतु रूखे-सूखे, सुधि न लीन्ह पिय मोरि।
रोय-रोय पाती लिखै कामिनी, बहि-बहि आवैं नीर ॥३॥
कातिक मास जब लगो री सजनी, चन्दा उवै अकास।
तुलसी दियना बारिकै, मोरि भक्ति नरायन हाथ ॥४॥
पूस पोशाक मैलि भै सजनी, मैले लहर पटोर।
अपने पियाको ढूँढ़न निकसीं, अंग भभूति रमाय ॥५॥
माघै पवन झिकोरैं सजनी, जाड़ेमें रहा न जाय।
सारी राति मोंहि कलपत बीती, उठी करेजे पीर ॥६॥
फागुन मास जब लगो री सजनी, झोरिन-भरे अँबीर।
राधा रँगावैं चूनरी, श्रीकृष्ण रंगावैं पाग ॥७॥
चैत मास बन फूले टेसू, भँवरा रहे लुभाय।
का भँवरा तुम लेटो-पेटो, मोंसो सहा न जाय ॥८॥
बैशाखै चलै जलकिया सजनी, हमका कछु न सोहाय।
यह दुख परै सवति कुबरीपर, राख्यौ कंत बिलमाय ॥९॥
जेठै तपै मिरगसर सजनी, व्याकुल भयो शरीर।
ऊबि उठी तन चुवै पसीना, भीजै चोली चीर ॥१०॥
मास असाढ़ लगे जब सजनी, आवै विदेसिया तोर।
साजि आरती मिल्यो पियासों, दै यौवन झकझोर ॥११॥
बारा मास जब ह्वैगे सजनी, सूर निकारा राग।
गावै सो वैकुण्ठ सिधारै, सुनै तौन कैलास ॥१२॥

१७१

रानी औ महारानी, इनमाँ कौन राधिका रानी ॥
हँसि पूछैं रुकुमिनी सखियनसे, गूढ़ बचन मृदु बानी।
को वृषभानु-सुता कहियत हैं, हमते कहौ बखानी ॥१॥
गोरें बदनपर ओढ़ें निलम्बर, मुखपर लर लपटानी।
सो वृषभानु-सुता कहियत हैं, मंद-मंद मुसक्यानी ॥२॥
रसके बस कीन्ह्यौ मनमोहन, सुनिए परम सयानी।
ई अँखिया दरशनको तरसैं, जैसे मीन बिन पानी ॥३॥
सुर-नर-मुनि जेहि ध्यान धरत हैं, सोइ राधा महारानी।
सूरदास संतनकी महिमा, गिरिधर हाथ बिकानी ॥४॥

१७२

जब दधि मथैं यशोदा रानी ॥
खेलत-खेलत आये कन्हैया, टेक पकरि हठ ठानी।
ऐ मैया मोंहि भोजन दीजै, क्षुधा बेगि अनुमानी ॥१॥
दूध उतारन चलीं यशोदा, कृष्ण कीन्ह मनमानी।
दूध-दहीके भाजन टूरिनि, निकरि परे सैलानी ॥२॥
लैके साँटी चलीं यशोदा, कृष्ण पकरि घर आनी।
लैकै बाँधि दिह्यौ ऊखलमाँ, एक कही ना मानी ॥३॥
अपना जाय काममाँ लागीं, कृष्ण चरित तब ठानीं।
नारद बचन करन हित साँचे, दास आपनो जानी ॥४॥
तिनके परस किएते तरुवर, गिरे भूमि थहरानी।
स्तुति कैकै वैकुण्ठ सिधार्यो, चढ़े अकाश बिमानी ॥५॥
रोवत-रोवत चलीं यशोदा, कृष्ण देखि हरषानी।
सूरदास वर्णत कर जोरें, बेद बिदित यह बानी ॥६॥

१७३

मोहन जायदे जमुना पानी ॥
रोजुइ रोज भरौं जमुना-जल, नित उठि साँझ बिहानी।
कौनिउ जुगतिया जाय ना पइहौ, तुम अलमस्त जवानी ॥१॥

राहबाट ना रोकौं मोहन, घरमाँ देवर-जेठानी।
राधा पड़ोसिन बैर करत है, बोलै आनकी बानी ॥२॥
कबते करौ जुगतिया मोहन, हम तुमका पहिचानी।
छीनि-छोरि दधि खायो कुंजनमाँ, निरख्यौ नारि बिरानी ॥३॥
यहिपार मथुरा वहिपार गोकुल, बीचमें रंगा उड़ानी।
जाय जनावौं कंस राजाको, तुम राजा हम रानी ॥४॥
मोहन तुम्हरी बातें सुनिकै, छाती मोरि हुलसानी।
सूरश्याम संतनकी सेवा, गिरिधर हाथ बिकानी ॥५॥

१७४

बृषभानुकी राजदुलारी, अबै दधि बेंचि आउ बिंद्राबनमाँ ॥
कहँवाकी तुम सुघड़ ग्वालिनी, कहाँ दही लै जाउ।
कौनै राजाकी राजि बसति हौ, काह तुम्हारो नाम ॥१॥
मथुराकी हम सुघड़ ग्वालिनी, गोकुल दही लै जाँउ।
कंस राजाकी राजि बसति हौं, राधा हमारो नाम ॥२॥
इहाँ दहीकर दान लगत है, देहु दहीका दान।
दान दिए बिन जाय न पैहौ, धरिद्यौ गहने हार ॥३॥
हार धरनको तुम काहत हौ, कमरीके ओढ़न-हार।
तुलसीदास भजौ भगवानैं, पार न पैहौ पेस ॥४॥

१७५

कान्हा हमसे न बोलौ हँसिकै ॥
रेजा-रेजा करैं कलेजा, औषधि लावहु घसिकै।
जो कोउ लावै श्याम बैदका, तौ उठि बैठौं हँसिकै ॥१॥
मैं जमुनाजल भरन जात रहवुं, सिरपर गागरि धरिकै।
वही जगा मोरी बहियाँ मरोरी, राधा राधा कहिकै ॥२॥
जमुना किनारे कान्हा गौवैं चरावैं, मुखपर मुरली धरिकै।
मुरलीके भीतर गारी देत हैं, मानौं कालिया डसिकै ॥३॥
सूनी सेज नींद नहिं आवै, मैं व्याकुल तनमनते।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, काह करब ब्रज बसिकै ॥४॥

१७६

कन्हैया मधुबनते बनि आये ॥
कहाँसे आये वुइ शिवशंकर, कहाँसे आये राम ।
कहाँसे आवा गर्वी रावणा, कहाँसे आये कान्ह ॥१॥
कैलाशसे आये वुइ शिवशंकर, अवधसे आये राम ।
लंकासे आवा गर्वी रावणा, गोकुलसे आये कान्ह ॥२॥
काह चढ़े शिवशंकर आये, काह चढ़े वुइ राम ।
काहे चढ़ा वह गर्वी रावणा, काह चढ़े वुइ कान्ह ॥३॥
बैल चढ़े शिवशंकर आये, गरुड़ चढ़े वुइ राम ।
रथ चढ़ि आवा गर्वी रावणा, हाथी चढ़े वुइ कान्ह ॥४॥

१७७

गूजरि तुम मेरी गेंद चुराई ॥
अबहीं तौ गेंद परी रही मारग, तुम गूजरि दुबकाई ।
लैकै भागि गइउ तुम घरका, आजु अकेले पाई ॥१॥
हम ना देखी गेंद तुम्हारी, नाहक हमैं लगाई ।
जाय जनैहौं कंस राजाको, देहौं ब्रज निकसाई ॥२॥
चुप्पचाप ह्वै रहौ ग्वालिनी, सन्मुख जीभि चलाई ।
जौ बल राखौ कंस राजाको, कति दधि बेंचन आई ॥३॥
सूरदास भजु बालकृष्ण छबि, हरि चरणन चित लाई ।
एक गेंदकी दुइ लैलेहौं, कंसकी ठसक दिखाई ॥४॥

१७८

अबना जियब मोरी माँई । राधा मोरी बंशी चुराई ॥
खेलत रह्यों कदमकी छइयाँ, सब सखियन बिलमाई ।
बाँह पकरिकै मुरली छीनि लई, कान्ह रोवत घर आई ॥१॥
लै कनिया समुझावै यशोमति, बार बार उर लाई ।
बाँसकी बंसी जान दे मोहन, सोनेकी देउँ गढ़ाई ॥२॥
यह बंसी सुरपुरते आई, बाबा नंद मँगाई ।
सो बंसी मोरे प्राण बसत है, कैसे जात बनाई ॥३॥

शिव ब्रह्मा जेहि ध्यान धरत है, सोई कृष्ण कन्हाई ।
सूरश्याम प्रभु रसिक-शिरोमणि, भक्तनके सुखदाई ॥४॥

१७९

आजु ब्रज महा घटा घन घेरो ॥
इन्द्रने हुकुम दिह्यौ मेघनको, ब्रज ऊपर करो डेरो ।
गोकुल आजु बचै ना पावै, करि डारो जलबोरो ॥१॥
छप्पन कोटि मेघ उठि धाये, ब्रजपर किह्यो बसेरो ।
मूसलधार महाजल बरसै, ह्वै गयो दिवस अँधेरो ॥२॥
गोपीग्वाल बिहाल भये हैं, कृष्ण-कृष्ण किह्यो टेरो ।
गोपीनाथ राखु यहि अवसर, सब चितवत मुख तेरो ॥३॥
इतना सुन्यो यशोदानंदन, गोवर्धन तन हेरो ।
लिह्यौ उठाय बाम कर गिरिवर, लै ब्रज ऊपर फेरो ॥४॥
सात दिवस मेघवै झरि लाये, हारि मानि मुख फेरो ।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, बूँद न आवत नेरो ॥५॥

१८०

बृजमाँ लाज लिह्यौ मोरी कान्हा ॥
छोरिकै पट घरमाँ धरि आइउँ, सास ननद पहिचाना ।
मन मलीन तन सुंदर कैसे, रँगा रूप मुरझाना ॥१॥
मैं जमुनाजल भरन जात रहुँ, मारग कान्ह लुकाना ।
लौटि परी चट गागरि धरिकै, ढूँढ़त कंत हेराना ॥२॥
बृंदाबनकी कुंज गलिनमाँ, कान्हा फिरै दिवाना ।
दौरि झपटि मोरी अँगिया पकरी, धरि चोली मुसक्याना ॥३॥
सूरश्यामकी गली न जैहौं, वे बड़े चतुर चतुर सयाना ।
हाथ जोरि बिनती करि थाकी, एकौ कही न माना ॥४॥

१८१

यशोदा, मैं नाहीं दधि खाई ॥
भोर होत गौवनके पीछे, मधुबन मोंहि पठाई ।
तीनि पहर बंसीबट भरम्यो, साँझ होत घर आई ॥१॥

ब्रजकी सखी सब लाईं उलहना, यशुमति उठीं रिसाई।
लाल मेरो पलनामाँ झूलै, झूँठ उलहना लाईं ॥२॥
मैं ढोटा पाँयनको छोटा, कहु कैसे दधि पाई।
ब्रजकी सखी सब दौरि परी हैं, लै दहिया मुख लाईं ॥३॥
किलकत बदन उभरि आईं दँतियाँ, तीनि लोक दरसाई।
सूरश्याम बलि जाउँ चरणकी, यशुमति अंग लगाई ॥४॥

१८२

ब्रजमें खेलत कुँअर-कन्हाई॥
प्रात समय जब कंसा जागा, पंडितको बुलवाई।
तुमतौ कहौ कि बालक होइहै, कन्या कहाँते आई ॥१॥
खोलिकै पत्रा पंडित बैठे, अर्थै अर्थ लगाई।
बालक रहा सो गोकुल पहुँचा, तेहिका करौ उपाई ॥२॥
लै वसुदेव चले गोकुलको, जमुना चरणन धाई।
पीछे उनके सिंह दहाड़े, प्राण बहुत अकुलाई ॥३॥
यहाँसे पहुँचे नंद-भवनमें, बालक दिह्यौ सुलाई।
कन्या लैकै मधुपुर लौटे, सूरदास यश गाई ॥४॥

१८३

अब मेरो नेह लगो उन हरिसों॥
आयो बसंत सबै बन फूले, खेतन फूली सरसों।
पेरि भइउँ मैं हरिके बियोगन, निकसत प्राण अधरसों ॥१॥
फागुनमाँ सब रँग खेलति हैं, अपने-अपने बरसों।
पिय-वियोग जोगन ह्वै निकसी, धूरि उड़ावत करसों ॥२॥
जो कोउ जाय द्वारिकै ऊधो, कह्यो सँदेस उन हरिसों।
विरह-व्यथासे जिय घबरावै, जबसे गये हरि घरसों ॥३॥
सूरश्यामसे इतनी अरज है, कृपासिंधु गिरिधरसों।
गहरी नदिया नाव झाँझरी, पार करो सागरसों ॥४॥

१८४

कहुँ देखे बंशीवाला री॥
पात-पात बृंदाबन ढूँढ्यो, पायन परिगे छाला।
अंत खोज कतहूँ नहिं पायो, ताते फिरौं बिहाला री ॥१॥

यमुना किनारे गौवैं चरावैं, बैठि कदमकी छइयाँ।
मोर-मुकुट मुरली कर सोहै, वही नंदका लाला री ॥२॥
मोरपंख शिर ऊपर सोहै, कानन सोहै बाली।
पीतपितम्बर कटिमें सोहै, गल मोतियनकी माला री ॥३॥
बृंदाबनकी कुंज-गलिनमाँ, काँधे धरे दुशाला।
सूरदास छबि कहँ लगि बरणौं, गोपी भई निहाला री ॥४॥

१८५

आजु हरि नटवर-भेष बनायो ॥
नूपुर पगनू पग घुंघुरवा सारी सुभग ओढ़ायो।
बेंदी भाल नयन-बिच काजर, नक-बेसर पहिरायो ॥१॥
राधे लिह्यौ उठाय श्यामको, लै उछंग बैठायो।
कजरा देत श्याम-नयनन बिच, मंद-मंद मुसकायो ॥२॥
बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ, गावत फाग सुहायो।
बिंद्राबनकी कुंज-गलिनमाँ, मोहन रहस रचायो ॥३॥
कुंकुम रंग अरग जहँ केशर, रंग सुरंग बोरायो।
छिरकत श्याम राधिका ऊपर, सूरदास यश गायो ॥४॥

१८६

ब्रजमें कौन श्याम बिलमायो ॥
ब्रज तजि गमन कीन्ह यदुनंदन, कंसने पकरि मँगायो
फिर अक्रूर क्रूर प्रभु पठयो, हीरा-रतन जड़ायो ॥१॥
पकरि गयंद दंत दुइ तोरेव, पकरिकै सुंड घुमायो।
कंस मारि धरनीपर डार्‌यौ, देवतन अति सुख पायो ॥२॥
वासुदेव कारामें पहने, तिन्हैं काढ़ि नहवायो।
रत्न-सिंहासन गद्दी दीन्ही, भूषण सब पहिरायो ॥३॥
तब नहिं संग गयो माधवके, फिरि अब क्यों पछतायो।
सूरश्याम बस कीन्ह कुबरिया, जाय द्वारिका छायो ॥४॥

१८७

महादेव जोगिया बनि आयो ॥
बाघंबर पीतांबर ओढ़े, शीष नाग लपटायो।
माथे वाके तिलक चंद्रमा, जोगी जटा बढ़ायो ॥१॥

गढ़ परबतते चला दिगंबर, गोकुल नगरी आयो।
द्वारा पूँछत नंदबबाको, अलख-अलख गोहरायो ॥२॥
लै भिक्षा निकरीं नँदरानी, मोतिन थार सजायो।
लेव भिक्षा जोगी जाव आसनका, मेरो गोपाल डेरायो ॥३॥
ना चहिए तोरी दुनिया-दौलत, ना तेरो माल खजानो।
लै आवो अपने बालकको, जोगी दरशको आयो ॥४॥
कि जोगी तुम भूले-भटके, की काहू भरमायो।
दूध-दहीकी बेंचनहारी, मैं बालक कहँ पायो ॥५॥
ना जोगी हम भूले भटके, ना काहू भरमायो।
तीनि लोक त्रिभुवनके ठाकुर, बालक-रूप दिखायो ॥६॥
लै बालक निकरीं नँदरानी, जोगी दर्शन पायो।
पाँच पैग परिकरमा कैकै, श्रृंगी नाद बजायो ॥७॥

१८८

बाबा, मैं योगी यश गाया ॥

तेरे सुतके दर्शन-कारण, मैं काशी तजि आया ॥
पारब्रह्म पूरण पुरुषोत्तम, सकल लोककी माया ॥१॥
अलख-निरंजन देखन कारण, सकल लोक फिरि आया।
धन्य भाग्य है तेरो यशोमति, जिन ऐसो सुत जाया ॥२॥
जो भावै सो लेलो बाबा, करौ आपनी दाया।
देहु अशीष मोरे बालकको, अविचल बाढ़े काया ॥३॥
ना मैं लेहौं पीत-पितम्बर, ना मैं लेहौं माया।
देखा चहौं बालमुख हरिका, यह मम गुरू बताया ॥४॥
कर जोरै बिनवै नँदरानी, सुनु योगिनके राया।
आकृति देखि आपकी योगी, बालक जात डेराया ॥५॥
जाकी दृष्टि सकल-जग ऊपर, सो कस जाय डेराया।
तीनि लोकका साहब मेरा, तेरे भवन छिपाया ॥६॥

कृष्णलालको लाईं यशोमति, करि आँचरकी छाया ।
गोद पसारि चरण-रज लीन्ही, अति आनंद बढ़ाया ॥७॥
निरखि-निरखि मुख-पंकज-लोचन, नयन नीर भरि आया ।
सूरश्याम परिकर्मा करिकै, शृंगी-नाद बजाया ॥८॥

१८९

आजु राधावर ख्यालैं होरी ॥
एक समय ब्रजकी सब बनिता, हरखि चलीं जल ओरी ।
मंजन-हेतु धँसी जमुनामाँ, कोउ साँवरि कोउ गोरी ॥१॥
ताहि समय ब्रजराज साँवरो, जमुना तट पहुँचोरी ।
लैकै चीर कदम चढ़ि बैठ्यो, लैगयो चीर बटोरी ॥२॥
जब जलते उमकीं ब्रजबाला, कोउ नाहिं दृष्टि परोरी ।
जमुना-तट पट देखन लागीं, सबते कहैं सुनौरी ॥३॥
सब सखियाँ पट ढूँढ़न निकसीं, बिंद्राबनकी ओरी ।
तामें एक चतुर ब्रज-बनिता, कहै कदमपर गोरी ॥४॥
सब सखियाँ पट माँगन लागीं, श्याम सखा कर जोरी ।
पट दीजै ब्रजराज सावरो, हा हा करैं बहोरी ॥५॥
बोले श्याम मधुर-रस-बतियाँ, तुम सब लाज तजोरी ।
लाज छोंड़ि सन्मुख जब ऐहौ, तब पट पैहौ गोरी ॥६॥
सब सखियां मिलि यही बिचारा, अब का जतन करोरी ।
पुरइनि पात पहिरि जब निकसीं, नख शिख देखि हँसोरी ॥७॥
जाकी जितनी मनोकामना, तो तस कीन्ह बहोरी ।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, जिन यह होरी रँग बोरी ॥८॥

१९०

बृजमें खेलत गेंद कन्हैया ॥
मथुरामें हरि जन्म लिह्यो है, गोकुल बजत बधैया ।
ब्रज-बासिनको रूप- रसिक है, कंसको अंत करैया ॥१॥
मोर-मुकुट मकराकृति कुंडल, मुरली अधर धरैया ।
मैया जैहैं गैया चरावन, खेलिहैं चकई-भवैया ॥२॥

लैकै सखा चले मनमोहन, वही कदमकी छैयाँ।
जीते सखा चोर भये माधव, दीजै दाँव कन्हैया ॥३॥
खेलत गेंद गिर्‍यौ जमुनामाँ, दामाजी बोले रिसैया।
तुमही अनोखे ब्रजमाँ भयो है, बड़े बापके भैया ॥४॥
कसि पीताम्बर चढ़े कदमपर, कूदि परे हहरैया।
जैसे गज जलको मथि डारै, जमुनामें करत डकैया ॥५॥
कर जोरे नागिन उठि बोली, सुनलो बाल कन्हैया।
जो जागेंगे कंत हमारे, तुम्हैं पकरि डसि खैया ॥६॥
गर्वित बचन सुन्यो नागिनके, बोले कुँअर कन्हैया।
नाग नाथिकै कमल लदैहौं, कंसको भेंट करैया ॥७॥
लात मारिकै नाग जगायौ, उठे नाग फफकैया।
फणपर नृत्य करन जब लागे, देवन ताल बजैया ॥८॥
कृष्णके भार बिकल भयो काली, मुखसे रुधिर बहैया।
कंत दान दीजै जदुनंदन, तुम तौ मोरि गोसैयाँ ॥९॥
रमणक देश जाहु तुम काली, वहाँके राज्य करैया।
चरण-चिह्न खगपति जब देखिहैं, तुमसे न उजर करैया॥१०॥
ब्रजबासी व्याकुल उठि धाये, नंद-यशोदा मैया।
दाहमें प्राण देन जब लागे, हलधर धीर धरैया ॥११॥
रात्री- शयन दाहपर कीन्हो, दैत्यने दाँव रचैया।
भक्त-हेत दावानल लागी, ताको पान करैया ॥१२॥
यह लीला ब्रजराज कुँअरकी, कहै सुनै चित लैया।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, ते बैकुंठ बसैया ॥१३॥

१९१

बृजमें रामकृष्ण दोउ भाई॥
प्रात समय जब कंसा जागा, बीरनको बुलवाई।
नंद-गोप घर बालक उपजा, तिनके प्राण नसाई ॥१॥
इतना सुनिकै चली पूतना, कुचमें जहर लगाई।
सोरहौ सिंगार अभूषण पहिरे, सुंदर रूप बनाई ॥२॥

रूप मोहिनी धर्‍यो पूतना, नंद-भवनको आई।
ग्वालबाल सब मोहि लिह्यो है, तुरत कृष्ण ढिग आई ॥३॥
पलनामें हरि आँखी मूँद्यौ, तिनको गोद उठाई।
जहर-भरा कुच मुँहमें दीन्ह्यौं, पय पीवन मन लाई ॥४॥
पयके साथ प्राण जब खींच्यौ, मरन लगी अकुलाई।
लकै उड़ी कृष्णको तबहीं, गिरी गहन बन आई ॥५॥
ढूँढ़त-ढूँढ़त चलीं यशोदा, संग गोपिका धाईं।
खेलैं उदर पूतना केरें, लीन्ह्यौ हृदय लगाई ॥६॥
कृष्ण-अंगकी रक्षा कीन्हे, भवन आपने आईं।
बिप्र बोलाय दक्षिणा दीन्हीं, बाजन लगी बधाई ॥७॥
शिवमंगल भाषत कर जोरे, रामकृष्ण गुण गाई।
जीवदान दीजै जदुनंदन, तेरी कीरति गाई ॥८॥

१९२

दधि मोरि कन्हैया लूटि लई ॥
मास असाढ़ लगे जब सखीरी, धरती किह्यौ सिंगार।
पहिरी हरेरी चूरिया, गज-मोतिनकेरो हार सही ॥१॥
सावन मास जब लगे सखीरी, चरै सुराही गाय।
दोहनी लैकै राधा चलीं, श्रीकृष्ण दुहावन जाँय सही ॥२॥
भादौं मास जब लगे सखीरी, पड़ैं बड़े-बड़े बूँद।
सेज सँवारैं राधिका, सुख सोवैं बाल गोविंद सही ॥३॥
क्वार मास जब लगे सखीरी, फूलि रही फुलवारी।
फूल उतारैं राधिका, श्रीकृष्ण चढ़ावन जाँय सही ॥४॥
कातिक मास जब लगे सखीरी, दियना जलैं अकाश।
तुलसी दियना बारिकै, जब भक्त नरायण हाथ सही ॥५॥
अगहन मास जब लगे सखीरी, बहु बिधि बाढ़ै ग्यान।
सुंदर भोग दिह्यौ कुबजाको, हमका दिह्यौ बियोग सही ॥६॥
पूस पुराने ह्वैगये; अब छोरि धरौ ब्रज नारी।
चीर दाक्खिना पहिरिकै तुम पूजौ शालीग्राम सही ॥७॥

माघ मास जब लगे सखीरी, पकै दूधकी खीर।
खीर पकावैं राधिका, सुख जेवैं बालगोविंद सही ॥८॥
फागुनमास जब लगे सखीरी, होय बिरजमाँ फाग।
राधा गावैं गायना, श्रीकृष्ण बजावैं ढोल सही ॥९॥
चैतमास जब लगे सखीरी, सूखि गई फुलवारी।
मन-मन सोचैं राधिका, श्रीकृष्ण चढ़ावैं काह सही ॥१०॥
बैसाखै जमुना निर्मली, ब्रज कान्ह डफैयाँ लेयँ।
न्हाय धोयके खड़े भये सब, गोप बलैयाँ लेयँ सही ॥११॥
जेठ मास जब लगे सखीरी, ह्वैगे बारह मास।
गावै सो वैकुंठ सिधारैं, सुनवैया कैलाश सही ॥१२॥

१९३

आजु ब्रजमें हरि होरी मचाई ॥
बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ, मंजीरा शहनाई।
उड़ै गुलाल लाल भे बादर, रोरि सकल ब्रज छाई ॥१॥
इतते आवत सुघर राधिका, उतते कुँअर कन्हाई।
हिलिमिलि फाग परस्पर खेलैं, शोभा बरणि ना जाई ॥२॥
राधे सैन दिह्यौ सखियनको, झुंड-झुंड उठि धाई।
लपटि-झपटि गई श्यामसुँदरको, बरबस पकरि लै आई ॥३॥
छीनि लिह्यौ मुख मुरली पितम्बर, शिरसे चुनरि ओढ़ाई।
बेंदी भाल नयन-बिच काजर, नकबेसर पहिराई ॥४॥
सिसकति हौ मुख मोरि-मोरिकै, कहाँ गई चतुराई।
कहाँ गए वै नंदबबाजी, कहाँ जसोमति माई ॥५॥
फगुवा दिहे बिन जाय न पैहौ, करिहौ कौन उपाई।
लेहौं चुकाय कसरि सब दिनकी, तुम बड़े चोर चबाई ॥६॥
फगुवा लैके निकरीं जसोमति, मेवा मधुर मिठाई।
फगुवा अपना लियौ गूजरी, छोड़ौ मेरो कन्हाई ॥७॥
बृंदाबनमाँ रास रचायो, बृजबनिता-यदुराई।
राधेश्याम जुगुल यह जोड़ी, सूरदास यश गाई ॥८॥

१९४

अब हरि होइगे द्वारिका बासी ॥
माघ उतरिगे फागुन लागे, वृक्षन झरिगै पाती।
बिना पियाकी सेज सूनि है, जैसे दिया बिन बाती ॥१॥
रोय-रोय राधा विकल भई हैं, प्राण भए अब घाती।
रोय-रोय नैन भए रतनारे, बज्र भई यह छाती ॥२॥
मथुरामाँ हरि जन्म लिह्यौ है, गोकुल भूमि कहाती।
कुबरीका लैकै निकरि गए हैं, गौवैं मरैं पियासी ॥३॥
ऊधौ आवैं जोग सिखावैं, लिखि-लिखि लावैं पाती।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, हरि-चरणनकी दासी ॥४॥

१९५

कन्हैया गागरि मोरी फोरी ॥
मैं जमुना-जल भरन जात रहूयुं, संग लिहे सब गोरी।
आवा कन्हैया बेनु बजावत, लैगा चीर बहोरी ॥१॥
लैकै ओरहना चलीं गूजरी, यशुमति केरी ओरी।
बरजौ जसुमति अपने लालको, हमसे करै झकझोरी ॥२॥
अबहीं तौ लालन पालन झुलत रहे, दूध पियैं बरजोरी।
तुमतौ गोरी आपु चंचला, काहे लगावौ चोरी ॥३॥
तुमतौ जसोमति न्याय न बूझौ, सुतकी ओर कहौरी।
कबहूँ तौ पैहौं अपने महलमें, लेहौं पितम्बर छोरी ॥४॥
बृंदाबनकी कुंज-गलिनमाँ, कान्ह करै झकझोरी।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, सब चितवैं मुख तोरी ॥५॥

१९६

मन लागा रहै दिन राति। कहै कोउ परदेसीकी बात ॥
वई ब्रजलता वइ बन कुंजन, वई तरुवर वई पात।
जबते बिछुड़े नंद-साँवरे, ना कोउ आवत-जात ॥१॥
मंडिल अर्ध अवधि हरि बदिगे, हरि-अहार टरि जात।
अजया-भखु अनुसारत नाहीं, कैसेक दिवस सेरात ॥२॥

शशि-रिपु वर्ष भानु-रिपु युग-सम, हर-रिपु किये रहे घात ।
नखत-बेद-ग्रह तासु अर्ध करि, सोइ बनत अब खात ॥३॥
मन-पंचक लै गयो साँवरो, ताते जिय अकुलात ।
सूरदास ब्रज बिकल बिरहिनी, कर मींजत पछितात ॥४॥

१९७

मैया चंद्र खिलौना लेहौं ॥
लख योजन यहु बसै चंद्रमा, तेहिका कैसे पैहौं ।
मचलि लाल पलनापर रोवैं, कौनि जतन समुझैहौं ॥१॥
सुरभीका मैं दूध न पीहौं, सिर चोटी न बँधैहौं ।
मोर-मुकुट माथे न धरैहौं, मुरली मुख न बजैहौं ॥२॥
भुइमाँ गिरौं धूरिमाँ लौटौं, तोरी गोद ना अइहौं ।
ढोटा होइहौं नंदबबाको, तेरो सुत न कहैहौं ॥३॥
आवौ लाल बलैया लेहौं, बलदेवै न बतैहौं ।
अति सुकुमार यहूते निर्मल, तोहिं दुलहनियाँ लैहौं ॥४॥
मातारी मैं दुलहा होइहौं, अबहीं बियाहन जैहौं ।
सूरदास बैकुंठ बराती, मोर मनोरथ पैहौं ॥५॥

१९८

गावैं बेनु बजावैं सखी, गोपाल गलिनमाँ गावैं ॥
गावत-गावत हुआँ गए, जहँ परी साँकरी गैल ।
जाय न पावै रंगमहल, तुम लावौ सबै मिलि घेरि ॥१॥
राधेने इक अंजन बनवा, नौ अँगुरी दस पोर ।
दैकै बैठीं परमसुंदरी, चितवौ हमरी ओर ॥२॥
जितनी सिटकी भुइमाँ परी हैं, उतनी गढ़ा कुम्हार ।
उतने रावण ह्वै गये, गढ़ लंकाके दरबार ॥३॥
उड़े गुलाल लाल भे बादर, मचिगै धुंधाकारी ।
रंगाके ऊपर रंगा चुवै, हरि छिरकौ हमरी ओर ॥४॥

१९९

भई राधिका चोर कन्हैया, तेरी मुरलीके कारन ॥
कहैं सासजी सुनौ बहुरिया, दधि बेंचन मत जाव ।
बीचै मिलिहै नंद-साँवरो, लैहै सब दधि छीनि ॥१॥

कहै बहुरिया सुनौ सासजी, दधि बेंचन हम जाब ।
जो मोंहि मिलिहैं नंदसावरो, लेहौं पितम्बर छीनि ॥२॥
बरसाने से चली गूजरी, करि सोरहौ सिंगार ।
एक राति बृन्दाबन बसिकै, गई जमुनाके तीर ॥३॥
कहै गूजरी सुनौ कृष्णजी, हमरा फाटै चीर ।
जाय जनावौं कंस रजाकौ, पकरि मँगावौं खींचि ॥४॥
दधि मोरी खाय मट्ठकि मोरी फोरी, दही मिलायौ कीच ।
हमतौ हैं बृषभानु-नंदिनी, तुमतौ जाति अहीर ॥५॥
चंद्रमुखी मोहनका मिलना, होय न बारम्बार ।
सूरश्याम अलग्योजे वाला, लै गयो संग लेवाय ॥६॥

२००

जबते बिछुरे कुंज-बिहारी ॥
नींद न परै घटत नहीं रजनी, बिरह व्यथा ज्वर भारी ।
धिक् सुंदरी विरहकी वेदन, जगमें रहै उजारी ॥१॥
रविकी रस्मि लगत अनताती, यह शीतल शशि जारी ।
नैनन देखि सोहाय सखीना, पिक चातक द्रुम डारी ॥२॥
तबहि न भावत अति आतुर ह्वै, कंगन जौन उतारी ।
श्याम सुंदर बिन विष लागति है, कुसुम-सेज ज्वर जारी॥३॥
बिलखे बदन बृषभानुनंदिनी, निंदति कपि रिपु हारी ।
शिव मंगल भाषत कर जोर, विरह-व्यथा तन जारी ॥४॥

२०१

हमका ब्रजनारि सतौती हैं ॥
गली-गलीकी कुआँ-बावली, रेशम-डोरि डरौती हैं ।
सर्व सोनेके गगरी घैलना, हमसे पकरि भरौती हैं ॥१॥
अपने घरका काम खुरदरा, हमसे सब करवौती हैं ।
गरू हेल गोबरका झौवा, हमरे मूड़े धरौती हैं ॥२॥
हरा घाँघरा सुर्ख चूनरी, सब गहना पहिरौती हैं ।
मर्दका भेष जनाना करिकै, अपने साथ पिसौती ॥३॥

बृंदाबनकी कुंज-गलिनमाँ, बंशी मोरि छिनौती हैं।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, माँगेते गरिऔती हैं ॥४॥

२०२

मोहन अँगिया दियौ हमारी, हम जाबै घरमाँ मारी ॥
कहँवाकी तोरी अँगिया-बिँगिया, कहँवाकी तोरी सारी।
कहँवाका रँगरेज रँगा है, कहवाँ लागि किनारी ॥१॥
दिल्ली सहरकी अँगिया-बिँगिया, धुर पटनाकी सारी।
मथुराका रँगरेज रँगा है, गोकुलै लागि किनारी ॥२॥
कै लखकी तोरी अँगिया-बिँगिया, कै लखकी तोरी सारी।
कै लखमाँ रँगरेज रँगा है, कै लख लागि किनारी ॥३॥
एक लाखकी अँगिया-बिँगिया, दुइ लखकी मोरी सारी।
तीनि लाख रँगरेज रँगा है, चारि लख लागि किनारी ॥४॥

२०३

सखी, कहुँ कंत दृगंतर छाये ॥
आभूषण आनँद सब लोचन, ताबाहन दिन आये।
कबहुँ लौटि हरि मोरे घर अइहैं, रहिहौं आस लगाये ॥१॥
लेपिल अलिल उचित चारिउ दिशि, ऐन अजीर छिपाये।
दरकित हृदय मोर सुत आये, छिन-छिन प्रकट दुराये ॥२॥
ऐसे निठुर भये मनमोहन, फेरि लौटि ना आये।
योगकी पाती हमैं पठावैं, गिरि चढ़ि गिरा सुनाये ॥३॥
आठ गुन्न दस सुन्न सहस गुन, सोरह गुन बिसराये।
सूरश्याम कहुँ अंत बिलमि रहे, या ऋतु काहे न आये ॥४॥

२०४

झमाझम बाजि रही पैंजनिया ॥
किनने गढ़ावा पग-पैंजनिया, किनने गढ़ावा करधनिया।
किनने गढ़ावा मोहनमाला, किनने गढ़ाई लटकनिया ॥१॥
सास गढ़ावा पग-पैंजनिया, ससुर गढ़ावा करधनिया।
सैंये गढ़ाई मोहनमाला, देवरै गढ़ाई लटकनिया ॥२॥

कहाँ सोहै तोरे पग-पैंजनिया, कहाँ सोहै करधनिया।
कहाँ सोहै तोरे मोहनमाला, कहाँ सोहै लटकनिया ॥३॥
पग सोहै मोरे पग-पैंजनिया, कमर सोहै करधनिया।
गले सोहै मोरे मोहनमाला, नाक सोहै लटकनिया ॥४॥
कै लखकी तोरी पग-पैंजनिया, कै लखकी करधनिया।
कै लखनकी तोरी मोहनमाला, कै लखकी लटकनिया ॥५॥
इक लखकी मोरी पग-पैंजनिया, दुइ लखकी करधनिया।
तीनि लाखकी मोहनमाला, चारि लाख लटकनिया ॥६॥
काहेकी तोरी पग पैंजनिया, काहिकी करधनिया।
काहेकी तोरी मोहनमाला, काहेकी लटकनिया ॥७॥
चाँदीकी मोरी पग पैंजनिया, सोनकी करधनिया।
मूँगनकी मोरी मोहनमाला, मोतिनकी लटकनिया ॥८॥

२०५

भजु मन कृष्ण-चरण दिन राती ॥
रसना भजौ कृष्ण कोमलपद, नाम लेत अलसाती।
जाके भजे मिटत दारुण दुख, तिनको क्यों बिसराती ॥१॥
जाको सुर मुनि ध्यान धरत हैं, ब्रह्मा वेद कहाती।
कृष्णचंद्रको नाम अमी-रस, सो रस क्यों नहीं पीती ॥२॥
जाके भजे कपट-भव-बंधन, कलि-त्रयताप नसाती।
बदत पुराण सुयश राधाबर, आनँद हिय न समाती ॥३॥
संवत् उनइससौ सत्तावन, जेठ मास रवि स्वाती।
शिवमंगल यह विनय करत हैं, कृष्ण अरजकी पाती ॥४॥

२०६

भजु मन श्रीकृष्ण बनवारी ॥
कृष्ण नाम भजिले मन-मूरख, काहे करत अबारी।
द्रुपदसुताकी लाज बचाई, बाढ़ी है अति सारी ॥१॥
ध्रुवको दर्शन बनमें दीन्हेव, रूप चतुर्भुज धारी।
राज-पाट धन-धाम दिह्यौ सब, ध्रुवको घर लौटारी ॥२॥

मात-पिताकी बंदी छोड़ाई, कंसराज संहारी।
वृंदाबनमें मुरली बजावैं, बिहरत फिरैं मुरारी ॥३॥
चारों युग भक्तनके कारन, लीन मनुज अवतारी।
रामस्वरूप परमपद पावैं, करौ कृपा गिरिधारी ॥४॥

२०७

सखी, साँवले से प्रीति करो री ॥
प्रात समय ब्रजकी सब बनिता, जमुना-तटकी ओरी।
चीर उतारि धरैं तट ऊपर, मज्जन केलि करोरी ॥१॥
गौरीकी सब मूर्ति बनावैं, पूजन करैं बहोरी।
मधुसूदन पति होय हमारो, यह माँगैं करजोरी ॥२॥
ऐसो नेम करैं ब्रज-बनिता, कृष्ण-चरण चित चोरी।
मैलै बसन हव्यके भोजन, भुइमाँ शयन करैंरी ॥३॥
लैकै सखा चले मनमोहन, यमुनातटकी ओरी।
चीर उठाय कदमपर बैठे, बंशी तान करोरी ॥४॥
चीरपै दृष्टि गई गोपिनकी, बोलीं सब कर जोरी।
गोपीनाथ चीर अब दीजै, हम सब दासी तोरी ॥५॥
नग्न स्नान कीन्ह्यौ जल भीतर, निष्फल बरत भयोरी।
सूर्यदेवकी स्तुति अनुसारौ, पूरी आस करैंरी ॥६॥
पहिरो अपने चीर गोपियौ, गवनौ भवन बहोरी।
हम-तुममें कछु अंतर नाहीं, मेरो ध्यान करोरी ॥७॥
शरद् रैनमें रहस रच्यो है, मन्मथ साथ करोरी।
शिवमंगल भाषत कर जोरे, गावैं रहस बहोरी ॥८॥

२०८

राधे किलकत छैल-छबीली ॥
कुच कुंकुम कुंचुकि बँद टूटे, लटकि रही लट गीली।
बंदन शिर ताटंक गंडपर, रत्न-जटित मणि नीली ॥१॥
रति गयंद मृगराज-सुकटिपर, शोभित किंकिनि ढीली।
मचेव प्रेम यमुनाजल-अंतर, प्रेम-मुदित रस झीली ॥२॥

नंद-सुवन-भुज ग्रीव बिराजत, भाग-सोहाग भरीली।
बरसत सुमन देवगण हर्षित, दुंदुभि सरस बजीली ॥३॥
वृंदाबनकी कुंज-गलिनमें, होरी खेलैं रँगीली।
सूरश्याम श्यामा रस क्रीड़ित, यमुन-तरंग थकीली ॥४॥

२०९

तुम नँदलाल मोहिनी डारी ॥
धौरी धूमरि चौरी मौरी, एकते एक दुधारी।
बहुतै धेनु नंदबाबा-घर, दूध दही अधिकारी ॥१॥
तुमतौ ठाकुर तीनि लोकके, काहे सुनत हौ गारी।
समझायौ ना मानत लालन, बार-बार कहि हारी ॥२॥
माखनचोर कहाओ घर-घर, इन बातनमें ख्वारी।
जइयौ ना काहू ग्वालिन-घर, मान लेहु गिरिधारी ॥३॥
सूरदास प्रभु बालकृष्ण-छवि, हरि-चरणन बलिहारी।
माखन-मिसरी खाव कन्हैया, जसुदा जावै वारी ॥४॥

२१०

कहु रे पथिक श्याम कब आवन ॥
वा दिनकी सुधि बिसरी न मोहन, जा दिन धेनु चरावन।
तें हरि ऊधौ तजिग हमको, जाय बसे कुबरीके दावन ॥१॥
एक समय इक भँवर उड़ाना, उड़ि बैठा राधाजीके पाँवन।
उड़ु उड़ु भँवरा चरण छोड़िदे, तेरो रँग निठुर कहावन ॥२॥
हमको योग भोग कुबरीको, बिरह जलै चोलीके दामन।
लै बैराग पहिरिकै मूँदरि, जोगिन-रूप बनावन ॥३॥
उघरे नैन पंथ नहिं सूझै, जबसे बिछुड़ गए मन भावन।
सूरदास माधवसे कहियो, कृष्ण-कृष्ण रट लावन ॥४॥

२११

जसुदा सुनौ श्यामकी चोरी ॥
ऊँचा-ऊँचा महल बना है, तापर दौरि फिरोरी।
जादूमंत्र महलपर डारत, विद्या सकल पढ़ोरी ॥१॥

बरजौ जसुमति अपने लालको, हमसे करत बरजोरी।
मैं दधि बेंचन जात वृंदाबन, धरि बहियाँ झकझोरी ॥२॥
इतना सुनिकै चलीं यशोमति, मुरली छीनि लियोरी।
तुम्हैं बाँधि दूँगी खम्भासे, तुम अनरीति करोरी ॥३॥
कोई बातकी कमी नहीं है, सबकुछ दई दियोरी।
तनिक छाछ दहियाके कारण, घर-घर करत छिछोरी ॥४॥
जादूमंत्र औ टोना-टटका, सब छरछंद पढ़ोरी।
बशीकरन बिद्या कहँ पायौ, को उस्ताद मिल्योरी ॥५॥
खेलन जात जमुनके तीरा, कई एक बार बहोरी।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, ललिता करत चित चोरी ॥६॥

२१२

ऐसो राधाकृष्ण-भरोसो ॥

पाला आन परो ब्रज ऊपर, इन्द्रने कोप करोसो।
सात दिवस गिरि नखपर धारेव, भूमिको भार हरोसो ॥१॥
दावानलको पान किह्यो है, वत्सासुर मारोसो।
मारि अघासुर और बकासुर, वृषभासुर मारोसो ॥२॥
संग सखा सब कहत कृष्णसों, सबको दुःख हरोसो।
पैठि पताल कालिया नाथ्यौ, फणिपर नृत्य करोसो ॥३॥
अंतर्ध्यान भयो गोपिनमें राधा ध्यान धरोसो।
बृज-बनितनको संग छोड़ियै, यदुवर नाथ धरोसो ॥४॥
दुःशासन बलवान जानिकै, द्रौपदि चीर गहोसो।
कृष्ण-कृष्ण कहि द्रुपदि पुकारी, अंबर बहुत बढ़ोसो ॥५॥
गजकी टेर सुनी शरणागत, वाहन छाँड़ि चलोसो।
विप्र सुदामा हरिपर भेंटे, कंचन-महल खड़ोसो ॥६॥
पांडवके दुख हरिबे कारण, कौरव-नाश करोसो।
कहत कबीर सुनौ भई साधू, निर्भय ध्यान धरोसो ॥७॥

२१३

राधिका ठाढ़ी श्याम तहँ आयो ॥
खेलत हरि निकरे बृजखोरी, कुण्डल अधिक सोहायो ।
पीत पिछौरी तनपर ओढ़े, डोरिहु हाथ लगायो ॥१॥
गयो जमुनाके तीरे मोहन, श्रीराधा मन लायो ।
औचक दृष्टि पड़ी राधाकी, सन्मुख दर्शन पायो ॥२॥
नयन विशाल भाल दिहे रोरी, काम रूप तन छायो ।
नीले बसन सखी सब सोहत, हँसि-हँसि प्रेम बढ़ायो ॥३॥
लगा महीना है फागुनका, फगुआ सबै मचायो ।
राग-रागिनी सब कोउ गावत, देखि सूर मन भायो ॥४॥

२१४

हरिसों यह कोउ जाय कहोरी ॥
जा दिनसे ब्रजराज तज्यो बृज ता दिनसे बिसरोरी ।
भूषन-बसन-असन-सिंहासन, स्वाँस-उसास तजोरी ॥१॥
आये बसंत कंत नहिं आये, पंथ बिलोकि रहयूँरी ।
कोकिल-कूक हूक सम लागत, बिरहा हृदय दह्योरी ॥२॥
त्रिबिध-समीर तीर सम लागत, पीर न जात सहीरी ।
पल्लव पुंज कुंज मधुकर-ध्वनि, सुमन-समाज दह्योरी ॥३॥
जानि अनाथ नाथ हितकर सम, अनहित करन परोरी ।
क्षेम-करन हरि आवन सुनिकै, मोरे प्राण रह्योरी ॥४॥

२१५

हरि-कर मुरली बहुत बिराजत ॥
का बरणौं छबि मुरलीधरकी, शोभा अनुपम भ्राजत ।
परसत अधर सुधारस प्रकटत, मधुर-मधुर सुर बाजत ॥१॥
लटकत मुकुट भौंह छबि मटकत, नैन-सैन अति राजत ।
ग्रीव नवाय अटकि बंशीपर, कोटि मदन-छबि लाजत ॥२॥

लोल कपोल झलक कुंडलकी, यह उपमा कछु लागत ।
मानहुँ मकर सुधा-रस क्रीड़त, आपु नहीं अनुरागत ॥३॥
बृंदाबन बिहरत नँदनंदन, ग्वाल-सखा सँग सोहत ।
सूरदास प्रभुकी छबि निरखत, सुर नर मुनि सब मोहत ॥४॥

२१६

जब हरि नंद-महर घर आये ॥
प्रथम मारि पूतना पिसाचिनी, मारिकै स्वर्ग पठाये ।
काल ब्याल काली-फण नाथे, फणपर नृत्य कराये ॥१॥
अघा-बका असुरनको मारेव, सारे मारि गिराये ।
दंत उखारि मारि गज कुबिला, कंसको मारि भगाये ॥२॥
करिकै कोप इंद्र ब्रज ऊपर, प्रलयके मेघ पठाये ।
बिकल बेहाल हाल लखि गिरिधर, नखपर गिरिवर छाये ॥३॥
धन्य धन्य ब्रजचंद यशोदा. जीवन सफल बनाये ।
पुष्करदास सदा सुख ब्रजमें, आनंद मंगल छाये ॥४॥

२१७

हम जाबे ब्रजते भागि आज, ब्रज बाजि रही मधु बाँसुरिया ॥
बजी बाँसुरी मधुर-मधुर सुर जादू डारो साँवरिया ।
औ सुनिकै माया ब्यापी ऐसी तनमनका सब होश गया ।
सुत तात मात अरु प्रीतम प्यारे लगौ हमारी गोहरिया ॥१॥
बजी कान्हकी जोर बाँसुरी तनमन सबका मोह लिया ।
जस रहीं सखी तैसे उठि धाई फँसी प्रेमकी फाँसुरिया ।
औ एक सखी रहि बिकल बिरहिनी ताहि परमपद धाम दिया ॥२॥
यमुना पुलिन शरद-पूनौमें कुंजविहारी नृत्य किया ।
गोपिनके बीचोबीच बिराजैं मेघरासमें रहस किया ।
औ गावत सुंदर त्रिविध तालपर तड़प ढोलपै ताल दिया ॥३॥

बाजत झाँझ मृदंग मँजीरा, वीणा अधरन धार लिया।
जहाँ जलाबान एकतार सितारे, तम्बूरेमें सहस किया।
छबि देखि गजाधर चकित भयो, राधाको अंतर ध्यान
किया ॥४॥

२१८

बृजमें खेलत फाग मुरारी ॥
ग्वाल बाल लीन्हे रँग भीने, वेणु बजावत न्यारी।
आनत ताल मृदंग झाँझ डफ, नाचत दै दै तारी ॥१॥
करि शृंगार सकल बनि आईं, घरघरसे ब्रज नारी।
सैन दियौ घनश्याम सखनको, पकरौ गोप-कुमारी ॥२॥
रंग-गुलाल बाल लै धाये, बनितन सब रँग डारी।
झपटि-झपटि पट पकरि सखा सब देत फागकी गारी ॥३॥
कोऊ कहै हार मेरो टूटो. कोउ कहै चूनर फारी।
हरिबिलास यह फाग अनोखी, लाल हरे हैं सारी ॥४॥

तृतीय विभाग-शंकर-चरित्र

२१९

भजु मन शिव-शिव ईश कृपालम् ॥

फफकि-फफकि फफकरत फणनिपर, लपटि-लपटि तनु व्यालम् ।
धमकि-धमकि प्रभु महिपर धमकत, लटकत जटा विशालम्॥१॥
डिमिकि-डिमिकि डिम्-डिम्-डिम्-डिम्-डिम्, डमरू बजत विशालम् ।
लपकि-लपकि शत बूँदन बरसत, अमी जुड़ावन हारम् ॥२॥
सुर गंधर्व सुमन लै बरसत, हरषत निरखत तालम् ।
डपट निपट राजत विभूति उर, जपत हृदय गोपालम् ॥३॥
एकको शीश एकको कटिपै, बदलि धरत तत्कालम् ।
कहैं माखन जो भजैं भक्तजन, नाहिं रहत जंजालम् ॥४॥

२२०

शिव बाल-रूप बनि आये हैं ॥

अद्भुत रूप बने शिवशंकर, अंगमें भस्म रमाये हैं।
उर मुंडमाल सोहत विशाल, उपवीत भुजंग सुहाये हैं।
गल माल बिराजै चंद्रछटा, शिर गंग तरंग बहाये हैं।
कोटिन पिशाचके संग बिराजैं, पग तक जटा बढ़ाये हैं ॥१॥
नंदी वाहन सुत गणपति, जहँ कीरति मुख छबि छाये हैं।
बाम अंग अरधंग भवानी, रूप अनूप बनाये हैं।
काननमें कुंडल गरल कंठमें, मूर्ति अधिक छवि छाये हैं।
भ्रमि नचत जोर बाजत अति शृंगी, नारदादि यश गाये हैं॥२॥
बाघंबर मृगछाल बिराजै, भंग रंग छबि छाये हैं।
औ' मिर्च अफीम धतूर तूतिया, पेटिन मसक भराये हैं।
अरु गांजा चरस शंखिया चोखो, बच्छनागको खाये हैं।
औ' अरुण नयन कर शूल बिराजै, शेषनाग लपटाये हैं ॥३॥
सन्न्-सन्न् बाजै सारंगी, मंजीरा झरि लाये हैं।
अरु डिमकि-डिमकि डमरू ध्वनि बाजै, कहम-कहम
सुर गाये हैं।
औ' मदनगोपाल दरश देबेको, शिव-समीप चलि आये हैं।
दोउ नेत्र रूप भरि देखि गजाधर, मन-बच-कर्म सुहाये हैं ॥४॥

२२१

जगमें शिव-समान को दाता ॥

आक धतूर अफीम भंग संग, गांजा चरस मिलाता।
बाँधे लँगोटा विषखोपड़नका, अंगमें भस्म रमाता। १॥
हाथ कपाल मसान जगावत, रुद्र संग सब जाता।
नंदीपर चढ़ि आये सदाशिव, बालक देखि डेराता ॥२॥
मैना लखै शम्भु निज द्वारे, झेंखति औ पछिताता।
गिरिसों गिरौं अनलमहँ कूदौं, करौं छार सब गाता ॥३॥

जननीका हाथ पकरि समुझावैं, सुनौ मातु मोरी बाता।
उमा कहैं नहिं होनी टरत है, जो लिखि दीन बिधाता ॥४॥

२२२

आजु गिरिजापति ख्यालैं होरी ॥
भस्म अंग सिर गंग बिराजै, जटा-मुकुट लट फेरी।
बायें अंग जग जननी भवानी, नचैं जोगिनी घेरी ॥१॥
बाघंबर पीतांबर ओढ़े, शेषनाग लपटोरी।
चंद्रभाल सोहै कपालपर, देखि छकित भई गोरी ॥२॥
गिरजै सैन दिह्यौ सखियनको, लै गुलाल रँग दौरीं।
देखि सरूप शीश भयो नीचे, महादेव कहँ हेरी ॥३॥
कानन बाके कुंडल सोहैं, हाथ त्रिशूल लियोरी।
शृंगीनाद बजाय रिझावत, गंगादास कर जोरी ॥४॥

२२३

शिवके कर त्रिशूल चमके हो ॥
महादेव भोला शिव शम्भू। हरत दोष-दुख-दारिद-दम्भू।
सुख करता हरता भ्रमजालम्। भक्त भुवन आकाम कृपालम्।
सब लायक वर-दायक देवा। आजु लगे कीन्ही हम सेवा।
है दयाल तत्काल देहु सोइ। देहु सदा सबकै हो ॥१॥
शीश जटाकी छटा तरंगै। प्रातकाल उठि पीवत भंगै।
बाम अंग गौरी अरधंगै। बाजत मधु मुरली मिरदंगै।
हरवर वर करि देत सो भारी। महिमा अलख अनूप पियारी।
अरुण नयन मेरे मन भावै। मस्तकेन्दु दमकै हो ॥२॥
सुन्दर नेत्र कराल व्याल है। रूप भयंकर मुंडमाल कटि।
धरे गौर अरधंग सो शंकर। कंगन चिंबुककेर बिराजै।
शोभा देखि मेन मन लाजै। गौर रूप कटि व्याल सुधारी।
है लँगर सर्पनको भारी। श्रवण विशाल भाल असुरनके
सुरपति गति निमकै हो ॥३॥

जय महेश जय-जय जगबंदन। राम-उपासक आनंद कंदन।
जय महेश जय-जय त्रिपुरारी। दुष्ट अनेक दिह्यौ तुम तारी।
महिमा तुम्हरी है अति भारी। चंदी कहैं चरण बलिहारी।
दीजै भक्ति हमैं करुणानिधि। उर अंतर निमकै हो ॥४॥

२२४

भजिले मन गौरीपति कृपाल।
कटि जैहैं सकल भ्रम-मोह-जाल ॥
कैलाश शिखर पर्वत विशाल, जहँ रहत सदाशिव तीनि काल।
तेहितर नित पीवत घोटि भंग, सिर लसत गंग भूषण विशाल ॥१॥
उइ रीझत जल फल फूल चारि, अनुकूल प्रचंड बजाय गाल।
जिनके सुख-संपति लिखी न भाल, तिनका शिव दीन्हेव-है दयाल ॥२॥
हिरदय धरु शंकर-चरण-रेणु, फलदायक सुरतरु कामधेनु।
मन-वांछित पावत लिखे भाल, अरु निर्धन पावत पुत्र हाल॥३॥
लखि विश्वनाथ गति अति उदार, मांगौं अधीन ह्वै खड़े द्वार।
शिव खोलि नयन मोंहि करु निहाल, जहँ बेगि मिलैं दशरथ के लाल ॥४॥

२२५

भजु शंकर संकटके हरणम् ॥
तुम आदि अनादिके नाथ हरे। प्रगटे त्रय-मूरति देह धरे।
उत्पत्ति-प्रलय-रक्षार्थ हरे। जबसे जगमें हम देह धरे।
जड़ता-बसते बहु चूक परे। तुमही अपराध क्षमा करणम्॥१॥
पद-अम्बुज लागि रही ललसा। करिये शिव पूरण मम मनसा।
रसों पद पंकज है हर्षा। गति जान तुम्हीं पहिचानि दशा।
अघहारि सदा निज बानि प्रभू। करता शिव पोषणके करणम् ॥२॥

सब औगुणको अति आगर मैं । प्रभु डूबत हौं भव-सागरमें ।
गहि राखु भुजा न दुजा हमरी । तुमही सब भाँतिन लायक हौ।
गतिके पतिके सुखदायक हौ । सब आवत हैं तुम्हरी
शरणम् ॥३॥
मैं दीन कहौ करिए सुदया । हरिए भ्रमजाल विमोह मया ।
नित लीन रहौं तुम्हरे चरना । उठि भोर सदा तुमको
जपना ।
शिव पूजन ध्यान सदा करना । जग-काम बिहाय सदा
रटनम् ॥४॥

२२६

होरी खेलैं शिव सहित बाल ॥

बाजैं मृदंग गति सुर मृचंग, डमरू डफ ढोलक औ कृणाल ।
तम्बूरा शंख सितार मँजीरा, वेणु लिए करमें कृपाल ।
तब हर-हर हर्षें सुमनसों बरसैं, ऐसी लीला किह्यौ नाथ ।
तब देखि छकित भे चंद्रभाल ॥१॥
झोरिन अँबीर पिचकारी साथ, रँग केसर औ कुम कुम गुलाब।
जहँ उठै धूम धुधकार होत, नभमें भे बादर जरद लाल ।
बरसत हैं मेघ कुहकैं मराल । देवन समाज सब भीजि रहीं
महरानी चीर नरसिंह खाल ॥२॥
अरझैं सखियाँ माँगैं फगुवा, प्रभु दै दीजै कछु प्रणतपाल ।
जे जौन चहैं ते तौन लियैं, हीरा मोती पुखराज लाल ।
सुर नर सब गावैं पार न पावैं, सारद लिखिगें सर्व काल ।
ब्रह्मा उनहीकी शरण गए, तब छूटि गए भ्रम मोह जाल ॥३॥
गावैं धँवार जस लेखराज, बिध बिसुन सकल दिग दगन पाल।
झूमत हैं झूमि टूरत हैं ताल, बेहाल भए नर-नारि परस्पर ।
खेलि रहे, शिव रीझैं नेक बजाय गाल ॥४॥

चतुर्थ विभाग-भक्ति, वैराग्यके फाग

२२७

अब तुम कहँ बेलँम्यो प्रभु मोरे ॥

ग्राह ग्रसे गज आरति कीन्हीं, कठिन कालके चेरे ।
नंगे पाँय धाय ततकालै, बाहन गरुड़ न हेरे ॥१॥
तुमहीं प्रण प्रह्लादको राख्यो, संदीपन सुत हेरे ।
महाभारत भरुही प्रण राख्यो, अजामील तन टेरे ॥२॥
धना भगत रयदास कबीरा, उनका मिल्यौ सबेरे ।
नामदेवकी गाय जियायौ, सुनि अस सहस बनेरे ॥३॥
अबतौ नाथ कौन जुग लागा, मैं शरणागति तेरे ।
अंबरदाससे कौन चूक परि, नेक न आवत नेरे ॥४॥

२२८

सॉँवलिया मन बैरागी मेरा ॥
लादि-फाँदिकै चला मुसाफिर, कौन सरायमाँ डेरा ।
माल रहा सो संतन खावा, चोरन डारा घेरा ॥१॥
चुन-चुन कलिया महल बनायो, लोग कहैं घर मेरा ।
ना घर मेरा ना घर तेरा, चिड़िया रैन बसेरा ॥२॥
माय कहै यहु बेटा मेरा, बाप कहै सुत मेरा ।
बहिन कहै यहु बिरन हमारा, त्रिया कहै नर मेरा ॥३॥
लट छिटकारे तिरिया रोवै, जोड़ा बिछुड़िगा मेरा ।
कहैं कबीर सुनौ भाई साधू, जिन जोड़ा तिन तोड़ा ॥४॥

२२९

अब तौ गगन घटा घहरानी ॥
पूर्व दिशासे उठी बादरी, रिमझिम बरसै पानी ।
ग्यानी आपनि मेंड़ सँवारौ, बहा जात है पानी ॥१॥
ग्यान-ध्यानके बैल बनायो, खेत जुतैं निरबानी ।
दुबिधा दूब दूरि करु मनसे, ब्वावौ रामकी धानी ॥२॥
चित्रकूट बैठे रखवारि, चुनी जात है धानी ।
धानी काटि घरै लै अइहौ, तबहीं सुफल किसानी ॥३॥
सात सखी मिलि रींधैं रसोई, जेवैं सुर-मुनि-ध्यानी ।
कहत कबीर सुनौ भाई साधू, यह पद है निरबानी ॥४॥

२३०

ऐसो सिया-रघुबीर भरोसो ॥
बारि न बोरि सकैं प्रहलादै, पावक नाहिं जरोसो ।
डारि दिह्यौ गढ़-परबतपरते, परे भूमि सुमिरोसो ॥१॥
महाभारत भरुहीके अंडा, क्षौहिण दल बटुरोसो ।
राम-राम सब पंछिन टेरा, घंटा टूटि परोसो ॥२॥
द्रुपदसुताको चीर दुशासन, मध्य-सभा पकरोसो ।
खैंचत खैंचत भुजबल थाक्यो, नेक न अँग उघरोसो ॥३॥

हिरणाकुश प्रह्लाद भक्तसों, हठि-हठि बैर करोसो ।
मारा चहै दास नरहरिको, आपइ दुष्ट मरोसो ॥४॥
मीराके मारनके कारन, बेसह्यो जहर खरोसो ।
रामकृपा विष अमृत ह्वैगा, हँसि-हँसि पान करोसो ॥५॥
लंका दही अंजनीनंदन, जार्‍यौ पुर सगरोसो ।
ताके मध्य विभीषणको गृह, रामकृपा उबरोसो ॥६॥
रावण-सभा कठिन प्रण अंगद, हरि हिरदय सुमिरोसो ।
मेघनाद अस कोटिन योधा, टारे पग न टरोसो ॥७॥
तुलसिदास विश्वास रामका, जो करै नारि नरोसो ।
और प्रभाव कहाँ लग बरणौं, तेहि जमराज डरोसो ॥८॥

२३१

प्रभुसों गर्व किह्यौ सोई हारो ॥
गर्व किहिसि वह बनकी घुँघुची, मुँह कालो कै डारो ॥१॥
गर्व किहिसि लंकापति रावण, वंश नाश कै डारो ॥२॥
गर्व किहिसि ऐरावत हाथी, नैन छोट कै डारो ॥३॥
गर्व किहिसि रतनाकर सागर, जल खारो कै डारो ॥४॥

२३२

आजु मैं दून्हौं कुलन उजियारी ॥
सात खसम नैहरमाँ कीन्हे, औ सोरह ससुरारी ।
सासु तुम्हारे माथे किरिया, अबहीं बारि कुँआरी ॥१॥
पाँच-सात कोखीकर खायौं, खायौं एक-दुइ चारी ।
राँध परोसिन एकौ न छोड़्यौं, नैहरको पग धारी ॥२॥
सास-ससुरका लातन मार्‍यौं, जेठकी मोंछ उखारी ।
सैंया हमारी सेज बिछावैं, स्वावौं ग्वाड़ पसारी ॥३॥
कहैं कबीर सुनौ भाई साधू, यह पद लेहु बिचारि ।
जो यहि पदका अर्थ लगावै, सो वैकुंठ सिधारी ॥४॥

२३३

बिपतिमाँ हरिणी हरिका पुकारी ॥
जंगलमाँ इक हरिणी बियानी, ताहि बिपति परी भारी ।
गोपीनाथ राखु यहि अवसर, हौं मैं शरण तिहारी ॥१॥

इकवर विषया दाँवरि लाये, इकवर बधिक शिकारी।
इकवर स्वाना लागि रहे हैं, इकवर अगनी जारी ॥२॥
अग्नि लागिगै दाँवरि जरिगै, हटिगे स्वान पछारी।
बाँबीते इक विषधर निकरा, डसि लिह्यौ बधिक शिकारी॥३॥
नाचन कूदन हरिणी लागी, धनि धनि कृष्ण मुरारी।
सूरश्याम यहि महा बिपतिमाँ, राखि लिह्यौ गिरिधारी ॥४॥

२३४

तुम्हैं बिन को सुधि लेत हमारी ॥

सीता सोच जनकपुर कीन्हा, पिता परण किह्यो भारी।
को चढ़ि ब्याहैं सिया स्वयंवर, टूरेव धनुष मुरारी ॥१॥
तोड़ा इन्द्र गोवर्धन चाहैं, औ बोलाय हितकारी।
मूसरधार सात दिन बरसेव, ब्रजपर छाँट न पारी ॥२॥
शैल डारिकै मथ्यो समुंदर, चौदह रत्न निकारी।
जीव-जंतु सब मोहि लिह्यो है, रूप मोहिनी धारी ॥३॥
पंसासारि कौरव सँग खेल्यौ, चीर द्रौपदी हारी।
खैंचत-खैंचत भुजबल थाक्यो, देखि पितम्बर सारी ॥४॥
लै प्रह्लाद बाँधि खम्भामाँ, लीन्हेव खड्ग निकारी।
वहि दानवका उदर बिदारेव, निकर्‌यौ खम्भा फारी ॥५॥
पंचवटीमाँ हर्‌यौ जानकी, लीन्हयौ सिंधु उतारी।
हनोमान अस नाहर योधा, फाँदि कनकपुर जारी ॥६॥
कब सुग्रीव कीन्ह मित्राई, जिनके काज सँवारी।
जिनको दाँव जंगल-बिच लीन्हेव, बालि शरासन मारी ॥७॥
गज औ ग्राह लड़ैं जल-भीतर, पूँजा कमल उखारी।
सुनत पुकार गाज अस टूटेव, ग्राहकी मोंछ उचारी ॥८॥
सुनत पुकार गाज अस टूटेव, जंगल कुटी सिधारी।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, बाँह गहे गिरिधारी ॥९॥

२३५

गुरुते गुप्त-भेद जो पावै ॥
मूल चक्रते पवन चढ़ावै, त्रिकुटीमें ध्यान लगावै।
सुख मन शोधि तत्त्व दरसावै, तब अनहद सुनि पावै ॥१॥
सोहम् शब्द गहै तनमनसे, दूसर भाव न आवै।
गुरु-मूरतिते ध्यान लगावै, और आस बिसरावै ॥२॥
निसि-बासर जहँ अमी झरत है, जो जिनके मन भावै।
संत जौहरी पारखि लैकै, आपन देश मँगावै ॥३॥
लैकै संधि जाय तहवाँपर, शब्दमें सुरति मिलावै।
जन छेदी जब हरदम निरखै, तब हंसा कहवावै ॥४॥

२३६

ठगिनिया क्या नैना झमकावै ॥
रूपा पहिरिकै रूप देखावै, सोना पहिरि रिझावै।
गले डारि तुलसीका माला, तीनि लोक भरमावै ॥१॥
मकरी जालकी अँगिया पहिरै, झींगुर बंद लगावै।
पहिरि चोलना गदहा नाचै, ऊँट विष्णुपद गावै ॥२॥
कद्दू काटि मृदंग बनायो, निंबू काटि मँजीरा।
सात तोरैया मंगल गावै, नाचै बालम खीरा ॥३॥
आशिक चूहा भैंसि पलोहै, मेंढ़क ताल लगावै।
उलटी चीलह सरगमाँ टाँगी, कौवा तीर चलावै ॥४॥
वृक्ष चढ़ी मछली फल ढूँढ़ै, बगुला भोग लगावै।
कहैं कबीर सुनौ भाई साधू, बिरलै अर्थ लगावै ॥५॥

२३७

मन तुम बनौ प्रेम-अनुगामी ॥
प्रेम लगावौ मातपितामें, परम नीति मय सानी।
निज परिवार और मित्रनकी, सेवा कीजै ज्ञानी ॥१॥
करौ प्रेम निज मातृभूमिसे, चेतौ मन अभिमानी।
दूर हटावौ मद-लोभादिक, तजौ चाल नादानी ॥२॥

लखौ दुर्दशा निज भ्रातनकी, सबब लेहु पहिचानी ।
है कोउ रंक धनाढ्य कोऊ है, निज-कर्मन-अनुगामी ॥३॥
कबहुँ न झगरौ निज भ्रातनते, झझकौ देखि गलानी ।
प्रेमसहित सबहीते मिलिए, रामरतन गहि पानी ॥४॥

२३८

मन तुम चले जाव हम जानी ॥
पंच-तत्त्वका बना पींजरा, तामें बस्तु बिरानी ।
आवैगा कोई लोग लहरिया, डूबि मरौं बिन पानी ॥१॥
पांच सखी मिलि चली हैं बजारें, एक ते एक सयानी ।
सौदा करें भाव ना जानैं, फिरि पाछे पछितानी ॥२॥
राज करनते राजा जैहैं, रूपवंत वै रानी ।
वेद पढ़ंते पंडित जैहैं, औ जैहैं अभिमानी ॥३॥
चंदौ जैहैं सुरजौ जैहैं, जैहैं पवन औ पानी ।
कहैं कबीर नाम ना जैहैं, जिनके मन ठहरानी ॥४॥

२३९

तनका तनक भरोसा नहियाँ ॥
जनम भयो गोदीमाँ खेल्यौ, कछु दिन चल्यौ बकैयाँ ।
ज्वान भयो ज्वानी-रस आयौ, बैठन लग्यौ अथैयाँ ॥१॥
मनई चाम कछु काम न आवै, पशुकी बनै पन्हैयाँ ।
जैसे पत्र खसै तरुवरते, फेरि न लगै डरैयाँ ॥२॥
भक्त-हेतु शंकर-सँग डोलै, जस बछरनमें गैयाँ ।
ताहि बिसारि बिषय-रस पीवै, बचै काट निगचैयाँ ॥३॥
यहु तन है पानीका बुल्ला, जस नभ उवै तरैयाँ ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, हरि-चरनन चित लैयाँ ॥४॥

२४०

धोबिया जल बिन मरत पियासा ॥
जलमें ठाढ़ पियै नाहिं मूरख, अच्छा जल है खासा ।
अपने घरका मर्म न जानै, कर धोबियनकी आसा ॥१॥

छिनमें धोबिया रोवै-पीटै, छिनमें हुवै उदासा।
आये बाँधि करमकी रस्सी, आपन गटकै फाँसा ॥२॥
सच्चा साबुन लेय न मूरख, है संतनके पासा।
दाग पुराना छूटत नाहीं, धोवत बारह मासा ॥३॥
एक रातिको जोर लगावै छोरि दिया भरि मासा।
कहत कबीर सुनौ भाई साधू, आछत अन्न उपासा ॥४॥

२४१

जतन बिन मिरगा खेत उजारा॥
पाँच मिरग पच्चीस मिरगना, तामें तीन शिकारा।
अपने-अपने रसके भोगी, चुगते न्यारा-न्यारा ॥१॥
उठि-उठि झुंड मृगाके आगे, पैठे खेत-मँझारा।
हो-हो करत बालि लै भागैं, मुख बाये रखवारा ॥२॥
मारे मरैं टरहि नहिं टारे, बिगरे नहीं बिगारा।
बड़ा प्रपंची महा दुखदायी, तीनि लोक पचिहारा ॥३॥
ज्ञानका भूला सुरतिका चूका, गुरू शब्द रखवारा।
कहैं कबीर सुनौ भाई साधू, बिरलै भले सँभारा ॥४॥

२४२

सन्तौ, नदी बहै जल धारा॥
जैसे पुरइनि जलमाँ उपजै, जलहिमाँ करै पसारा।
वाके पात्र पानी नहिं बेधै, ढरकि परै जैसे पारा ॥१॥
जैसे सती चढ़ीं सत-ऊपर, पियाका बचन नहीं टारा।
आप तरैं औरनको तारैं, तारैं कुल-परिवारा ॥२॥
जैसे शूर चढ़े लड़नेको, पग पाछे नहिं डारा।
उनकी सुरति रही लड़नेको, प्रेम-मगन ललकारा ॥३॥
भवसागर इक नदी बहत है, लख चौरासी धारा।
धर्मी-धर्मी पार उतरिगे, पापी बूड़ै मँझधारा ॥४॥

२४३

प्रभु किमि शरण गये तजि दीन्हा।
शरण गयो सुग्रीव बिभीषण, वंश प्रबल हरि लीन्हा।
ताके राम तिलक करि दीन्हा, निश्चर कौन कुलीना ॥१॥

शरण गयो प्रह्लाद पिता तजि, बोले बचन अधीना ।
ताको राम अंग भरि भेंटे, भारत-सम लवलीना ॥२॥
कपटी कुटिल महाखल पापी, ताको भोजन मीना ।
रामनामकी लेस छुवै नहिं, बात कहै परबीना ॥३॥
सुनु मन मूढ़ सिखावन मेरो, दिन-दिन होय तन छीना ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, तेहिते रहौ मलीना ॥४॥

२४४

भजन बिन बैल बिराने होइहौ ॥
तेलीके घर बैला होइहौ, आँखिन टोप देवैहो ।
डंडा चारि सबेरे पइहौ, बाहर देखन ना पइहौ ॥१॥
चारि पाँव शिर शृंग गुंग मुख, तब कैसे गुण गइहौ ।
लादत जोतत लकुट बाजि है, तब कहँ माथ छिपैहौ ॥२॥
कुत्तीके घर कुत्ता होइहौ, बिरथा जन्म गँवैहो ।
पेट क्षुधा कबहूँ ना मिटिहै, घर-घर पूँछि डोलैहौ ॥३॥
धोबीके घर गदहा होइहौ, दोहरी लाद लदैहो ।
खोदी घास कबहूँ ना पैहौ, घूर चरत मरि जैहौ ॥४॥
जो चाहौ कछु लाभ हियेमें, हरि-सुमिरण सुख पैहो ।
कहैं कबीर चेत नर अजहूँ, कियो आपनो पैहो ॥५॥

२४५

दया-धर्म नहीं तनमें, मुखड़ा क्या देखै दर्पणमें ॥
कागजकी इक नाव बनाई, छोड़ी गंगाजलमें ।
धर्मी-धर्मी पार उतरिगे, पापी बुड़ैं वहि जलमें ॥१॥
आमकी डाली कोयलिया राजी, तपसी राजी बनमें ।
घरबारी घरहीमें राजी, मछली राजी जलमें ॥२॥
कौड़ी-कौड़ी माया जोड़ी, जोड़ि धरी बर्तनमें ।
यमके दूत पकरि लैजैहैं, रहि गई मनकी मनमें ॥३॥
जिन हम समझा परम सनेही, ते साथी स्वारथमें ।
ऊपरसे कोरी बात बनावैं, कपट भरा है मनमें ॥४॥

रह्यौ सदा झूठे झगड़नमें, रम्यो न प्रभु-चरणनमें।
लोभि रह्यो झूठी मायामें, जियौ वृथा यहि जगमें ॥५॥
कबहुँ न सुमति आनि उर धारी, ज्ञान न लायौ मनमें।
छल्यौ सकल ज्ञानी-विज्ञानी, धन-यौवनके मदमें ॥६॥
दया-धर्म नहिं कबहूँ कीन्हेव, कपट-कटारी करमें।
बदी करनको अधिक चुटपटे, निज स्वारथके बसमें ॥७॥
चुनि चुनिकैं सिर पगड़ी बाँधी, तेल चुवै जुलफनमें।
कहत कबीर सुनौ भाई साधू, ये क्या लड़ेंगे रणमें ॥८॥

२४६

भजु मन श्रीपति कमलाकंतम् ॥
नाम अनेक कहाँ लग बरणौं, शेष न पावत अंतम्।
नारद-शारद-शिव-सनकादिक, ब्रह्मा ध्यान धरंतम् ॥१॥
कच्छ मच्छ-बाराह भये नर, वामन-रूप धरंतम्।
परशुराम फिर रामरूप ह्वै, लीला कोटि करंतम् ॥२॥
जन्म लीन वसुदेव देव गृह, नाम परेव नंदनंदम्।
पैठि पताल नाथि कालीको, फणिपर नृत्य करंतम् ॥३॥
ह्वै बलभद्र असुर वध कीन्हेव, कंसके केश गहंतम्।
जगन्नाथ जगपति चिंतामणि, ह्वै बैठयो निश्चिंतम् ॥४॥
कलयुग अंत अनंतय ह्वैके, कलिको रूप धरंतम्।
दस अवतार गाय प्रभुके अब, सूर शरण भगवंतम् ॥५॥

२४७

भजु मन हरि-हर रूप रसालम् ॥
इनके कटि-किंकिणिकी शोभा, उनके फणि-मणि-बैलम्।
ई केशर वै भस्म रमाये, मुंडमाल बनमालम् ॥१॥
इनके वाहन गरुड़ शेष हैं, नंदी गण मृगछालम्।
वै त्रिशूल ई चक्र लिये हैं, राधा गौरी विशालम् ॥२॥
इनके गले कौस्तुभ-मणि सोहै, नीलकंठ विष व्यालम्।
ई वैकुंठ कैलास निवासी, ग्वाल-बाल बैतालम् ॥३॥

ई दोउ रूप एक सम जानौ, भजा करौ त्रयकालम् ।
जन महाराज कहैं कर जोरे, सो न परै भ्रमजालम् ॥४॥

२४८

माधव, गति तुम्हारि ना जानी ॥
सतजुगमें राजा भे हरिचँद, सत्यै सत्य बखानी ।
नित उठि दान लेत मरघटपर, भरैं डोम घर पानी ॥१॥
त्रेतामें रावण भयो राजा, सोनेके लंक बखानी ।
इकलख पूत सवाव लख नाती, लकड़ी कोऊ न आनी ॥२॥
राजा बलि बैकुंठके कारण, जग्य रच्यौ रजधानी ।
ताको बाँधि पताल पठायौ, आप भयो दरबानी ॥३॥
द्वापरमें दुर्योधन राजा, छत्र चलै अगवानी ।
उड़ि-उड़ि जूझें कुरुक्षेत्रमाँ, ह्वैगै वंशकी हानी ॥४॥
द्वापरमाँ मोरध्वज राजा, सो राजा बड़ दानी ।
आरा चलै पुत्र-सिर ऊपर, रहिगें राजा-रानी ॥५॥
कलजुगमें विक्रम भयो राजा, सो राजा बड़ दानी ।
हाथ कटाय परे तेली घर, प्यारैं तिलकी घानी ॥६॥
कोटि गऊ राजा नृग दीन्हा, सो राजा बड़ दानी ।
एक गऊकी भूल परी है, ह्वैगै नर्क-निसानी ॥७॥
यह लीला रघुनाथ कुँअरकी, तुलसीदास बखानी ।
गौतम-नारि अहिल्या तारी, कुलकी गति पहिचानी ॥८॥

२४९

माधव, वै भुज कहाँ दुरायो ॥
जिन भुजते गोवर्धन धारेव, सुरपति गर्व मिटायो ।
जिन्हीं भुजन कालीको नाथ्यो, कमल लादि लै आयो ॥१॥
जिन्हीं भुजन प्रह्लाद उबार्‍यो, हिरण्याक्षको ढायो ।
जिन्हीं भुजन गजदंत उबार्‍यो, मथुरा कंस ढहायो ॥२॥
जिन्हीं भुजन दाँवरी बँधायो, जमला मुक्ति पठायो ।
जिनही भुजन अघासुर मार्‍यो, गोसुत गाय मिलायो ॥३॥

जिनही भुजन बकासुर मार्‌यो, पूतनाको स्वर्ग पठायो।
तेहि भुजकी बलि जाय सूरजन, तिनका तोरि दिखायो ॥४॥

२५०

राम तुम रूप अनेक बनायो ॥
प्रथम भयो सनकादिक नारद, वेद विमल यश गायो।
पृथू होय पृथ्वी सम कीन्ह्यों, तीनि लोक यश गायो ॥१॥
धन्वन्तरि पुनि कपिल भयो है, दत्तात्रेय कहायो।
कच्छ-मच्छ-बाराह भयो, लै ब्रह्मा वेद गहायो ॥२॥
कृष्ण छाँड़ि बलभद्र भयो घर, गोकुल केलि मचायो।
धरि लिह्यो नखपर गिरिवर गिरिधर, बृजपर बूँद न ॥
आयो ॥३॥
जहँ-जहँ भीर परी भक्तनपर, तहँ-तहँ जाय बचायो।
ये चौबिस अवतार रामके, सो शिवराम गिनायो ॥४॥

२५१

नाथ तुम सन्तनके सुखदाइ ॥
पृथ्वी लैकै हिरण्याक्षने, सिरहाने गुड़िराई।
बनि बराह प्रभु ताहि सँहारेव, पृथ्वी लिह्यौ छोड़ाई ॥१॥
भक्त एक प्रहलाद जगतमें, राम-राम गोहराई।
खम्भ फारि हिरणाकुश मार्‌यौ, नरसिंग रूप धराई ॥२॥
राजा बलि पतालको राजा, सत्य धर्म बहुताई।
वामन बनि वसुधा सब लीन्हीं, पीठि लीन्हि नपवाई ॥३॥
दीनबन्धु तुम मीनरूप ह्वै, एक समय रघुराई।
शंखासुर दानवको मारेव, बड़े दयालु गोसाईं ॥४॥
सौ योजन मर्याद सिंधुकी, तीस योजन गहराई।
कच्छ-रूप ह्वै ताहि मथ्यौ प्रभु, लीन्हेव बेद बचाई ॥५॥
राजा बलि सुत बयलोचनको, जग्य करै अधिकाई।
ताके कारण प्रभु पतालमें, नित्य रूप धरि जाई ॥६॥
छलन गए प्रभु राजा बलिको, आपुइ गये छलाई।
तुलसीदासको दर्शन दीजै, बावन रूप धराई ॥७॥

२५२

देवी तोर अच्छा बना चौमहला ॥

काहेकी ईंट काहेका गारा (२)। काहे लाग मसाला ॥१॥
सोनेकी ईंट रूपेका गारा (२)। केशर लाग मसाला ॥२॥
फूटिगै ईंट भसकिगा गारा(२)। महकन लाग मसाला॥३॥
वहिमाँ बैठी मात शीतला(२)। पूजै सब संसारा ॥४॥

२५३

रघुबर साँचे मनके मीता ॥

यज्ञ दान ना दिह्यौ लोधिया, ना गंगाजल पीता।
राम-लखन तुरतै लै आवौ, घड़ी न दूसर बीता ॥१॥
ना शबरी काशी ह्वै आई, ना पढ़ि आई गीता।
जूठे बैर बिश्वंभर खायौ, मनहीकी परतीता ॥२॥
उठिकैमा जब भोर सकारे, चौका संजन देता।
नंदलाल गोपाल कृष्णको, नित उठि कीचर देता ॥३॥
सत्य-समान धर्म नहिं दूजा, जुग-जुग संत कहीता।
कहैं कबीर सुनौ भाई साधू, सत्य सकल जग जीता ॥४॥

२५४

सकल तजि राम कहौ मोरे भाई ॥

जिन बलकनको हाथन सेयौं, कच्चा दूध पिलाई।
उइ बालक पढ़ि पंडित ह्वैगे, माता कहत लजाई ॥१॥
जेहि तिरिया मुख पान खवायौं सोयौं अंग लगाई।
अंतकी बेरि फेरि मुख बैठी, छूटिगै लगन सगाई ॥२॥
जेहि देंहियाको मलि-मलि धोयौं, अतर-सुगंध लगाई।
उइ देंहियापर काग बिराजत, मानुस देखि घिनाई ॥३॥
सूरदास इक सुगना पाल्यौं, रुचि-रुचि पिंजर बनाई।
सुगना तौ उड़िकै डारपर बैठ्यौ, पिंजरै आगि लगाई ॥४॥

२५५

सबै दिन होत न एक समाना ॥

इक दिन राजा हरिश्चंद्र घर, संपति मेरु समाना ।
इक दिन जाय कठिन ग्रह सेवत, अंबर हरत मसाना ॥१॥
इक दिन दूल्हा बना बराती, चहुँदिशि गड़े निशाना ।
इक दिन डेरा पर्‌यो जंगलमाँ, करि लम्बे पग ताना ॥२॥
इक दिन सीता रुदन करत हैं, महा विपिन उत्थाना ।
इक दिन राम लच्छिमनके सँग, विचरत पुष्प-विमाना ॥३॥
इक दिन राजा राजि युधिष्ठिर, अनुचर श्री भगवाना ।
इक दिन द्रौपदि नग्न होत है, चीर दुशासन ताना ॥४॥
प्रगटत हैं पूरबकी करनी, मत कर सोच गलाना ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, विधिके अंक प्रमाना ॥५॥

२५६

नाथ यह भली बनी असवारी ॥

अपयश-ऊँट अकीरति हाथी, पाप-पालकी न्यारी ।
संग सवार कुचाल-मैल दल, माया-कपट-दल भारी ॥१॥
काम-क्रोध-मद लोभ मोहके, हैं सरदार अगारी ।
कई कोटके छकड़े देखो, मोरे चलैं पिछारी ॥२॥
मेरो छत्र फिरै हिंसाका, मरिगै दया बिचारी ।
नेम-धर्म कोई पास न आवै, तजि गए भूमि हमारी ॥३॥
हौं तौ सब पतितनको नायक, ताकौं शरण तुम्हारी ।
सूरदास जिय माँहि भरोसो, तारन-हार मुरारी ॥४॥

२५७

सतगुरु निरखि रहे सोई पूरा ॥

कुल-मर्यादा मान-बड़ाई, छोड़ौ सकल गरूरा ।
आठौ पहर जुरे रहु सन्मुख, पहुचनके परतूरा ॥१॥
ना कछु नेम नहीं कछु पूजा, हरदम रहो हजूरा ।
स्वाँसा सुमिरन नाहिं बिचारै, साहब तोर जरूरा ॥२॥

मनके संग जीव यहु भरमा, माया केर मँजूरा।
यहु परपंच विषयमाँ भूला, हैगा कादर कूरा ॥३॥
साहब रूप देखु त्वै बौरे, दुरमतिसे रहु दूरा।
जनछेदी जिन पारस पायौ, ते होइगे जग सूरा ॥४॥

२५८

हमरे राम-नाम धन-खेती ॥
पहिली खेती हमने कीन्हीं, गंगाजीकी रेती।
ज्ञान-ध्यानके बैल बनायौ, जब चाह्यौ तब जोती ॥१॥
राम-नामका बीज बनायौ, उपजत हीरा-मोती।
इस खेतीमें नफा बहुत है, बिरलै सुनकर चेती ॥२॥
पंडित ह्वैकै बेद बखानैं, मुल्ला बाँचै पोथी।
पोथी बाँचै भेद न जानै, मुक्ति कहाँसे होती ॥३॥
काम-क्रोध-मद-लोभ छोड़िकै, करिले हरिसे हेती।
कहैं कबीर सुनौ भाई साधू, कालदण्ड सरसेती ॥४॥

२५९

हरि बिन को मरजादा राखै ॥
गज औ ग्राह लड़ैं जल भीतर, संग लिहे गज लाखै।
पौरुख थक्यो छाँड़ि सब भागे, दीनबंधु अस भाखै ॥१॥
मध्य सभामें बैठि द्रौपदी, कोउ सुभट नहीं ढाखै।
संकट पर्यौ तौ हरिको सुमिर्यौ, बढ्यौ चीर गज लाखै ॥२॥
हिरणाकुश प्रह्लाद भक्तसों, काढ़ि खड्ग अस भाखै।
आजु पुत्र तोंहि बधन करत हौं, कहाँ राम त्वै राखै ॥३॥
कस मन मूढ़ बिसार्यो रामको, मूँदि गईं तोरी आँखैं।
तुलसी दास भजौ भगवानै, प्रेम अमी रस चाखै ॥४॥

२६०

हरि बिन कोऊ काम ना आवै ॥
रत्न-जड़ित सोनेके खम्भा, रुचि-रुचि भवन बनावै।
निकरि गयो जब हंस देंहसे, पलभरि रहन न पावै ॥१॥

आस करी जननी सुतकेरी, बहु बिधि दूध पिलावै।
दूरि लिह्यौ कंठका धागा, तापर बदन जलावै ॥२॥
त्रिया कहै हमहू सँग चलबै फूसि-फूसि धन खावै।
अंतकी बेरि फेरि मुख बैठी, एकौ पग न उठावै ॥३॥
अधम अधारण गणिका तारण, सुनु शठ तेहि न बिसारो।
हरिका नाम लिह्यौ नहीं मूरख, सूर यही पछतावै ॥४॥

२६१

हरि बिन कौन साँकरे काको ॥
मध्य सभामें बैठि द्रौपदी, कुलवंतिनी कुल वाको।
भक्त कोरकी ओर विश्वम्भर, बढ्यो चीर शिर ढाँको ॥१॥
निर्भय परे पांडवा सूतैं, तिन्हैं नहीं डर डाँको।
धन्य भाग्य उन पांडु-सुतनको, जिनका रथ हरि हाँको ॥२॥
मध्य सभा भीषम प्रण राख्यौ, भक्ति अचल दिह्यौ ताको।
चारिउ वेद चतुर गुण गावत, शंकर ब्रह्मा जाको ॥३॥
बाँधि सुधन्वै डारि कराहै, राजन मोह कहाँको।
मलय समान भयो तन वाको, बार न बाँको वाको ॥४॥
जरासिंधु बहु जोर जनावै, चीरि किह्यौ द्वै फाँको।
बंदी छूटि सकल देवनकी, जिन शरणागत ताको ॥५॥
अंबरीष मुनि श्राप दिह्यौ है, जरत सुदर्शन ताको।
भारी बिपति परी दुर्वासै, मर्म न जान्यौ ताको ॥६॥
कोटिन अधम तरे दुनियामाँ, गन्यो न कौन कहाँको।
रहा जात इक पतित अकेला, आँधर सूर सदाको ॥७॥

२६२

तन बाग बना गुलकारीका ॥
कारीगर करतार आप हैं, अलख निरंजन निरबानी।
अब जिन बागोंकी धरी नेह है, उनकी कुदरत तिन जानी।
औ तीनि हाथका लम्बा-चौड़ा, चारों बुर्जपर लासानी।
जब नवाँ महीना लगा हुआ है, तब कुदरत पहुँचा पानी।
तहँ बनी सबुर मजबूत बागकी, बँगला मीनाकारीका ॥१॥

नौसौ नद्दी बहैं बागमें, अरसठ तीरथ धर ध्यानी।
जहँ घाट-घाटपर इश्म पूँछता, कहाँ करौं जिय असनानी।
जहँ नब्बे और नवासी तरिगें, संगम तरिगें दरम्यानी।
औ दिल अपनेको समझ-बूझकर, दरजा रख सरदारीका ॥२॥
मृत्युलोकमें बाग लगा, उसमें फल लागैं चारी हैं।
जहाँ चारों बुर्जपर मुरिला कुहकैं, हवाकी छुटैं फुवारी हैं।
औ किस्म-किस्मके पंछी बोलैं, हुआ चमन गुलजारीका ॥३॥
सायर लूजी कहैं बागमें, इक आते इक जाते हैं।
औ जिनने बोई बेलि धर्मकी, निश्चयसे फल खाते हैं।
औ भजन-भावमें मगन-मस्त हैं, साँईके गुन गाते हैं।
यह हरिका आका हवै नहीं, मत करो गर्व कोई सारीका ॥४॥

२६३

एक दिन ऐसा कलजुग आवै॥
ब्राह्मण होइकै बेद न बाँचै, मिथ्या जन्म गँवावै।
बिना शस्त्रके क्षत्री फिरिहैं, शूद्रहि राज चलावै ॥१॥
बेटा मात-पिता ना चीन्हैं, नारिसे नेह लगावै।
सो तिरिया स्वामी ना जानै, और पुरुष मन भावै ॥२॥
टप्पा-ठुमरी-गजल-रेखता, सबहीके मन भावै।
जहाँपे होवे भजन-भागवत, हुआँ न कोई जावै ॥३॥
रंडी-भडुआ पूरी खैहैं, साधू गारी पावैं।
घरकी तिरिया भूखन मरिहैं, परनारी ललचावैं ॥४॥
अच्छे कर्म करै नहिं कोई, सबके पाप समावै।
अन्न बिना सब भूखन मरिहैं, बापै पूत चबावै ॥५॥
सती पती कोइ बिरली होइहैं, सब दुखिया होइ जावैं।
बालमीक-तुलसी अस कहिगें, सुख कोऊ ना पावैं ॥६॥

२६४

हरिकी रचना अद्भुत प्यारी॥
जलकी बूँदसे देंह बनाई, तामें नर अरु नारी।
हाथ-पाँव सब अंग मनोहर, भीतर प्राण सँचारी ॥१॥

नभमें नभचर जीव बनाये, जलमें रचे जलचारी ।
वृक्ष लता बन पर्वत सुंदर, सागरकी छबि न्यारी ॥२॥
चाँद-सूर्य दोउ दीपक कीन्हे, रात-दिवस उजियारी ।
तारागण सब फिरत निरंतर, चहुँदिशि पवन सवारी ॥३॥
ऋषिमुनि निशि-दिन ध्यान लगावैं, लखि न सकैं गति सारी ।
तुलसीदास अनंत महाबल, ईश्वर शक्ति तुम्हारी ॥४॥

२६५

चलु मन मंजन करु गंगाके ॥
दरस-परस-मंजन कीन्हेसे, पाप कटैं पूरबके ।
मुख भरि बारि पान कीन्हेसे, बसौ लोक ब्रह्माके ॥१॥
परम लाभ भागीरथ गंगा, दर्शन पवन-तनयके ।
अच्छत चावल फूल बताशा, पूजन विश्वेश्वरके ॥२॥
दान-दक्षिणा दै विप्रनको, पुनि दर्शन गंगाके ।
तुंडी भैरव तुंडपालके, दर्शन करु बटुकाके ॥३॥
जो पिशाच मोचनको कहिए, दै पिंडा पित्रनके ।
कहैं रिशिनाथ भाव भोजन करु, पद पखारु विप्रनके ॥४॥

२६६

नित प्रात जपो गंगा-गंगा ।
बरजोरसे गोमुख ह्वै निकरीं, गईं भूप भगीरथके संगा ।
घहराय घटा घनघोर बहैं, जहँ छूटि पहाड़नके संगा ।
हरिद्वार जहँ हरिकी पँवरैं, उमड़ैं लहरैं नौ-नौ रंगा ॥१॥
प्रागसे बहुरि बनारस आईं, मोंहि रहीं शिवकी रंगा ।
जहँ साठिक पुत्र सहस्र तरे, एक रीझि रहे न रहे संगा ।
जितने सुर सिद्ध मुनींद्र सबै, कैकै जलपान भए चंगा ॥२॥
धकधूरि जगी मधु-मक्खिनकी, विष पीवत दून बढ़्यौ अंगा ।
शिवकेरि जटा विकराल भईं, चहुँ ओरनसे उमहीं गंगा ।
दुख हेरत जासु प्रचण्ड भयो, जस छारके बीच कसी ।
कुंडा ॥३॥

जितने यहि देंहके दाहक हैं, तुमही अघ मातु पियौ भंगा ।
आकाशकी वृत्ति पताल गई, तरि गयो सुरेशनके संगा ।
कवि लछिमनदास पुकारि कहैं, मोंहि सूझि परै न कछू ढंगा ॥४॥

२६७

सुमिरौ मन गौरि गणेश गुनै ॥
गणनायक हौ सब लायक हौ, बर दायक दीन दरिद्र भनै ।
अरु जासु प्रताप बिरंचि रचो, गणनायक नाम जपै रसनै ॥१॥
जेहिके सुमिरे अघ ओघ मिटैं, सो मिटैं भव भीरनकी भवनै ।
सब सिद्धि मिलैं नव निद्धि नवैं, जग जाको नाम जपै जु बनै ॥२॥
जाको नाम लेत सुर-नर-मुनि· पावत भेद न बेद भनैं ।
रसना जपु नाम निरंतर तासु, जपैं जेहि नारद शेष धुनैं ॥३॥
जाको नाम लेत धरणीधर, सो परदेश करै गमनै ।
वाको शिवराम मिलै सुख-संपति, आवहि बेगि घरैं अपनै ॥४॥

२६८

छूटैं सुमिरे सब बिघन-फंद । बंदौं गणपति चरणारविंद ॥
उर माल बिराजत विविध रंग, नाचत गावत सुर सिद्धि संग ।
जय-जयंति सच्चिदानंद कंद, दुख हरण सकल भव भेद द्वंद ॥१॥
वर-दायक करुणाकर उदार, सुर रंजन गंजन बिपत्ति भार ।
मणि लसत मुकुट सिर शुंद दंड, असुराधिप नाशक अति प्रचंड ॥२॥
गणनायक लायक भुज विशाल, गजमुख लबोदर विशद भाल ।
सिंदूर तिलक शोभित सो चंद, बरणैं यह छबि को बने मंद ॥३॥
गौरीकर शोभित सुभग दंत, सुखदायक लायक प्रणत संत ।
महिमा नहिं पावत कहत संत, दुनिया भरि ध्यावत हैं अनंत ॥४॥

२६९

रघुबर ऐसे दीन-दयालम् ॥
सेबरी पूजापाठ न जानैं, ना जानैं जप-जालम् ।
ताको सुभग-शिरोमणि कीन्हेव, निंदक भये विहालम् ॥१॥
कुबजा शरण तुम्हारे आई, दीन्ह्यौ रूप विशालम् ।
ताके हेतु मातुपितु त्याग्यौ, अरु त्याग्यौ ब्रजबालम् ॥२॥
जो कोउ शरण प्रभूकी आवत, क्षणमें होत निहालम् ।
लंकामाँझ विभीषण-जनकी, जरत बचाई शालम् ॥३॥
दीनबंधु प्रभु दीन-जननको, करत सदा प्रतिपालम् ।
मोहनदास सुदामाजीके, हर्‍यौ दुःख भ्रम जालम् ॥४॥

२७०

बौरे मन भजु हरदम परदम् ॥
हर-हर करत बढ़त यश शंकर उठै तेज चमकै चमचम् ।
जब दूनी प्रीति बढ़ै मनमें तब छाँड़ि दियौ सिगरो हमहम ॥१॥
जिनके सिर गंग जटन बिहरैं कर जोरत बाजत हैं डिमडिम् ।
जहँ कोटिन पतित महा अपराधी नाम लिहे तरि जात अधम।२॥
अरधंगी छबि अधिक बिराजे, निरत करैं सुंदर चमचम् ।
मन छोड़ि कपट सिगरी चतुराई और करै कछु नेम धरम् ॥३॥
महादेव कैलासके बासी, सुर-नर-मुनि ध्यावैं चरणम् ।
कह दास निजाम दया करिकै, शिब राखि लेव मम लाज ॥
शरम ॥४॥

२७१

नाथ कैसे नरसिंह-रूप बनायो ॥
ना कोई तुम्हरे पिता कहावैं, ना कोई जननी जायो ।
खम्भ फोरिकै प्रगट भयो हरि, अद्भुत रूप बनायो ॥१॥
आधा रूप धर्‍यौ प्रभु नरका, आधा सिंह सुहायो ।
हरणकशिपुको पकरि धरणिमें, नखसे फारि गिरायो ॥२॥
गर्जन सुनिकै देवलोकसे, ब्रह्मादिक सब धायो ।
हाथ जोरिकै बिनती कीन्हीं, शान्त रूप धरवायो ॥३॥

अंतरजामी घट-घट-बासी, ईश्वर बेद बतायो।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, नरनारी गुण गायो ॥४॥

२७२

मन, तोंहि केहि बिधि कर समझाऊँ ॥
सोना होय तो सोहाग मँगाऊँ, बंकनाल रस लाऊँ।
ज्ञान शब्दकी फूँक चलाऊँ, पानी कर पिघलाऊँ ॥१॥
घोड़ा होय तो लगाम लगाऊँ, ऊपर जीन कसाऊँ।
होय सवार तेरेपर बैठूँ, चाबुक देकै चलाऊँ ॥२॥
हाथी होय तो जँजीर गढ़ाऊँ, चारों पैर बँधाऊँ।
होय महावत तेरेपर बैठूँ, अंकुश लैकै चलाऊँ ॥३॥
लोहा होय तो ऐरन मँगाऊँ, ऊपर धुवन धुवावूँ।
धूवनकी घनघोर मचाऊँ, जंतर तार खिंचाऊँ ॥४॥
ज्ञानी होय तो ज्ञान सिखाऊँ, सत्यकी राह चलाऊँ।
कहत कबीर सुनौ भाई साधू, अमरापुर पहुँचाऊँ ॥५॥

२७३

मन, तोंहि नाच नचावै माया ॥
आसा-डोरि लगाय गले बिच, नट जिमि कपिहि नचाया।
नावत सीस फिरै सबहीको, नाम-सुरति बिसराया ॥१॥
काम-हेतु तुम निशिदिन नाचे, का तुम भरम भुलाया।
नाम-हेतु तुम कबहूँ ना नाचे, जिन सिरजी तोरी काया ॥२॥
ध्रुव-प्रह्लाद अचल भये जैसे, राज बिभीषण पाया।
अजहूँ चेत हेत कर हरिसे, सुन रे निलज बेहाया ॥३॥
सुख-संपति सब साज बड़ाई, तेरे साथ पठाया।
कहैं कबीर सुनौ भाई साधू, गनिका यान चढ़ाया ॥४॥

२७४

जगमें व्यापि रही हरि-माया ॥
करि निवास नौ मास गर्भमें, फिरि भूतलमें आया।
खान-पान विषया-रस भोगत, मात-पिता सिखलाया ॥१॥

घरमें सुंदर नारि नवेली, देखि-देखि ललचाया ।
दारा सुत बहु मित्र बंधुके, मोह-गर्त लपटाया ॥२॥
गृह-झंझटमें निशिदिन भरमत, सारा जन्म बिताया ।
आशा प्रबल भई मन-भीतर, निर्बल ह्वैगै काया ॥३॥
पाप-पुण्य संचय करि पुनि-पुनि, स्वर्ग-नर्क भरमाया ।
सूरश्याम प्रभु तुम्हरी कृपा बिन, मोक्ष नहीं कोई पाया ॥४॥

२७५

हरि तुम भक्तनके हितकारी ॥
जन प्रह्लादको हरिणकशिपुने, कष्ट दिह्यौ जब भारी ।
नरसिंह रूप बनाय असुरकी, नखसे देंह बिदारी ॥१॥
ध्रुवने बनमें करी तपस्या, मातु-बचन हिय धारी ।
दरस दिखाय अमरपद दीन्हेव, जन्म-मरण दुख टारी ॥२॥
ग्राह ग्रस्यो गजराज दीनको, तब हरि नाम पुकारी ।
गजके फंद छुड़ावन धाये, छाँड़ि गरुड़ असवारी ॥३॥
द्रुपद-सुता-लज्जा-हित दीन्हीं, लाखन गजकी सारी ।
सूरश्याम भव-पीर हरौ, मैं आयौं शरण तुम्हारी ॥४॥

२७६

मोरी सुनहु अरज गिरिधारी ॥
बालापन सब खेलि गँवायौं, तरुणाई बस नारी ।
गृह-कुटुम्बके पोषण-कारण, घर-घर बन्यौं भिखारी ॥१॥
मैं जान्यौं यह बांधव मोरे, स्वारथकी सब यारी ।
धनसे हीन भयों मैं जबते, सबको लागौं ख्वारी ॥२॥
मिला मनुज-तनु प्रभु-करुणासे, ताकी याद बिसारी ।
फँस्यौं फंद माया ठगिनीके, भयों कुटिल व्यभिचारी ॥३॥
बूड़ि रह्यों मैं भव-सागरमें, लीजै बेगि उबारी ।
सूरश्याम अब तुम बिन मेरो, कौन बनै हितकारी ॥४॥

२७७

अबकी राखि लियौ भगवाना ॥

तरे पारधी बान गहे है, ऊपर उड़ै सचाना।
चहूँ दिशासे काल गरेरे, कैसेक उबरैं प्राना ॥१॥
कहै कपोती सुनौ कपोता, मरना ह्वै विधाना।
अंतरध्यान धरौ रघुबरका, वई उबारैं प्राना ॥२॥
तरे पारधी डसो भुवारे, करसौं छूटैं बाना।
छूटो बान सचानको लाग्यो, धनि-धनि कृपा निधाना ॥३॥
उठी कपोती नाचन लागी, गावैं हरिका गाना।
तुलसीदास भजौ भगवानैं, घट-घट उबरैं प्राना ॥४॥

२७८

मूरख कस प्रभु-दास कहावै ॥

सकल संग तजि भजत जाहि मुनि, जप-तपजाग बनावै।
मो सम मंद महा खल पामर, कौन जतनि तेहि पावै ॥१॥
जेहि सर काक-कंक-बक-सूकर, क्यों मराल तहँ आवै।
हरि निर्मल मल-ग्रसित-हृदय, असमंजस मोंहि जनावै ॥२॥
जाकी सरन जाय मुनिगन बहु, निज त्रयताप बुझावैं।
तहूँ गए मद मोह-लोभ अति, मेरो मन भरमावै ॥३॥
भव-सरिताकी बीच धारमाँ, मेरो मन अकुलावै।
राखहु दीन-दयाल शरण मोंहि, तुलसिदास गुन गावै ॥४॥

२७९

हरि मैं आयौं शरण सबेरे ॥

लोभ-मोह-मद-काम-क्रोध-रिपु, फिरत रैन-दिन घेरे।
तिनहि मिले मन भयो कुपथ-रत फिरैं तिहारेहि फेरे ॥१॥
दोष-निलय यह विषय शोक-प्रद, कहत संत-श्रुति टेरे।
जानतहूँ अनुराग तहाँ अति, सो हरि तुम्हरेहि प्रेरे ॥२॥
विष पियूष-सम करहु अगिनि हिम, तारि सकहु बिन बेरे।
तुम-सम ईस कृपालु परमहित, पुनि न पाइहौं हेरे ॥३॥

तुलसिदास यह विपति-बागुरो, तुमहिसों बनै निबेरे।
यह जिय जानि रहौं सब तजि, रघुबीर भरोसे तेरे ॥४॥

२८०

जड़ मन चेत्यौ नहीं चेताये ॥
जो सुख सुरपुर नरक गेह बन, आवत बिनहि बुलाये।
तेहि सुखको बहु जतन करत मन, समुझत नहिं समुझाये॥१॥
परदारा पर द्रोह मोहबस, किए मूढ़ मन भाये।
गर्भ बास दुखरासि जातना, तीव्र बिपति बिसराये ॥२॥
काय-बचन-मन सपनेहुँ कबहुँक, घटत न काज पराये।
सुर-दुर्लभ तनु धरि न भजे हरि, मद-अभिमान भराये ॥३॥
गई न निज-पर-बुद्धि शुद्ध ह्वै, रह्यो न राम लय-लाये।
तुलसिदास यहु अवसर बीते, कुछ न बनै पछिताये ॥४॥

२८१

झूठा सब संसारा। भजिले रामनाम शिव प्यारा ॥
जेहि डालीको पकर्‌यौ मानुष, तेहिका कौन सहारा।
तेहि डालीको चूहा काटत, एक श्वेत एक कारा ॥१॥
नीचे सिंह खड़ा बहु तड़पै, और कालिया कारा।
कहूँ त्राण ना लखत जगत्‌में, सोचत मन बेकारा ॥२॥
उम्रकी डाल रैन-दिन चूहा, काल कारिया कारा।
व्याघ्रकी माया फँस्यौ जगत् सब, सूझै न कोई किनारा ॥३॥
नश्वर तात मात सब नश्वर, नश्वर सुत औ दारा।
नश्वर सबै काम ना आवै, करत विनोद पुकारा ॥४॥

२८२

हरि कस बलि घर जाचन आये ॥
बलि राजा रणधीर महाबल, इंद्रादिक डरपाये।
तीनि लोक अपने वश कीन्हे, निर्भय राज्य चलाये ॥१॥
बामन-रूप धारकर सुंदर, बलिके जग्य सिधाये।
तीनि चरण पृथ्वी दे राजन, तेरो यश हम गाये ॥२॥

दान दियो राजा बलिने जब, अद्भुत रूप बढ़ाये ।
तीनि लोकमें पाँव पसारे, बलि पाताल पठाये ॥३॥
चरण कमलसे गंगा निकरीं, देव पुष्प बरसाये ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, दानव-गर्व हराये ॥४॥

२८३

बलि-गृह प्रात-समय गयो वामन ॥

मृग-छल-दंड-कमंडल लीन्हे, माथे तिलक रमावन ।
धरि बटु-रूप मुदित-मन मंगल, जय अति शब्द सुनावन ॥१॥
द्वारपाल राजाके ठाढ़े, देखि सबै सिर नावन ।
कहौ विप्र आगमन कहाँते, जैहौ कौने गाँवन ॥२॥
दानी भूप सुना भूपतिको, हम आयेन कछु माँगन ।
जाय सँदेस कहौ भूपतिते, तुरत विलम्ब न लावन ॥३॥
द्वारपालके बचन सुनत खन, धायौ नंगे पाँवन ।
हाथमें लीन्हे माल पुष्पकी, देख्यौ रूप सुहावन ॥४॥
कियौ प्रणाम दोउ कर जोरे, जाकी रज अति पावन ।
माँगा चहौ सो माँगौ द्विजोत्तम, जो तुम्हरे मन-भावन ॥५॥
धर्म-धुरीण प्रवीण भूपती, हौ उदार जग-पावन ।
साढ़े तीनि पैग भुइँ दीजै, नापि हमारे पाँवन ॥६॥
एवमस्तु राजा तब बोले, जो तुम्हरे मन-भावन ।
शुक्र बलिहि कारण समझावत, मानत नहीं सिखावन ॥७॥
इन्द्रै राज बलीको दर्शन, दीन्हेव हरि-हर पावन ।
तुलसिदासको यही भरोसो, चरण-कमल उर लावन ॥८॥

पंचम-विभाग-महाभारतके फाग

२८४

भीषम आजु कठिन प्रण ठाना ॥

मुकुट बाँधि कीन्हेव छल हमते, अर्जुन औ भगवाना ।
सो बल आजु देखिहौं पारथ, गह्यौ अस्त्र मैदाना ॥१॥
उड़गण सकल देवता आये, जहाँ भीषम प्रण ठाना ।
काको प्रण रहिहै भारतमाँ, देखैं चढ़े बिमाना ॥२॥
ऐसे बाण चले दल-भीतर, को कै सकैं बखाना ।
सहस बाण अर्जुन-उर लागे, लक्ष बाण हनुमाना ॥३॥
नंदघोषके घोड़े घायल, घायल भे भगवाना ।
अर्जुनको तन झाँझरि कैकै, कोटि बाण हनुमाना ॥४॥
ऐसे बाण चले दल भीतर, जूझि गिरें मैदाना ।
भीषम बाण असंखिन छोड़ेव, पूर्ण छिपाने भाना ॥५॥
लैकै चक्र चले यदुनंदन, शेषनाग अकुलाना ।
शिवदर्शन भाषत कर जोरे, वेद-विदित जग जाना ॥६॥

२८५

मोरि पति लैगा दुशासन आयकै ॥

दुष्ट दुशासन चीर हरन चह्यौ, मध्य-सभामाँ आयके ।
पर तिरियाकी लाज जात है, कोउ न कहै समझायके ॥१॥
अम्बर-पट अंचल करि ढाँकत, घूँघट पट लटकायकै ।
ऐसे दुष्टका मुख नाहिं देखौं, मरौं जहर विष खायके ॥२॥
करुणा कैकै रोवै द्रौपदी, नैनन नीर बहायकै ।
भरी सभामाँ लाज जात है, बैठचो कहाँ बिसरायकै ॥३॥
खैंचत चीर दुशासन थाक्यो, बैठचो मुँह बिसरायके ।
सूरके स्वामी बेगि ना अइहो, फिरि का करिहौ आयके ॥४॥

२८६

अर्जुन हाँकौ रथ घहरायकै ॥

भीषम कहैं सुनौ दुर्योधन, अर्जुन पहुँचो आयकै ।
सजग होय सब सैन सँभारो, होइहै युद्ध अघायकै ॥१॥
कहैं द्रोण ऐसो को योधा, लड़ै जो उनसे जायकै ।
जब अर्जुन निज तेज सँभारैं, मारैं दल ललकारिकै ॥२॥
शकुनी कहैं करणसों हँसिकै, भीषम रहैं बुढ़ायकै ।
मंद दृष्टि अब द्रोणकी होइगै, कर्ण हँसे हहरायकै ॥३॥
सुनी भीष्म शकुनीकी बातैं, बोले बहुत रिसायकै ।
नौबति कहत जानि तब परिहै, जब लड़िहैं रण जायकै ॥४॥

२८७

द्रौपदी हरिका टेरि रही रे ॥

मो पति पाँच पाँचके तुम पति, सो पति जात बही रे ।
तुम ना सहौ देवकीनंदन, कुंती-सुतन सही रे ॥१॥
भीषम-द्रोण-कर्णके देखत, जहँ अनरीति भई रे ।
उघरत अंग देव-मुनि देखत, फाटत नहीं मही रे ॥२॥
कहाँ गये वै बाण-शरासन, जिनसों जीति मही रे ।
पाँचौ प्रबल सकल बल थाके, प्रगट पुकार कही रे ॥३॥

हे यदुनाथ राखु यहि अवसर, आसा त्यागि रही रे।
सूरदास प्रभु बेगि दरस देव, बिपति न जात सही रे ॥४॥

२८८

जब गह्यौ राज सभामाँ आनी ॥
पंचवधू पटहीन करनको, दुःशासन अभिमानी।
धर्म-नीति अरु लाज त्यागि सब, गहे केश निज पानी ॥१॥
बैठो हँसी करै दुर्योधन, रुदन द्रौपदी ठानी।
बज्र परै यहि नृप-समाजपर, करि विलाप अकुलानी ॥२॥
टेरै कृष्ण कमलदल लोचन, बिलखति कातर बानी।
बेगि करौ अब दया दयानिधि, श्रीपति सारँगपानी ॥३॥
करति विलाप सभामें ठाढ़ी, नेह-चरण लपटानी।
सूरदास तेहि महा-बिपतिमाँ, पति राख्यो जगजानी ॥४॥

२८९

मोरी पति राखि लिह्यौ गिरिधारी ॥
व्याकुल भई दुखित भई द्रौपदी, लखि कौरव दल भारी।
अबतौ नाथ रह्यौ कछु नाहीं, उघरत देह हमारी ॥१॥
अस्त्र-हीन पांडव सब डोलत, भीम गदा दिह्यौ डारी।
रही न टेक प्रबल पारथकी, धरणि युधिष्ठिर हारी ॥२॥
सूर समूह भूप सब बैठे, भीष्म द्रोण व्रतधारी।
कहि न सके कोऊ बात परस्पर, पतितन अपति बिगारी॥३॥
लज्जा जात नाथ दासीकी, फिरि का करहु मुरारी।
सूरके श्याम निकट जब अइहौ, देखिहौ मोंहि उघारी ॥४॥

२९०

अब मोरी राखौ पति गिरिधारी ॥
सूर-समूह भूप सब बैठे, द्रोण-कर्ण व्रतधारी।
कहि न सकै कोऊ बात परस्पर, पतितन पति लै डारी ॥१॥
बल-विहीन पांडव सब ह्वैगे, भीम गदा महि डारी।
रही न पैज प्रबल पारथकी, जबते धर्म महि हारी ॥२॥

लाक्षागृहते जरत उबार्‍यौ, जब प्रभु तुम्हैं पुकारी।
अब लगि नाथ कछू नहिं बिगर्‍यौ, अब सब जात
बिहारी ॥३॥
लूटत दुष्ट लाज द्रुपदीकी, आवहु बेगि मुरारी।
सूरके स्वामी बेगि ना अइहौ, देखिहौ मोंहि उघारी ॥४॥

२९१

तुम बिन कौन सुनै बनवारी ॥

कीन्ह्यौ कपट आजु दुर्योधन, खेली पंसासारी।
धन-धरती औ महल-खजाना, पांडु गए सब हारी ॥१॥
खैच्यो चीर सभामाँ मेरो, कछु नहीं हृदय बिचारी।
दुष्ट दुशासन चीर पकरिकै, मोंहिका करत उघारी ॥२॥
भीषम-द्रोण-कर्ण-कुंतीसुत, कोउ नहीं सुनै हमारी।
बैठे हैं सब मौन साधिकै, मैं बिनती करि हारी ॥३॥
हा यदुनाथ! अनाथ आजु मैं, क्यों मेरी सुरति
बिसारी।
सूरदास द्रौपदी पुकारै, राखौ लाज हमारी ॥४॥

२९२

प्रभु मेरे का करिहौ फिरि आइकै ॥

दुर्योधन मोंहि करत उघारी, मध्य-सभा बोलवाइकै।
दुःशासन मेरो चीर हरत है, कोऊ न कहै समुझाइकै ॥१॥
भीम हरी ना पीर भीर मैं, पारथ दिह्यौ हराइकै।
त्यागी पीर युधिष्ठिरहूने, आपन सत्त गँवाइकै ॥२॥
सबै पांडवा मौन बैठि हैं, सगरी लाज गँवाइकै।
पंचवधूकी लाज जात है, बैठे भुजा कटाइकै ॥३॥
बार-बार यह कहत द्रौपदी, हरिसे ध्यान लगाइकै।
हंसराज कहँ दीनबंधु वुइ, बैठे देर लगाइकै ॥४॥

२९३

लाज मोरी राखौ हो महाराज ॥
मध्य-सभामें बैठि द्रौपदी, दुर्योधन मुसक्यात ।
अधम चीर मोरा खैंचै दुशासन, नग्न होत मेरो गात ॥१॥
भीषम-द्रोण-कर्ण सब बैठे, कहि न सकै कोई बात ।
खड़ी द्रौपदी इतउत देखै, हेरत प्रभुकी बाट ॥२॥
कहै द्रौपदी सुनौ भीमजी, करना है यहु काज ।
कोटिन कुंजरका बल तुम्हरे, ऐहै कौने काज ॥३॥
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरशको, हरि-चरणन चित लाग ।
टेर द्रौपदीकी सुनि पायौ, फाँदि परे ब्रजराज ॥४॥

२९४

आजु राखौ द्रुपदीकी लाज ॥
भीषम-कर्ण-द्रोण-दुर्योधन, बैठे सभा बिराज ।
तिन देखत मोंहि करत उघारी,लागत कस नहिं लाज ॥१॥
खम्भ फारि हिरनाकुश मार्‍यौ, जन-प्रह्लाद-निवाज ।
नाँघिकै सागर हन्यौ लंकपति, जनक-सुताके काज ॥२॥
दुखित द्रौपदी जानि प्राणपति, आये खगपति साजि ।
पुरवन लागे चीर अनेकन, ताके भरे जहाज ॥३॥
खैंचत चीर दुशासन हार्‍यो, लागी मनमें लाज ।
सूरदास पट त्यागिकै बैठ्यो, गिरिगा सिरसे ताज ॥४॥

२९५

अबतौ नाथ चीर दरसाये ॥
पीले-हरे-सुर्ख पचरंगे, नाना भाँति सुहाये ।
प्रगट करे द्रौपदीके तनमें, ढेरके ढेर लगाये ॥१॥
जिन प्रभुने गोवर्धन धार्‍यो, सुरपति गर्व नसाये ।
तिन प्रभुने द्रौपदि-पति राखी, कौरव-नाम ढहाये ॥२॥
खैंचत-खैंचत हार्‍यो दुशासन, चीरका अंत ना पाये ।
मन खिसियाय त्यागि पट दीन्ह्यों, मध्य-सभा-सिर
नाये ॥३॥

नौबतिराय कहैं करजोरे, सुर-नर-सब हर्षाये।
द्रुपद-सुताकी लज्जा राखी, दीन-दयालु कहाये ॥४॥

२९६

बिना पर कैसेक संग उड़ाऊँ ॥
बच्चा हुवै दाबि लै जाऊँ, अंडा कहाँ लै जाऊँ।
धक्का लागे फूटि जात हैं, छोंड़ि जाउँ कहँ पाऊँ ॥१॥
जहँ दल जुट्यो अठारह क्षौणीं, कैसेक सुतन बचाऊँ।
मोरे तनमाँ आगि लागि है, कैसेक डाह बुझाऊँ ॥२॥
तुमतौ दीनानाथ साँवरे, तुमसे काह छिपाऊँ।
तुमतौ हौ घट-घटके बासी, तुम्हैं छोंड़ि कहँ जाऊँ ॥३॥
जनि कर शोच धीर धरु भरुही, मैं गजराज पठाऊँ।
महाभारत भरुहीके अंडा, घंटा दूरि बचाऊँ ॥४॥

२९७

आजु मैं पारथ नाम कहैहौं ॥
हाँकरि चाप इन्द्र श्रोणित सर, मंजन बेगि करैहौं।
प्रलय करौं कौरव-दल ऊपर, काग कराल उड़ैहौं ॥१॥
लै भगदन्त और दुःशासन, इक-इक बाण लगैहौं।
बहुतक बाध्य करौं पृथ्वीपर, जम्बुक-कुल अघवैहौं ॥२॥
भीषम-द्रोण कर्ण दुर्योधन, शरकी सेज सोवैहौं।
भोर होत जयद्रथ न मारौं, कुन्ती-सुत न कहैहौं ॥३॥
इतना न करौं तौ शपथ श्यामकी, क्षत्री-गति ना पैहौं।
सूरश्याम रण-समर-विजयमाँ, जियत न पीठि
देखैहौं ॥४॥

२९८

आजु मैं हरिसों अस्त्र गहैहौं ॥
मोंहि शपथ गंगा-जननीकी, शान्तनु-सुत न कहैहौं।
महाभारत पारथके ऊपर, प्रभुका परण छोड़ैहौं ॥१॥

खण्डैखण्ड महारथ भंजौं, कपि-ध्वज सहित ढहैहौं ।
पाण्डव-सहित सारथी मारौं, शोणित-सिंधु बहैहौं ॥२॥
जौ जीतौं यश लेहुँ जगत्‌माँ, त्रिभुवन यश विस्तरिहौं ।
हारौं तौ मंडिल भेदि भानुको, सुरपुर जाय बसैहौं ॥३॥
इतना न करौं तौ शपथ श्यामकी, क्षत्री-गति ना पैहौं ।
सूरश्याम रण-समर-विजयमाँ, जियत न पीठि
देखैहौं ॥४॥

२९९

कुंती-भवन गये यदुराई ॥

कुंती-भवन गये यदुराई, बैठे सेज बिछाई ।
रोवै कुन्ती कहै हरीसे, विपदा सही न जाई ॥१॥
दुर्योधन अन्यायी राजा, लीन्हेव राज छिनाई ।
बहु विधि नाथ छलै बहु हमका तुमहूँ सुधि बिसराई ॥२॥
अबतौ नाथ बिपति यह टारौ, भक्तनके सुखदाई ।
जैसे टेर सुनी है गजकी, ग्राहते लिह्यौ बचाई ॥३॥
नौबतिराय कहैं कर जोरे, हरि-चरणन चित लाई ।
हरिश्चन्द्रकी गाथा कहिकै, बहु प्रकार समुझाई ॥४॥

३००

कुरुपति साजि चले दल भाई ॥

सजि-सजि अस्त्र शस्त्र सब योधा, काहू न बार लगाई ।
पहिरि सनाह टोप धरि माथे, घोड़न बारि बँधाई ॥१॥
हाथिनके हलका गल गाजैं, ज्यों घनघटा सुहाई ।
मणि-गण-जटित धरे हैं हौदा, दामिनि दमक देखाई ॥२॥
गज-रथपर कुरुनंदन राजत, शोभा बरणि न जाई ।
श्वेत छत्र फहरात पताका, सूर-बीर हर्षाई ॥३॥
गज-रथ चलत हलत है धरनी थिरकि-थिरकि थहराई ।
नौबतिराय गर्द नभ छाई, सविता नहीं दिखाई ॥४॥

३०१

कुरुपति आजु देखु बल मेरो ॥
सौ बाँधव तुम्हरे ठाढ़े हैं. औ दल बहुत घनेरो ।
सबको मारि समर बिच लाऊँ, लखु पुरषारथ मेरो ॥१॥
इतनी कही कुँअर अभिमनुने, भीमसेनको टेरो ।
गदा लिहे मोंहि पीछे रहियो, महा कठिन उरझेरो ॥२॥
बिना घाव कोई जान न देहीं, सबको कालने घेरो ।
मुंडनके मुरचौरा करिहौं. लोथिनको करौं ढेरो ॥३॥
भोज बहादुर कहैं करजोरे, हरि-चरणनको चेरो ।
पढ़िकै मंत्र तेज करि घोड़ा, व्यूह-मध्य रथ फेरो ॥४॥

३०२

कुरुपति आजु न युद्ध चहीजे ॥
बाँह गहे कमला समुझावत. राजन बैन सुनीजे ।
जलसों निकसि युद्ध ना करिये, यह अपमान सहीजे ॥१॥
तोसों भाग्यवंत नहीं दीखे, तीनि लोक मथि लीजै ।
करौ अनाथ न नृपति महीको, केवल रैन रहीजे ॥२॥
धन-सेना सब देहुँ कालिह तोंहि, सोच न मन कछु कीजे ।
पाण्डव क्या श्रीपति यदि आवैं, भोरें गदा गहीजे ॥३॥
भयो काल-वश अंध अंध-सुत, श्रीपति ठेलि चलीजे ।
द्विज गिरिजेश रमापति कुंठित, निश्चय मृत्यु लहीजे ॥४॥

३०३

विजय रथ हाँकौ हो बनवारी ॥
इत सेनापति भीषम राजैं, उत अर्जुन बलधारी ।
गिद्ध-मसान परे दोउ दलमाँ, नाचि रहे हैं त्रिपुरारी ॥१॥
हाँक देत हरि हाँकत घोड़े, पवन-वेग तन धारी ।
कपि बलवान पताका सोहै, अर्जुनकी रखवारी ॥२॥
दस सहस्र रथि भीषम मार्‍यौ, शंख दिह्यौ धुधकारी ।
बचै ना पावै पाण्डु-दल एकौ, करौ समर भयकारी ॥३॥

सभा मध्य राजैं प्रभु कैसे, हाँक दिह्यौ ललकारी ।
लड़ौ बराबरि हार न मानौं, सूरश्याम बलिहारी ॥४॥

३०४

पाँचौ बन्धु बिराट सिधारे ॥
बन बन फिरत छिपत कुरुसुतसे, भये दुःख अति भारे ।
विचरत द्रुपद-सुता सँग उनके, नैनन ते जल ढारे ॥१॥
धर्मराजने कहा न माना, खेले पंसासारे ।
धन धरती औ महल खजाना, गज-तुरंग सब हारे ॥२॥
जीति लिह्यौ दुर्योधन राजा, पाँचौ बन्धु निकारे ।
हे यदुनाथ कौनि गति होइहै, छूटिगे भवन हमारे ॥३॥
द्वादश वर्ष कौनि विधि स्वामी, छिपिके करैं गुजारे ।
नौबतिराय कहैं कर जोरे, प्रभु तुमही रखवारे ॥४॥

३०५

माधव, केहि बिधि तुम्हैं जिमाऊँ ॥
तुम अंतर्यामी सब जानौ, तुमसे काह छिपाऊँ ।
तुमतौ तीनि लोकके ठाकुर, कहत वचन सकुचाऊँ ॥१॥
घृत मिष्टान्न न मेवा-मिसरी, जाको भोग लगाऊँ ।
ना कछु अन्न भवनमें मोरे, माँगे कहूँ न पाऊँ ॥२॥
बोले बिहँसि बिदुरसे स्वामी, मनकी तुम्हैं बताऊँ ।
तुम घर साग चना-बथुआको, लावौ भोग लगाऊँ ॥३॥
अमृत ते मोको अति नीको, बिनहि नोनको खाऊँ ।
परसत बिदुर खान लगे माधव, नौबति कह गुण गाऊँ ॥४॥

३०६

राजन मानो बचन हमारो ॥
आयकै ऐसी कीजै राजन, मत मेरो मन मारो ।
पाँच गाँव पाँडवनको दीजै, बाकी राज तुम्हारो ॥१॥
उत्तर दिशा इंद्रपथ दिल्ली, पूना शहर सितारो ।
नेम धर्मको काशी दीजै, कनउज मध्य दुवारो ॥२॥

सुई अग्रभरि भूमि न देहौं, बोलौ बचन सँभारो।
कटि-कटि मुंड गिरैं धरणीपर, खाँड़ो चलै दुधारो॥३॥
भीषम-द्रोण-कर्ण-दुर्योधन, सब मिलि मंत्र बिचारो।
राजबली हौ तुम कौरवमाँ, यह अभिमान निवारो॥४॥
को तुम कौन कहाँते आये, भलो कियो निस्तारो।
राजनीतिकी तुम क्या जानौ, गौवे चरावन हारो॥५॥
कटुक बचन जब सुन्यो साँवरो, घूमि कृष्ण पग धारो।
सूर कहैं श्रीकृष्णके रूठे, रहै न अमल तुम्हारो॥६॥

३०७

गौरव भीषम साथ छिपाना॥
रोदन करत सकल कौरव-दल, हा भीषम बलवाना।
युद्ध ठाठ तजि हाय कितै गयो, भारत-बीर निशाना॥१॥
धर्मवीर-व्रत ब्रह्मचर्य वर, रण-पंडित गुणवाना।
तुम बिन परशुराम-सम भारत, को जीतै मैदाना॥२॥
यम अरु इंद्र वरुण-रुख राखे, सदा कीन सन्माना।
आजु क्षुद्र तृणवत तेहिं लुंडित अर्जुन शर-संधाना॥३॥
कुरुपति व्याकुल बिलखि कहैं लखि, चहुँदिशि बिपति
महाना।
द्विज गिरिजेश आजु कौरव-हित, हैं सब शत्रु समाना॥४॥

३०८

राजा द्रुपद पैज यह ठानी॥
अग्नी ऊपर धरी कराही, तेल भरा मन मानी।
बाँस गाड़ि इक चक्र धरायो, मीन टँगी लासानी॥१॥
घूमत चक्र बँधी है मछली, पैज द्रुपद यह ठानी।
तेल मध्य परछाँही लखिकै मारै मीन निशानी॥२॥
मछलीकी आँखै जो बेधै, बनै द्रौपदी रानी।
जाँति-पाँतिकी चलै न चर्चा, सुनि सब सभा
लोभानी॥३॥

बैठे देश-देशके राजा, मीन बधै ना जानी।
द्रोणी-द्रोण-कर्ण-दुःशासन, दुर्योधन अभिमानी ॥४॥
विप्र रूप धरि तब निज अर्जुन, लाल कमनिया तानी।
मीन-नयन तकि बाण चलायौ, अग्निकुंड घहरानी ॥५॥

३०९

जब रथ हरि अर्जुनको हाँको ॥
एकतो घोर कठोर महारथ, दूजे अश्व-वेग ताको।
तीजे त्रिभुवन-पति हाँकि रहे, सिर मोर-मुकुट सोहै जाके।
चौथे हनुमन्त ध्वजापर बैठे, पावक सिर सेनापतिको।
जब सहि न सकत महि भार, शेष फण डोलत सुमन पताको ॥१॥
नंदघोष रथपर हरि बैठे, रूप सारथीका धरिकै।
बोले यदुनंदन ठाढ़ सयंदन, काह बिलँब राख्यौ करिकै।
सुनिकै हरि बानी सुमिरि भवानी, पारथ बेगि कह्यौ हँसिकै।
श्रीकृष्णचंद्र पीताम्बर-धारी, आजु सुमन रण काको ॥२॥
विनय करौं कर जोरि नाथ, देवनके नायक।
पाण्डुतनयकी लाज काज करिबे सब लायक।
कर गाण्डीव गहौं न नाथ जो होउ न सहायक।
दोउ दल बीच मोर रथ हाँकौ, जस कुम्हारको चाको ॥३॥
क्रोधित बचन कह्यौ जब पारथ, बोले कृष्णचंद्र हँसिकै।
यह घोर शोर संग्राम करेंगे, आजु पुत्र रवि-नंदनके।
जब इन्द्र-कुबेर-वरुण- सनकादिक, होंय सहाय उमापतिके।
शिवराम विजय ना पैहौ समरमाँ, आजु कर्ण रण बाको ॥४॥

३१०

अर्जुन कीन शपथ यह भारी ॥
धर्मपुत्रकी भरी सभामाँ, बैठे कृष्ण-मुरारी हैं।
औ बड़े-बड़े बीर भूप सब बैठे, तहँ अर्जुन धनुधारी हैं।
भो पुत्र-मरणका शोक हृदय, तब बोलत बचन सँभारी ॥१॥

कालिह जयद्रथ मारि गिरावौं. याही शपथ हमारी है।
उदय अस्तलौं जौ नहिं मारौं तौ यह नीति बिचारी है।
फिरि भस्मीभूत हुऔं धरणीपर, मरौं अग्नि तन जारी ॥२॥
क्रोधित बचन कहत दुर्योधन, सुनियो कृष्ण-मुरारी है।
अब काहेको सोच करत हौ अर्जुन सुनत न बात।
हमारी है।
जहँ बड़े-बड़े बीर कौरवन सँग हैं, कृपाचार्य धनुधारी ॥३॥
थर-थर सभा कंप सब देखैं, बोले कृष्ण मुरारी हैं।
सोच क्रोध सब छोड़ौ अर्जुन, मानौ बात हमारी है।
श्री शंकरजीका ध्यान धरौ, जे विजय करैं त्रिपुरारी ॥४॥

३११

हँसि पूछैं राधिका रानी. नाथ कैसे द्रुपदीके चीर बढ़ायो ॥
कौरव-पाण्डव मिलि आपसमें, द्यूत-खेल रचवायो।
डारि कपटका पासा शकुनी, पाण्डव-राज्य हरायो ॥१॥
बीच सभामाँ नग्न करनको, द्रुपद-सुताको लायो।
राखु द्वारिकानाथ लाज अब, तुम बिन कौन सहायो ॥२॥
दुःशासन गहि केश चीरको, खींचन हाथ बढ़ायो।
खैंचत-खैंचत अंत न आयो, अम्बर ढेर लगायो ॥३॥
भीषम-कर्ण-द्रोण-दुर्योधन, सब मनमें शरमायो।
सूरश्याम जिनके हरि पालक, तिनको कौन दुखायो ॥४॥

षष्ठ-विभाग-विभिन्न विषयके फाग

३१२

अवधमाँ राना भे मर्दाना ॥

बिल्लाइतिते चला फिरंगी, धरि बंदरका बाना ।
कदम-कदमपर डोरी लैकै, नापै हिन्दुस्ताना ॥१॥
पहिलि लड़ाई भै सेमरीमाँ, बकसरवा मैदाना ।
हुँआते कूच किह्यौ पुरवाको, लाट साहब घबड़ाना ॥२॥
नक्की मिले मानसिंग मिलिगे, मिला सुदर्शन काना ।
एक बार सब छत्री मिलिगे, उनके मन घबड़ाना ॥३॥
जाति-बिरादरि सब बोलवायो, सबहीको किह्यौ सलामा ।
तुम तौ जाय मिलौ अँगरेजन, हमका हैं भगवाना ॥४॥
बड़े लड़ैया शंकरपुरके, घोड़ा चढ़ैं मनमाना ।
कहैं दुलारे सुनौ पिया प्यारे, दक्खिन किह्यौ पयाना ॥५॥

३१३

सचमुच खेलि लिह्यौ मैदाना ॥
आवा नवाब साँढ़ियन गरजा, फौज देखि घबड़ाना ।
उतरि परे अँगरेजन डेरा, मचिगा गिद्ध मसाना ॥१॥
लतुआ फरी ग्यानका गदका, बाँस बनेठी बाना ।
कड़ाबीन करमटपर सोहै, माया मुल्क निशाना ॥२॥
रज्जकदार प्रेमकी बेटी, गोला बरूद खजाना ।
भरि-भरि मारैं तोपके मोंहड़ा, लूटैं मुल्क बिराना ॥३॥
लालादास बीच मनिहारा, नामकी ओर समाना ।
अमर लोकमाँ डेरा परिगे, सतगुरु हना निसाना ॥४॥

३१४

भारतमें गड़े निशान, क्रांतिके डंका बाजि रहे हैं ॥
मोतीलाल गये सुरपुरको, गांधी कदम धरे हैं ।
वीर-जवाहर निर्भय ह्वैके, शांति-कृपाण गहे हैं ॥१॥
बहिष्कार भा माल विदेशी, सब सिलबंद पड़े हैं ।
गलियन-गलियन होत पिकेटिंग, वालिंटियर खड़े हैं ॥२॥
राउंड-टेबल सभा मध्यमाँ, मौलाना गरजे हैं ।
की तौ हम स्वराज लैलेबे, नाहीं तौ प्राण तजे हैं ॥३॥
अलाहाबादमें भई कमेटी, नेता सब बटुरे हैं ।
ताके मध्य महात्मा गांधी, वाइसराय खड़े हैं ॥४॥

३१५

हरि हो गति तुम्हारि ना जानी ॥
कुसुमित पल्लव बैठि कोयलिया, बोलै मधुरी बानी ।
स्वान सिंहको मारि गिरावै, यह कुचक्र लासानी ॥१॥
रसमें विष भारत कर खंडित, कौरव-सम हठ ठानी ।
पाकिस्तान तान हिंसाकी, शोणित मातु नहानी ॥२॥
लाल किलेके लाल कँगूरा, लखि पंजाब कहानी ।
भारत वीर जोशमें भरकर, कर कृपाण है तानी ॥३॥
हाहाकार भयो भूमंडल, प्रजा सबै अकुलानी ।
सत्य-नीति बापू समझायो, कुरुक्षेत्र सम जानी ॥४॥

हरि शान्त रूप ईश्वरका जानौ, कही 'हर्ष' युत बानी।
दुष्ट गोड़से क्रोध अनलमें, घृत अशान्तिकी सानी ॥५॥
पेश दूत कर अमर अहिंसा, परत करी रजधानी।
हरि इच्छा बलवान कालकी, होइगै अमर कहानी ॥६॥

३१६

हँसि मदन सुमन धनु धारी है॥

अब देवहु धीर धरौ मनमें, कछु करौ न शोच-बिचारी है।
श्रीशंकरजीके विजय करन, यहु कौन काज अति भारी है।
जेहि सुमन-धनुष निज-बस न कीन्ह, अस को त्रयलोक मँझारी है।
अरु यहु निश्चयहु होत हमैं, शिव-बैर न कुशल हमारी है।
पर भाषत चारिउ वेदशास्त्र अरु लिखत पुराण मँझारी है।
पर-हित जो प्राणहि त्याग करैं, सो धन्य पुरुष अरु नारी है ॥१॥
अस ठानि हृदय-महँ चला वीर, कछु शंक न हृदय-मँझारी है।
कीन्ही ऋतुराज बसन्त प्रगट, अति शीतल चलत बयारी है।
कछु मंद-मंद लीन्हे सुगन्ध, जो स्वच्छ सदैव सुखारी है।
रज-रहित भयो निर्मल अकास, अरु छाय रही उजियारी है।
नव भये पल्लवित वृक्ष वृन्द, कहुँ दिखत नहीं अँधियारी है।
भँवरा-भँवरी भनकारि रहे, अरु भूमि लसै हरियाली है ॥२॥
वृक्षनमें परत पराग-पुंज, सब फूलि रही फुलवारी है।
गुलहर गुलखैरा गुलाबास, अरु गुल्दावली पियारी है।
गुलमेंहदी गेंदा गुल्लाला, गुलकरन गुलाबकी क्यारी है।
गुलसब्बो गुलतरो अतर, गुल झुके कदंबकी डारी है।
चम्पा-मालती सुमोलसिरी, दुपहरिया कुंद कतारी है।
बेला मोतिया अगस्त जुही, खिलि रही चांदनी न्यारी है ॥३॥
करि रहीं कोकिला हैं कूकू, ध्वनि कूकि रही सुखकारी है।
भँवरा-भँवरी लपटान लगे, पपिहा पिउ-पिउ रट धारी है।
निशिदिन न बिलौकैं चक्रवाक, उमड़ीं नदिया नद नारी हैं।

अबला-मय भये पुरुष सारे, अरु भई पुरुष-मय नारी हैं।
लपटानी वृक्षन लता-वेलि, झुकि रहीं तरुनकी डारी हैं।
भूतन-प्रेतनकी गति न कहौं, यह सदा स्वयं व्यभिचारी हैं।
कवि बृजकिशोर भाषत सोई, उबरैं ते सुभग मँझारी हैं ॥४॥

३१७

हमने कौन पाप-फल पाया ॥
भारतके सुखके कारन जेहि, सारा जन्म गँवाया।
सुख-सम्पतिका मोह नसायो, त्यागी ममता माया ॥१॥
वस्त्र विदेशी त्यागि दिह्यौ है, चरखा मित्र बनाया।
नौखालीके घर-घर घूमे, सबही धीर बँधाया ॥२॥
जुगजुगके गुलाम भारतको, जहि आजाद कराया।
कीरति दीन्हीं गौरव दीन्हा, जगमाँ सुयश बढ़ाया ॥३॥
सत्य-अहींसा-धारी बापू, ऐक्य-मंत्र बतलाया।
तिनकी मृत्यु हुई हिंसासे, 'योगी' मन पछिताया ॥४॥

३१८

किमि बरणौं शोभा भारतकी ॥
उत्तर दिशा हिमालय गिरि, जहँ धुनि जलै नित शंकरकी।
औ सती बैठि निज पतिके पास, नित कथा सुनैं लवसे प्रभुकी।
शिव कथा कहैं उपदेश करैं, औ खबरि लेय निज भक्तनकी ॥१॥
गंगा-जमुना-सी शुभ-सरिता, जो सुता कहावैं हिमगिरिकी।
धन-धान्य और जल दियें सदा, सींचैं शुभ-अवनी भारतकी।
जे श्रद्धाते नित स्नान करैं, हरि लेंय पीर उनके तनकी ॥२॥
हरिद्वार द्वारिकापुरी औ काशीजी शिवशंकरकी।
शुभ तीरथराज प्रयाग इन्हैं लखि व्यथा कटै तनकी-मनकी।
परलोक इहैं आपन सुधरै, और चाह बढ़ै प्रभु-दर्शनकी ॥३॥
दिल्ली बम्बई औ कलकत्ता, नित शान बढ़ावैं भारतकी।
रेलैं दौरें जहाज तैरें, औ चमकैं बत्ती बिजुलीकी।
लक्ष्मीजी इहैं निवास करैं, औ कुशल करैं नित 'योगी' की ॥४॥

३१९

सजन बिन कौन हरै मोरी पीरा ॥
लगे असाढ़ घुमड़ि आये बदरा, सावन गरू गँभीरा ।
भादौं बिजुरी चमकन लागी, भरि आयें चहुँ दिशि नीरा ॥१॥
क्वार करार पूरि भै बरखा, कातिक धरै न धीरा ।
अगहन शीत जनावन लागे, काँपै सकल शरीरा ॥२॥
पूस मास पिय पाला परत हैं, माह बसन्ती चीरा ।
फागुन रंग उड़न अब लागे, केहिपर डारौं अबीरा ॥३॥
चैत मास बन फूलि आये टेसू, धरु बैसाखै धीरा ।
सूरदास बलि जाउँ चरणकी, जेठै आयें रघुबीरा ॥४॥

३२०

सेजिया फूलोंसे कुम्हिलानी ॥
पूरब दिशा जनि जायौ मोरे स्वामी, हुवाँका लागू पानी ।
पानी लागे तुम मरि जैहौ, हम धन ह्वाब बिरानी ॥१॥
दक्खिन दिशा जनि जायौ मोरे स्वामी, हुआँकी नारी सयानी ।
राति सोवावै रँगा-महलमाँ, दिनका भरावै पानी ॥२॥
पच्छू दिशा जनि जायौ मोरे स्वामी, हुवाँ द्वारिका दानी ।
जैहौ द्वारिकै छाप लै अइहौ, पितर न पावैं पानी ॥३॥
उत्तर दिशा जनि जायौ मोरे स्वामी, हुआँ लोधौरा दानी ।
झौआ-झौआ फूल चढ़त हैं, और घड़ा भर पानी ॥४॥

३२१

हम परदेसी लोग, भँवरा मोरा मिलन कब करिहौ ॥
आगि लागि बन जरिगा भँवरा, ऊठे हरे हरे पात ।
बारा बरसकी धानिया, वह ख्यालै लरिकवन साथ ॥१॥
आमते मीठी अँबिलिया भँवरा, गुड़ ते मीठी खाँड़ ।
खाँड़ौते मीठी बनिनिया भँवरा, मस भीजतकर ज्वान ॥२॥
आम नवै जैसे ग्वाँसा भँवरा, ग्वाँसा नवै कमान ।
बारा बरसकै धानिया, वह नवै छयलके साथ ॥३॥
ऊँची अँटरिया चँदन केवँरिया, छाये हरे हरे पात ।
जब सुधि आवै बोर बलमकी, ढुरि-ढुरि आवैं आँस ॥४॥

३२२

गलिनमाँ भाँवरा लोभाना ॥
साँकरि कुइयाँ पतल जल पानी, भरैं सुघड़ पनिहारी ।
आँचर तुम्हरा उड़ा जात है, क्यों ना लेहु सँभारि ॥१॥
आँचर हमरा उड़ा जात है, नैनन लेहु निहारि ।
लैकै घैल घरका चलि जइबै, फिरि पाछे पछितावहु ॥२॥
तुम्हरो तो गोरी गाँव-देस है, हमरो है परदेस ।
तुम्हैं लगाय कोउ हमका मारै, को घर कहै सँदेस ॥३॥
हमरो तो भँवरा गाँव-देस है, तुम्हरो है परदेस ।
हमैं लगाय कोउ तुमका मारै, लैकै सती ह्वै जाउँ ॥४॥

३२३

गुरू चेला हो गुरूचेला, एकै रँग रँगे गुरू चेला ॥
गंगाजीते जल भरि लायौं, लोधेसुरनका है मेला ।
जहँ काठि गोमती पैंड़ बही हैं, पुलौ बना लोहे केरा ।
गाँव लोधौरा का बरणौं, जहँ जुटै शिवत्रीका मेला ॥१॥
ब्रह्मावर्त महा एक तीरथ, सिढ़ियन बैठि करैं मेला ।
जहाँ रीठी देख्यौं बरेठी देख्यौं, देख्यौं बिकटका बन झोला ।
निश्चर गाँव लालपुर देख्यौं, देख्यौं तिलोईका मेला ॥२॥
लखनऊ शहरकी का बरणौं, जहँ बादशाह है अलबेला ।
चहुँ नाकेन-नाकेन खड़े सिपाही, केसरिबागमाँ है मेला ।
जहाँ आलमबागमाँ तोप दगी है गिरा छत्र सोनेकेरा ॥३॥
दीनाराय भये सिसड़ीमाँ, टिकइतराय भये चेला ।
जब अर्जुनसिंह बहयारका ठाकुर, बाँधे दुपट्टा अलबेला ।
कोहूते लीन्हा इक्का-दुअन्नी, कोहूते चवन्नी लै लीना ।
कोहूते लीन्हा रूप-रुपैया, देख्यौं अवलियनका मेला ॥४॥

३२४

सखी बिनु कंत बसंत न भावै ॥
झरिगे पात सबै बिरवनके, आम बौर खुटि आवैं ।
चुनि-चुनि फूल साजि डालिनमाँ, मालिन सगुन दिखावै ॥१॥

जाके बलम घर पास बसत हैं, चीर बसन्ति रँगावै।
हमरे बलम परदेस बसत हैं, ताते कछु न सोहावै ॥२॥
सूनी सेज निहारि रैन-दिन, नयन नींद नहिं आवै।
विरहानल मोरे तनमन लागी, उन बिन कौन बुझावै ॥३॥
बाजैं ताल-मृदंग-झाँझ डफ, राग-फाग सब गावैं।
जन बजरंग मैं तनमन वारौं, जो पिय आनि मिलावै ॥४॥

३२५

पियासे मृगनयनी हँसि बोलै ॥
सुंदर नारि रसीले नैना, कामभरी तहँ डोलैं।
साजौ सिंगार अभूषण द्वादश, रूप बन्यौ अनमोलै ॥१॥
पहिल आगमन ढिग सेजियाके, चोलीके बँद खोलै।
लहर-लहर लहँगापट खोलै, पिय हँसि करत किलोलै ॥२॥
धरि बहियाँ प्रेमातुर कुच गहि, चूमत अधर कपोलै।
चुंबन-खंडन ठौर-ठौर लखि, बेद बजावत ढोलै ॥३॥
आसन सहित कामरस खेलत, त्रिपित बाम तन बोलैं।
द्विज हरिचरण शरण शतगुरुके, बालक करत किलोलै ॥४॥

३२६

यहु ऋतु बसन्त आयौ आली ॥
फूले सुआस गेंदा गुलाब सेवती जुही शोभा शाली।
कहुँ-कहुँ अनार कचनार डार देते बहार छाई लाली।
कहुँ सूर्यमुखी सिलमिली खिली जाकी बहार मन अरुझाली।
शोभित सुआस गुल गुलाबास झुकि झूमि रही डाली-डाली ॥१॥
आमनपै बौर हैं ठौर-ठौर लेते झकोर डोलैं डाली।
फूले पलास हैं आसपास पावसकी लुप्त है हरियाली।
बोलैं बिहंग अति विविध रंग लेती तरंग कोयल काली।
मोरनकी भीर गुंजत है कीर जिमि लगत तीर बिन बनमाली ॥२॥

ढोल पखावज औ मृदंगकी गूँजि रही धुनि सुनु आली।
कहुँ धिधक-धिधक तक धिंताक ताता तक धिंताक टूटै
ताली।
मन लेत छीन सुर अति प्रबीन मुरली नवीन माधुरि वाली।
कहुँ झिंझक-झिंझक झनझना झकाझक बेसुमार
झनकत झाली ॥३॥
खेल्यौ न रंग रसिकनके संग भरिकै उमंग है मतवाली।
रसिकनको साज लखि जायौ न भागि नहिं जाय
लाज भोलीभाली।
जायौ न गैल घेरि लेहैं छैल करिकै सुपेल ठेलाठाली।
हँसि-हँसि बोलाय कनखी चलाय लोगन लगाय देतीं
गाली ॥४॥

३२७

सोवतसे उठा अचाका है। मलखान बीर रण
बाँका है॥
शब्दबेध चौहान पिथौरा जगमे जिनकी साका है।
जब सात लाख सजवाय सैन्य घेरो सिरसाको नाका है।
औ किलाकोटपर तोप दगत है खाली होत धमाका है॥१॥
रानी गजना जाय जगायौ दामन गह्यौ पिनाका है।
चौहान कटकसे अटक पड़े डंका बजगयो कजाका है।
जब पृथ्वीराजका नाम सुनत भट चहुँका चहुँदिशि
ताका है॥२॥
छायो क्रोध प्रचंड अंगमें बख्तर भयो तड़ाका है।
जब बजी जंग सजि गई कबुतरी बंदन कियौ उमाका है।
सब अंग अंगमें भरी बीरता बनो कालको काका है॥३॥
गरजि सिंह-सम तड़पि चला तेवरपर पड़ी तमाका है।
जब हड़प गई चौहान सैन्य दिल्लीका शाह सनाका है।
लखि अनी शिथिल भा भूप बिकल पारथ गहि आयौ
पिनाका है॥४॥

पारथ इते उते भे मलिखे तेगा नग्न चमाका है ।
भिड़ गए दोऊ बरदानी बीर दोउन बर मिला उमाका है ।
दिन सातक गए बिजय करि पायौ मलिखे बीर लड़ाका है॥५॥
उलट-पलट दल दपट पछारें मारें घने लड़ाका है ।
जब पृथ्वीराजका कटा छत्र औ शत्रुहि ब्यापी शंका है ।
दल दलि तकियो मलिखान बीर बल बरणि न जाय भुजाका है ॥६॥

३२८

महोबा पृथ्वीराजने घेरा ॥

गढ़ दिल्लीते चला पिथौरा, महोबा नगरी घेरा ।
फाटक बंदी है महोबेमाँ, छत्रिन डारा डेरा ॥१॥
माहिल चलि भे हैं तम्बूते, रानि मल्हनाके तीरा ।
आज़ु महोबा बचै ना पावै, हुक्म पिथौरा केरा ॥२॥
बैठक माँगैं खजुहागढ़की, शहर ग्वालियर केरा ।
उड़न-बछेड़ा पाँचौ माँगैं, डोला चंद्रबलि केरा ॥३॥
बेटी ब्याही पृथ्वीराजकी, बेटा चँदेले केरा ।
कहैं कबीर सुनौ हो भाई, होइहै युद्ध घनेरा ॥४॥

३२९

गागरिया मोरि उतारु अरेरे अंबातरेके बालमा ॥

जौ तोरी मैं गगरी उतारौं (२) । का उतरौनी देहु ॥१॥
इक तौ देहौं छल्ला मुँदरिया (२) । दूजे गलेका हार ॥२॥
आगि लगै तोरी छल्ला मुँदरिया (२) । बज्र परै तोरे हार ॥३॥
तोरे बगल दुइ कागदी निंबुवा (२) । दुइमाँ एक हमार ॥४॥

३३०

बकसरमाँ भगदरि भै भारी ॥

गंगा नहाय चले बकसरकी, लै पूरी भरिकै थारी ।
औ सब नर नारी धरे सोहारी, कोउ काँधे कोउ सिर नारी ।
सुखपाल पालकी रथ रब्बा, बहलैं गाड़ी, हाथिन पर हौदा ।
धरे सुनहौला, झलझल झलकैं अंबारी ॥१॥
करि स्नान दान विप्रनको दीन्हेव, चंदी जीवन तैयारी ।
भरि लाये मिठाई हैं दोननमाँ, गंगाजीकी है त्यारी

जहँ झुके पताका तहुलदासके घंटा बाजै अति प्यारी।
मेलाका रेला है मंडपमाँ, दर्शन करते नर-नारी ॥२॥
चरण धोय चौकापर बैठे, खाते पूरी-तरकारी।
जहँ पेड़ा-बरफी तलक खटाई, ऊपरते बुकनू न्यारी।
जहँ हल्ला होइगा आवा डाक्टर, करता है पिलेग जारी।
तब खान-पान सब भूलि गए हैं, भूलि गईं परसी थारी ॥३॥
भर-भर भर-भर मेला भागै, छूटि गईं लोटिया-थारी।
जहँ घोड़न जीनै भुइमाँ गिरि गईं, नंगी पीठि करैं स्वारी।
जब नारिनि बालक छोंड़ि दिहिनि, कोऊ पैराहारीमाँ ठाढ़ी।
कितनिनके गहना छीनि गए हैं, हाय-हाय देतीं गारी ॥४॥

३३१

तोरी भौंहैं बिकट बाँके नैना॥
को यहु पाला सुआ-परौना(२)। को यहु पाला सुघड़ मैना॥१॥
सैंयै पाला सुआ-परौना (२)। ननदी पाला सुघड़ मैना॥२॥
काह खात है सुआ परौना (२)। का वह खाय सुघड़ मैना॥३॥
आम खाय वह सुआ-परौना(२)। दूध पियै वह सुघड़ मैना॥४॥

३३२

परसाद बँटै लैले गोरी॥
को लै आवा गट्टा-बतासा (२)। को लावा गुरकै भेली ॥१॥
सैंया लै आये गट्टा बतासा (२)।यार लै आयें गुरकै भली॥२॥
गट्टा-बतासा मनही न भावै(२)। लपकि धरिनि गुरकै भेली॥३॥

३३३

पनघटवै ना तुम जाहु बहुरिया नैना तुम्हारे लागूना ॥
ना हम बाँधे छूरी-कटारी (२) नाहिंन ढाल तलवार ॥१॥
नैना तुम्हारे छूरी-कटारी (२)। जोबना ढाल तलवार ॥२॥

३३४

कोई रसियै मारा बान कबूतर गिरा शहर-गलियारेमाँ ॥
गोरी तोरी अँखियाँ आमकी फँखियाँ। (२)॥
-भौंहैं चढ़ी कमान ॥१॥

३३५

लै लेबै नँनदका साथ लाल पानीका अकेली ना जइबै ॥२॥

मैं पानीका ना गइउँ पिया, तहाँ कालिया नाग।
नाग काटसे मैं बचि आइउँ। बचियाऊँ-बचियाऊँ भला-।
बचियाऊँ। बचियाऊँ पिया तोरे भाग ॥१॥
कोठा ऊपर कोठरी तहँ बसैं कबूतर चारि।
पियानें मारी सीटकी, मोरा जोड़ा बिछुड़ि ना जाय ॥२॥
नदी किनारे बगुला बैठा मैं जानौं कोतवाल।
सासुके आये पाहुना, ननदी भई तयार ॥३॥

३३६

सॉवलिया कम्मर तान, नदीपर घिरि आयें कारे बादरा ॥
कौन दिशाके बादरा हो। कहाँपै बरसै मेंह ॥१॥
पूरब दिशाके बादर हो। पछिमै बरसै मेह ॥२॥
कौन चाल चले बादरा हो। कौन चाल चलैं मेह ॥३॥
हिरन चाल चले बादरा हो। सिंह चाल चलैं मेंह ॥४॥

अंतिम आशिर्वाद

३३७

सदा अनंद रहै यहु द्वारा, मोहन ख्यालैं होरी हो ॥
इकवर ख्यालैं कुँअर कन्हैया। इकवर राधा गोरी हो ॥१॥
मारत आवैं गुलाबकी छड़ियाँ। पछरत राधा गोरी हो ॥२॥
डफ लै खेलै कुँअर कन्हैया। रँग लै राधा गोरी हो ॥३॥
हमरे कहेका माख न मान्यौ। बरस-बरसकै होरी हो ॥४॥
बनी रहै भाइनकी जोड़ी। नित उठि ख्यालैं होरी हो ॥५॥

पुस्तकें मिलने के स्थान

१) खेमराज श्रीकृष्णदास,
श्रीवेंकटेश्वर स्टीम प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
खेतवाडी, मुंबई - ४०० ००४.

२) खेमराज श्रीकृष्णदास,
६६, हडपसर इण्डस्ट्रिअल इस्टेट
पुणे - ४११ ०१३.

३) गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास
लक्ष्मीवेंकटेश्वर स्टीम प्रेस,
व बुक डिपो,
अहिल्यावाई चौक, कल्याण
(जि. ठाणे - महाराष्ट्र)

४) खेमराज श्रीकृष्णदास,
चौक - वाराणसी (उ.प्र.)
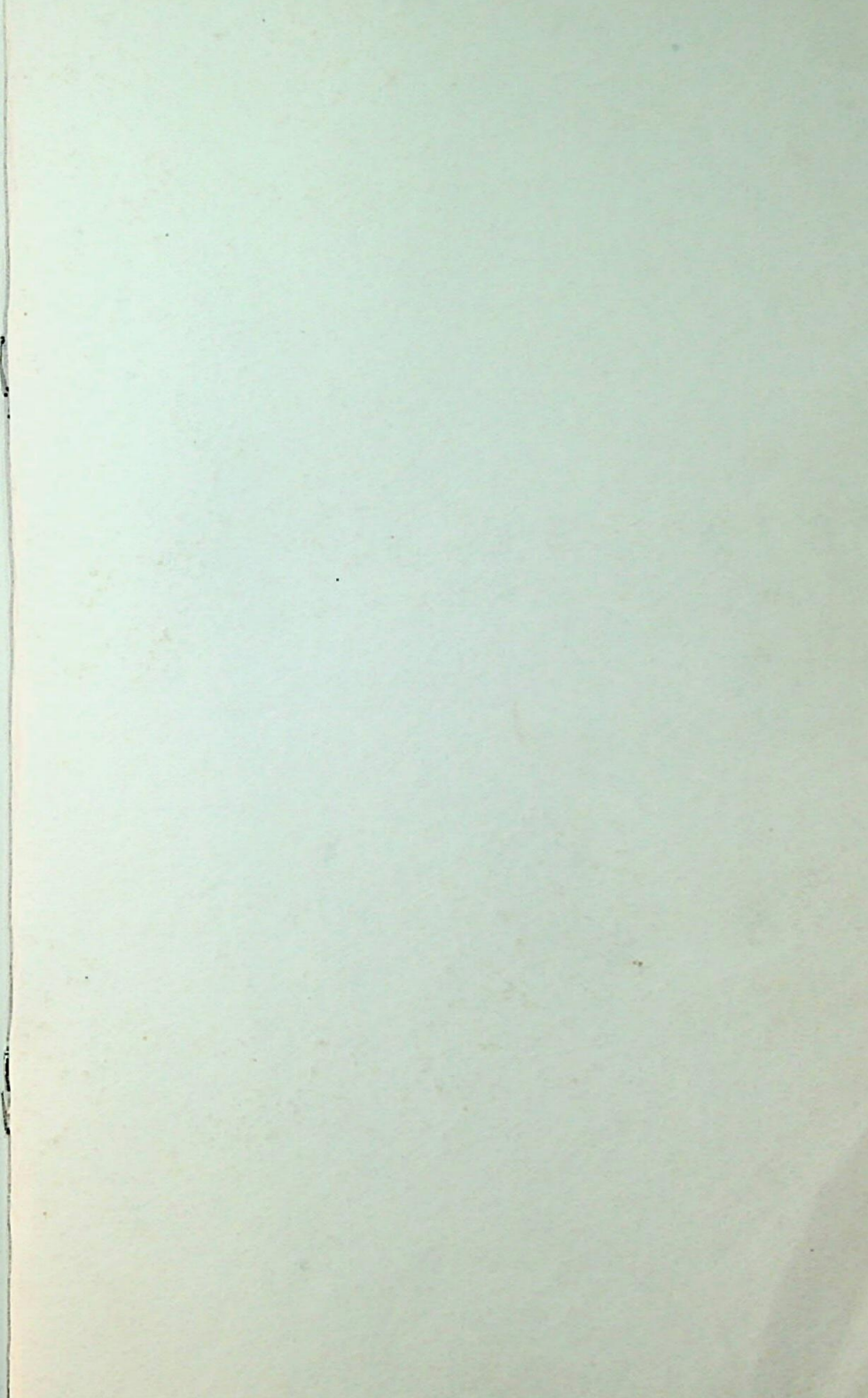
हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान :

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३.
दूरभाष-०२०-२६८७१०२५,

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१.
दूरभाष - ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८.